प्रकाशक:—

सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीटच्यूट

बीकानेर

प्रथम संस्करण : १००० प्रतियाँ

मूल्य—४ रु०

मुद्रक:—

महावीर मुद्रणालय,

अलीगंज (एटा)

डा० कन्हैयालाल मुन्शी 'Gujarat & its Literature' (1935) Page 162:—

"Sadayavatsa kathā' has charmed Gujarat for about five hundred years. Sadayavatsa and Sāvalingā, husband and wife, are banished from their native city and are separated. Ultimately they meet after undergoing fearful experiences, in all of which the fantastic vies with the miraculous. The story is taken probably from some unknown Prākrit source. Its first available Gujarati version is copied in Samvat 1488."



संकलना

अर्पण

कायस्थ कवि गणपतिकृत 'माधवानल कामकंदला प्रबंध'
(१६१४), और भीमकृत 'सदयवत्स वीर प्रबंध' (१६१५)
के प्रथम निवेदक।

अनेक अप्रकट संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश और
प्राचीन गुजराती ग्रंथों के आद्य संशोधक।
(पट्टण ग्रंथ-भण्डारों की सहाय से आधार लेकर)
'गायकवाड़ प्राच्य ग्रंथमाला' के आद्य संपादक

राजरत्न

पं० चीमनलाल दलाल की स्मृति में

सविनय
अर्पण



मंजुलाल मजमुदार

प्रकाशकीय

श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च-इन्स्टीट्यूट बीकानेर की स्थापना सन् १९४४ में बीकानेर राज्य के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री के० एम० पणिक्कर महोदय की प्रेरणा से, साहित्यानुरागी बीकानेर-नरेश स्वर्गीय महाराजा श्री सादूलसिंहजी बहादुर द्वारा संस्कृत, हिन्दी एवं विशेषतः राजस्थानी साहित्य की सेवा तथा राजस्थानी भाषा के सर्वाङ्गीण विकास के लिये की गई थी।

भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध विद्वानों एवं भाषाशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त करने का सौभाग्य हमें प्रारंभ से ही मिलता रहा है।

संस्था द्वारा विगत १६ वर्षों से बीकानेर में विभिन्न साहित्यिक प्रवृत्तियां चलाई जा रही हैं, जिनमें से निम्न प्रमुख हैं—

१. विशाल राजस्थानी-हिन्दी शब्दकोश

इस संबंध में विभिन्न स्रोतों से संस्था लगभग दो लाख से अधिक शब्दों का संकलन कर चुकी है। इसका सम्पादन आधुनिक कोशों के ढंग पर, लंबे समय से प्रारंभ कर दिया गया है और अब तक लगभग तीस हजार शब्द सम्पादित हो चुके हैं। कोश में शब्द, व्याकरण, व्युत्पत्ति, उसके अर्थ, और उदाहरण आदि अनेक महत्वपूर्ण सूचनाएं दी गई हैं। यह एक अत्यंत विशाल योजना है, जिसकी संतोषजनक क्रियान्विति के लिये प्रचुर द्रव्य और श्रम की आवश्यकता है। आशा है राजस्थान सरकार की ओर से, प्रार्थित द्रव्य-साहाय्य उपलब्ध होते ही निकट भविष्य में इसका प्रकाशन प्रारंभ करना संभव हो सकेगा।

२. विशाल राजस्थानी मुहावरा कोश

राजस्थानी भाषा अपने विशाल शब्द भंडार के साथ मुहावरों से भी समृद्ध है। अनुमानतः पचास हजार से भी अधिक मुहावरे दैनिक प्रयोग में लाये जाते हैं। हमने लगभग दस हजार मुहावरों का, हिन्दी में अर्थ और राजस्थानी में उदाहरणों सहित प्रयोग देकर संपादन करवा लिया है और शीघ्र ही इसे प्रकाशित करने का प्रबंध किया जा रहा है। यह भी प्रचुर द्रव्य और श्रम-साध्य कार्य है।

यदि हम यह विशाल संग्रह साहित्य-जगत को दे सके तो यह संस्था के लिये ही नहीं किन्तु राजस्थानी और हिन्दी जगत के लिए भी एक गौरव की बात होगी।

३. आधुनिकराजस्थानीकाशन रचनओं काप्र

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

१. **कळायण**, ऋतु काव्य। ले० श्री नानूराम संस्कर्ता

२. **आभै पटकी**, प्रथम सामाजिक उपन्यास। ले० श्री श्रीलाल जोशी।

३ **वरस गांठ**, मौलिक कहानी संग्रह। ले० श्री मुरलीधर व्यास।

'राजस्थान-भारती' में भी आधुनिक राजस्थानी रचनाओं का एक अलग स्तम्भ है, जिसमें भी राजस्थानी कवितायें, कहानियां और रेखाचित्र आदि छपते रहते हैं।

४ 'राजस्थान-भारती' का प्रकाशन

इस विख्यात शोधपत्रिका का प्रकाशन संस्था के लिये गौरव की वस्तु है। गत १४ वर्षों से प्रकाशित इस पत्रिका की विद्वानों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। बहुत चाहते हुए भी द्रव्याभाव, प्रेस की एवं अन्य कठिनाइयों के कारण, त्रैमासिक रूप से इसका प्रकाशन सम्भव नहीं हो सका है। इसका भाग ५ अङ्क ३-४ 'डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी विशेषांक' बहुत ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है। यह अङ्क एक विदेशी विद्वान की राजस्थानी साहित्य-सेवा का एक बहुमूल्य सचित्र कोश है। पत्रिका का अगला ७वां भाग शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। इसका अङ्क १-२ राजस्थानी के सर्वश्रेष्ठ महाकवि पृथ्वीराज राठोड़ का सचित्र और वृहत् विशेषांक है। अपने ढंग का यह एक ही प्रयत्न है।

पत्रिका की उपयोगिता और महत्व के सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इसके परिवर्तन में भारत एवं विदेशों से लगभग ८० पत्र-पत्रिकाएं हमें प्राप्त होती हैं। भारत के अतिरिक्त पाश्चात्य देशों में भी इसकी मांग है व इसके ग्राहक हैं। शोधकर्त्ताओं के लिये 'राजस्थान भारती' अनिवार्यत: संग्रहणीय शोध-पत्रिका है। इसमें राजस्थानी भाषा, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि पर लेखों के अतिरिक्त संस्था के तीन विशिष्ट सदस्य डा० दशरथ शर्मा, श्रीनरोत्तमदास स्वामी और श्री अगरचन्द नाहटा की वृहत् लेख सूची भी प्रकाशित की गई है।

५. राजस्थानी साहित्य के प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रन्थों का अनुसंधान, सम्पादन एवं प्रकाशन

हमारी साहित्य-निधि को प्राचीन, महत्वपूर्ण और श्रेष्ठ साहित्यिक कृतियों को सुरक्षित रखने एवं सर्वसुलभ कराने के लिये सुसम्पादित एवं शुद्ध रूप में मुद्रित करवा कर उचित मूल्य में वितरित करने की हमारी एक विशाल योजना है। संस्कृत, हिंदी और राजस्थानी के महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुसंधान और प्रकाशन संस्था के सदस्यों की ओर से निरंतर होता रहा है जिसका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

६. पृथ्वीराज रासो

पृथ्वीराज रासो के कई संस्करण प्रकाश में लाये गये हैं और उनमें से लघुतम संस्करण का सम्पादन करवा कर उसका कुछ अंश 'राजस्थान भारती' में प्रकाशित किया गया है। रासो के विविध संस्करण और उसके ऐतिहासिक महत्व पर कई लेख राजस्थान-भारती में प्रकाशित हुए हैं।

७. राजस्थान के अज्ञात कवि जान (न्यामतखां) की ७५ रचनाओं की खोज की गई। जिसकी सर्वप्रथम जानकारी 'राजस्थान-भारती' के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई है। उसका महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काव्य 'क्यामरासा' तो प्रकाशित भी करवाया जा चुका है।

८. राजस्थान के जैन संस्कृत साहित्य का परिचय नामक एक निबंध राजस्थान भारती में प्रकाशित किया जा चुका है।

९. मारवाड़ क्षेत्र के ५०० लोकगीतों का संग्रह किया जा चुका है। बीकानेर एवं जैसलमेर क्षेत्र के सैकड़ों लोकगीत, घूमर के लोकगीत, बाल लोकगीत, लोरियां और लगभग ७०० लोक कथाएं संग्रहीत की गई हैं। राजस्थानी कहावतों के दो भाग प्रकाशित किये जा चुके हैं। जीणमाता के गीत, पावूजी के पवाड़े और राजा भरथरी आदि लोक काव्य सर्वप्रथम 'राजस्थान-भारती' में प्रकाशित किए गए हैं।

१० बीकानेर राज्य के और जैसलमेर के अप्रकाशित अभिलेखों का विशाल संग्रह 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' नामक वृहत् पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है।

११. जसवंत उद्योत, मुंहता नैणसी री ख्यात और अनोखी आन जैसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथों का सम्पादन एवं प्रकाशन हो चुका है।

१२. जोधपुर के महाराजा मानसिंहजी के सचिव कविवर उदयचंद भंडारी की ४० रचनाओं का अनुसंधान किया गया है और महाराजा मानसिंहजी की काव्य-साधना के संबंध में भी सबसे प्रथम 'राजस्थान-भारती' में लेख प्रकाशित हुआ है।

१३. जैसलमेर के अप्रकाशित १०० शिलालेखों और 'भट्टि वंश प्रशस्ति' आदि अनेक अप्राप्य और अप्रकाशित ग्रंथ खोज-यात्रा करके प्राप्त किये गये हैं।

१४. बीकानेर के मस्तयोगी कवि ज्ञानसारजी के ग्रंथों का अनुसंधान किया गया और ज्ञानसार ग्रंथावली के नाम से एक ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुका है। इसी प्रकार राजस्थान के महान विद्वान महोपाध्याय समयसुन्दर की ५६३ लघु रचनाओं का संग्रह प्रकाशित किया गया है।

१५. इसके अतिरिक्त संस्था द्वारा—

(१) डा० लुइजि पिओ तैस्सितोरी, समयसुन्दर, पृथ्वीराज, और लोकमान्य तिलक आदि साहित्य-सेवियों के निर्वाण-दिवस और जयन्तियां मनाई जाती हैं।

(२) साप्ताहिक साहित्यिक गोष्ठियों का आयोजन बहुत समय से किया जा रहा है, इसमें अनेकों महत्वपूर्ण निबंध, लेख, कविताएँ और कहानियां आदि पढ़ी जाती हैं, जिससे अनेक विध नवीन साहित्य का निर्माण होता रहता है। विचार विमर्श के लिये गोष्ठियों तथा भाषणमालाओं आदि का भी समय-समय पर आयोजन किया जाता रहा है।

१६. बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाकर उनके भाषण करवाने का आयोजन भी किया जाता है। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, डा० कैलाशनाथ काटजू, राय श्री कृष्णदास, डा० जी० रामचन्द्रन्, डा० सत्यप्रकाश, डा० डब्लू० एलेन, डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, डा० तिबेरिओ-तिबेरी आदि अनेक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वानों के इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भाषण हो चुके हैं।

गत दो वर्षों से महाकवि पृथ्वीराज राठौड़ आसन की स्थापना की गई है। दोनों वर्षों के आसन-अधिवेशनों के अभिभाषक क्रमशः राजस्थानी भाषा के प्रकाण्ड

विद्वान् श्री मनोहर शर्मा एम० ए०, बिसाऊ और पं० श्रीलालजी मिश्र एम० ए०, डूंडलोद, थे।

इस प्रकार संस्था अपने १६ वर्षों के जीवन-काल में, संस्कृत, हिन्दी और राजस्थानी साहित्य की निरंतर सेवा करती रही है। आर्थिक संकट से ग्रस्त इस संस्था के लिये यह संभव नहीं हो सका कि यह अपने कार्यक्रम को नियमित रूप से पूरा कर सकती, फिर भी यदा कदा लड़खड़ा कर गिरते पड़ते इसके कार्यकर्त्ताओं ने 'राजस्थान-भारती' का सम्पादन एवं प्रकाशन जारी रखा और यह प्रयास किया कि नाना प्रकार की बाधाओं के बावजूद भी साहित्य सेवा का कार्य निरंतर चलता रहे। यह ठीक है कि संस्था के पास अपना निजी भवन नहीं है, न अच्छा संदर्भ पुस्तकालय है, और न कार्य को सुचारु रूप से सम्पादित करने के समुचित साधन ही हैं; परन्तु साधनों के अभाव में भी संस्था के कार्यकर्ताओं ने साहित्य की जो मौन और एकान्त साधना की है वह प्रकाश में आने पर संस्था के गौरव को निश्चय ही बढ़ा सकने वाली होगी।

राजस्थानी-साहित्य-भंडार अत्यन्त विशाल है। अब तक इसका अत्यल्प अंश ही प्रकाश में आया है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय के अलभ्य एवं अनर्घ रत्नों को प्रकाशित करके विद्वज्जनों और साहित्यिकों के समक्ष प्रस्तुत करना एवं उन्हें सुगमता से प्राप्त कराना संस्था का लक्ष्य रहा है। हम अपनी इस लक्ष्य पूर्त्ति की ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ता के साथ अग्रसर हो रहे हैं।

यद्यपि अब तक पत्रिका तथा कतिपय पुस्तकों के अतिरिक्त अन्वेषण द्वारा प्राप्त अन्य महत्वपूर्ण सामग्री का प्रकाशन करा देना भी अभीष्ट था, परन्तु अर्थाभाव के कारण ऐसा किया जाना संभव नहीं हो सका। हर्ष की बात है कि भारत सरकार के वैज्ञानिक संशोध एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम मंत्रालय (Ministry of scientific Research and Cultural Affairs) ने अपनी आधुनिक भारतीय भाषाओं के विकास की योजना के अंतर्गत हमारे कार्यक्रम को स्वीकृत कर प्रकाशन के लिये रु० १५०००) इस मद में राजस्थान सरकार को दिये तथा राजस्थान सरकार द्वारा उतनी ही राशि अपनी ओर से मिलाकर कुल रु० ३००००) तीस हजार की सहायता, राजस्थानी साहित्य के सम्पादन-प्रकाशन

हेतु इस संस्था को इस वित्तीय वर्ष में प्रदान की गई है; जिससे इस वर्ष निम्नोक्त ३१ पुस्तकों का प्रकाशन किया जा रहा है ।

१. राजस्थानी व्याकरण—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२. राजस्थानी गद्य का विकास (शोध प्रबंध)	डा० शिवस्वरूप शर्मा अचल
३. अचलदास खीची री वचनिका—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
४. हमीरायण—	श्री भंवरलाल नाहटा
५. पद्मिनी चरित्र चौपई—	,, ,, ,,
६. दलपत विलास	श्री रावत सारस्वत
७. डिंगल गीत—	,, ,, ,,
८. पंवार वंश दर्पण—	डा० दशरथ शर्मा
९. पृथ्वीराज राठोड़ ग्रंथावली—	श्री नरोत्तमदास स्वामी और श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
१०. हरिरस—	श्री बद्रीप्रसाद साकरिया
११. पीरदान लालस ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१२. महादेव पार्वती वेलि—	श्री रावत सारस्वत
१३. सीताराम चौपई—	श्री अगरचन्द नाहटा
१४. जैन रासादि संग्रह—	श्री अगरचन्द नाहटा और डा० हरिवल्लभ भायाणी
१५. सदयवत्स वीर प्रबन्ध—	प्रो० मंजुलाल मजूमदार
१६. जिनराजसूरि कृतिकुसुमांजलि—	श्री भंवरलाल नाहटा
१७. विनयचन्द कृतिकुसुमांजलि—	,, ,, ,,
१८. कविवर धर्मवर्द्धन ग्रंथावली—	श्री अगरचन्द नाहटा
१९. राजस्थान रा दूहा—	श्री नरोत्तमदास स्वामी
२०. वीर रस रा दूहा—	,, ,, ,,
२१. राजस्थान के नीति दोहा—	श्री मोहनलाल पुरोहित
२२. राजस्थान व्रत कथाएं—	,, ,, ,,
२३. राजस्थानी प्रेम कथाएं—	,, ,, ,,
२४. चंदायन—	श्री रावत सारस्वत

२५ भड्डुली—	श्री अगरचन्द नाहटा म:विनय सागर
२६. जिनहर्ष ग्रंथावली	श्री अगरचन्द नाहटा
२७. राजस्थानी हस्तलिखित ग्रंथों का विवरण	,, ,,
२८. दम्पति विनोद	,, ,,
२९. हीयाली-राजस्थान का बुद्धिवर्धक साहित्य	,, ,,
३०. समयसुन्दर रासत्रय	श्री भंवरलाल नाहटा
३१. दुरसा आढा ग्रंथावली	श्री बदरीप्रसाद साकरिया

जैसलमेर ऐतिहासिक साधन संग्रह (संपा० डा० दशरथ शर्मा), ईशरदास ग्रंथावली (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), रामरासो (प्रो० गोवर्द्धन शर्मा), राजस्थानी जैन साहित्य (ले० श्री अगरचन्द नाहटा), नागदमण (संपा० बदरीप्रसाद साकरिया), मुहावरा कोश (मुरलीधर व्यास) आदि ग्रंथों का संपादन हो चुका है परन्तु अर्थाभाव के कारण इनका प्रकाशन इस वर्ष नहीं हो रहा है।

हम आशा करते हैं कि कार्य की महत्ता एवं गुरुता को लक्ष्य में रखते हुए अगले वर्ष इससे भी अधिक सहायता हमें अवश्य प्राप्त हो सकेगी जिससे उपरोक्त संपादित तथा अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथों का प्रकाशन सम्भव हो सकेगा।

इस सहायता के लिये हम भारत सरकार के शिक्षाविकास सचिवालय के आभारी हैं, जिन्होंने कृपा करके हमारी योजना को स्वीकृत किया और ग्रान्ट-इन-एड की रकम मंजूर की।

राजस्थान के मुख्य मन्त्री माननीय मोहनलालजी सुखाड़िया, जो सौभाग्य से शिक्षा मन्त्री भी हैं और जो साहित्य की प्रगति एवं पुनरुद्धार के लिये पूर्ण सचेष्ट हैं, का भी इस सहायता के प्राप्त कराने में पूरा-पूरा योगदान रहा है। अतः हम उनके प्रति अपनी कृतज्ञता सादर प्रगट करते हैं।

राजस्थान के प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षाध्यक्ष महोदय श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता का भी हम आभार प्रगट करते हैं, जिन्होंने अपनी ओर से पूरी-पूरी दिलचस्पी लेकर हमारा उत्साहवर्द्धन किया, जिससे हम इस वृहद् कार्य को सम्पन्न करने में समर्थ हो सके। संस्था उनकी सदैव ऋणी रहेगी।

इतने थोड़े समय में इतने महत्वपूर्ण ग्रन्थों का संपादन करके संस्था के प्रकाशन-कार्य में जो सराहनीय सहयोग दिया है, इसके लिये हम सभी ग्रन्थ सम्पादकों व लेखकों के अत्यंत आभारी हैं।

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी और अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, स्व० पूर्णचन्द्र नाहर संग्रहालय कलकत्ता, जैन भवन संग्रह कलकत्ता, महावीर तीर्थक्षेत्र अनुसंधान समिति जयपुर, ओरियंटल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, भांडारकर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूना, खरतरगच्छ बृहद् ज्ञान-भंडार बीकानेर, मोतीचंद खजाञ्ची ग्रंथालय बीकानेर, खरतर आचार्य ज्ञान भण्डार बीकानेर, एशियाटिक सोसाइटी बंबई, आत्माराम जैन ज्ञानभंडार बडोदा, मुनि पुण्यविजयजी, मुनि रमणिक विजयजी, श्री सीताराम लालस, श्री रविशंकर देराश्री, पं० हरदत्तजी गोविंद व्यास जैसलमेर आदि अनेक संस्थाओं और व्यक्तियों से हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होने से ही उपरोक्त ग्रन्थों का संपादन संभव हो सका है। अतएव हम इन सबके प्रति आभार प्रदर्शन करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं।

ऐसे प्राचीन ग्रन्थों का सम्पादन श्रमसाध्य है एवं पर्याप्त समय की अपेक्षा रखता है। हमने अल्प समय में ही इतने ग्रन्थ प्रकाशित करने का प्रयत्न किया इसलिये त्रुटियों का रह जाना स्वाभाविक है। गच्छत: स्खलनंक्वपि भवत्येव प्रमादत:, हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधव:।

आशा है विद्वद्वृन्द हमारे इन प्रकाशनों का अवलोकन करके साहित्य का रसास्वादन करेंगे और अपने सुझावों द्वारा हमें लाभान्वित करेंगे जिससे हम अपने प्रयास को सफल मानकर कृतार्थ हो सकेंगे और पुन: मां भारती के चरण कमलों में विनम्रतापूर्वक अपनी पुष्पांजलि समर्पित करने के हेतु पुन: उपस्थित होने का साहस बटोर सकेंगे।

निवेदक
लालचन्द कोठारी
प्रधान-मंत्री
सादूल राजस्थानी-इन्स्टीट्यूट
बीकानेर

बीकानेर,
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
सं० २०१७
दिसम्बर ३,१९६०.

उपोद्घात

'सदयवत्स वीरप्रबन्ध' का पहला परिचय- प्रस्तुत प्रबंध के अस्तित्व का पहला उल्लेख करने वाले श्री चीमनलाल दलाल महोदय थे। ई. स. १९१५ (वि. सं. १९७१) में गुजरातके प्रख्यात शहर सूरत में आयोजित की गई (५) पांचवीं गुजराती साहित्य परिषद के समक्ष उन्होंने "पट्टण के ग्रंथ भाँडार और उसमें बहुतायत रहा हुआ अपभ्रंश एवं प्राचीन गुजराती साहित्य" ("पाटणना भंडारो अने खास करीने तेमां-रहेलुं अपभ्रंश तथा प्राचीन गुजराती साहित्य") नाम का एक बढ़िया निबन्ध पढ़कर सुनाया था। उसमें एक अ-जिन कवि 'भीम' की रचना (लिपि वि. सं. १४८८) सदयवत्स कहानी का उन्होंने ही सर्वप्रथम निर्देश किया था।

इसके पहले श्री काँटावाला से संपादित 'साहित्य' मासिक पत्रिका के अगस्त ई.स. १९१४ (वि. सं. १९७०) के अंकमें आम्रपद्र (आमोद) जिला भरुच के कायस्थ कवि गणपति की रचना-कृति "माधवानल कामकंदला प्रबंध" (रचनाकाल वि. सं. १५७४) कि, जो २५०० दोहा छंदका काव्य-ग्रंथ था उसके प्रति सबसे पहले श्री दलाल महोदय ने ही पाठकों एवं विद्वानों का ध्यान आकृष्ट किया था।

श्री चीमनलाल दलाल महोदय ने ही पट्टण के ग्रंथागार में से अपभ्रंश एवं प्राचीन गुजराती साहित्य के ग्रंथों का परिचय एक सूचिके रूपमें पहले एकत्र किया था। क्योंकि उनके पहले पट्टण के ग्रंथागार के साहित्यक ग्रंथोंकी सूचि (नोंध) या संकलित यादी तैयार करने के लिये डा० ब्युलर, डा० पीटरसन, एवं प्रा० मणिलाल न. द्विवेदी आदि महानुभावोंने प्रयत्न किया था। उनको यहाँके ग्रंथागारके संरक्षकों-का सहकार प्राप्त नहीं हुआ था। किन्तु श्री दलाल महोदय, स्वयं जिन होने के नाते, उन्होंने उन ग्रंथागार के संरक्षकों का सहकार एवं सद्भाव प्राप्त कर लिया था। और अत्यंत परिश्रम करके यहाँ के (पट्टणके ग्रंथा-

गार के) साहित्यक-धन द्वारा उस साहित्य का साहित्य जगत में परिचय दिया। गुदडी के लाल की तरह, साहित्य प्रकाश में लाया गया। साहित्य-जगत में नई रोशनी आई। फलस्वरूप बड़ौदा रियासतकी श्री गायकवाड़ प्राच्य ग्रंथमाला (G. O. Series) के पहले संपादक एवं तंत्री-पद पर उनकी नियुक्ति की गई थी।

सम्पादनका श्रेय- यह एक आनन्दजनक एवं आश्चर्यकारक घटना घटी है ऐसा कहने में संकोच नहीं होता है। क्योंकि श्री दलाल महोदय ने जिस अ-जैन काव्यग्रंथों की सर्व प्रथम उद्घोषणा की थी, वही दोनों ग्रंथों के संपादन करने का सद्‌भाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। कौन जानता था कि यह कार्य मुझसे होगा ? किंतु हो गया हैं। और अब भी हो रहा है। इसमें ईश्वर का कुछ संकेत होगा ऐसा मैं समझता हूं।

ई. स. १९४२ (वि. सं. १९९७) में "माधवानल कामकंदला प्रबंध" मूल-मात्र, एवं परिशिष्ट और उपोद्‌घात सहित प्रथम भाग श्री गायकवाड़ प्राच्य ग्रंथमाला में ९३ पुष्प के रूप में प्रकाशित हुआ है। विस्तृत प्रस्तावना, टिप्पणियाँ, तथा शब्दकोशका दूसरा भाग तैयार होने जा रहा है।

संपादन का इतिहास- प्रस्तुत "सदयवत्स वीर प्रबंध" नामका ग्रंथ का संपादन कार्य करने का निर्णय ई. स. १९३९ (वि. सं० १९९५) में किया गया था। उसके बाद अन्य हस्तलिखित पोथियाँ एवं उपयोगी साहित्य की खोज में कुछ वर्ष निकल गये। प्रस्तुत प्रबन्ध का प्रकाशन-कार्य अहमदाबाद की गुजरात विद्यासभा की ओर से होने वाला था। उससे मैंने वहां एक प्रेस-कापी प्रकाशन के लिये भेज दी। वहां के 'नवजीवन' छापखाने से ई. स. १९५० (वि. सं. २००६) के आसपास के समय में देवनागरी लिपि में प्रकाशित हुई कुछ गलतियां वाली प्रूफ-प्रतियां प्राप्त हुई। मैंने इन गलतियों की दुरुस्ती करने की प्रार्थना की। किंतु वहाँ के कार्यवाहकों को गलतियाँ दुरुस्त करने के लिये सुविधा नहीं होने के नाते, कुछ कठिनाई देखकर इस कार्य को आगे

बढ़ाने में अनिच्छा व्यक्त की। छापखानेवालों ने यह सिरपच्ची वाला साहित्य विद्यासभा की ओर वापस भेज दिया। और विद्यासभा ने मुझे वापस लौटा दिया। और इस तरह यह प्रकाशनका कार्य यकायक रुक गया।

श्री नाहटाजीकी प्रेरणा- श्री अगरचन्द नाहटाजी महोदयने उनके "राजस्थान भारती" नामके मासिक-पत्रिका के अंक में सन् १९५८ में प्रकाशित एक विस्तृत लेख में 'उस प्रबन्ध का प्रकाशन होने वाला है," ऐसा नोंट के रूप में उल्लेख किया था। वाद में (वि. स. २०१६) ई. सं. १९६० के सितम्बर मास में श्री नाहटाजी महोदयने, प्रस्तुत प्रबन्धकों श्री सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीटयूट बीकानेर ग्रंथमालामें प्रकट करनेकी, संस्था के सेक्रेटरी (मंत्री) के नाते, मुझे सूचन किया, प्रार्थना की। मैंने धन्यवादके साथ उनकी प्रार्थनाको सहर्ष स्वीकार किया। इस तरह प्रस्तुत प्रबंधके प्रकाशन-कार्य की कहानी या पूर्व इतिहास अब पूर्ण होता है।

आभार दर्शन- इस उपयोगी साहित्य रचनाकृति को प्रकाशमें लाने की सुविधा एवं सहायता देने के लिये, तथा तत्संबंधी अनेक हस्त-लिखित प्रतियां एवं अन्य सामग्री भेजकर रचनाकृतिके संपादन, संशोधन एवं प्रकाशन आदि कार्यों में जो सहायता प्रदान की है, इसके लिये मैं श्री नाहटाजी महोदय को धन्यवाद के साथ उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूं।

उस संपादन की प्रस्तावना लिखने में उपरिनिर्दिष्ट श्री नाहटा जी महोदय का "राजस्थान भारती" में प्रकाशित "सदयवत्स सावलिंगा की प्रेमकथा" नामके अत्यन्त अभ्यासपूर्ण एवं विद्वत्तापूर्ण लेख का काफी उपयोग भी किया है। उसके लिये भी मुझे उनका ऋण-स्वीकार करते हुये अत्यन्त हर्ष होता हैं।

प्रस्तुत ग्रंथमें मैंने संशोधित की हुई एवं अन्य सर्व गुजराती सामग्री का हिंदी में अनुवाद करने वाले मेरे स्नेही एवं साहित्यक-शिष्य श्री चन्द्रकान्त बापालाल पटेल (साहित्यरत्न-प्रयाग) जी को मैं धन्यवाद देता हूं।

इस प्रवन्ध के सम्पादन में मेरे मित्र पंडित श्री लालचन्द्र भगवान दास गांधीजी ने पाठ निर्णय और टिप्पणी में हृदयपूर्वक सहायता की है इसलिए मैं अत्यन्त उपकृत हूं।

फोटोग्राफ- 'प्रवंध' और 'चउपाई' की प्राचीन प्रतियों के आदि एवं अंतभागके फोटोग्राफ (चित्र-कांपी) भी दिये हैं। जो प्रतियां बड़ौदा प्राच्यविद्यामंदिर के नियामक श्री डा० भोगीलाल जी सांडेसरा के सौजन्य से प्राप्त हुई हैं। जिससे लिपियों के प्रकारान्तरका परिचय भी होगा। और सुविधा रहेगी।

टिप्पणीमें कई अपभ्रंश शब्दोंकी व्युत्पत्ति दी गई है जिससे इनका यथार्थ बोध होने में सुविधा रहेगी।

प्रवन्ध में से एक दिलचस्प प्रसङ्ग का चित्र की प्रतिकृति एक सचित्र प्रति में से दी गई है।

"चैतन्यधाम" ३४ प्रतापगंज
बड़ौदा २
(गुजरात राज्य)

मंजुलाल मजमुदार

प्रस्तावना

प्रबन्ध का स्वरूप- वीररस प्रधान एवं ओजपूर्ण शैलीवाला काव्य 'प्रबंध काव्य' कहा जाता है। गद्य या पद्य दोनों में की हुई सार्थक रचना का नाम है 'प्रबंध' (मणिलाल बकोरभाई व्यास का संपादित "विमल प्रबंध", प्रस्तावना पृ० ६२) ई. स. १००० से १५०० तक रचे गये ऐतिहासिक काव्योंके नाम, खास करके 'प्रबंध' रखे गये हैं। जैसेकि कुमारपाल प्रबन्ध, भोजप्रबन्ध, चतुर्विंशति प्रबन्ध, प्रबन्ध चिंतामणि, प्रबंध श्रेणि, जैसे संस्कृत गद्यपद्यात्मक ग्रंथों में एक या अनेक वीरव्यक्तियों के चरित्रों का बयान किया गया है। इन प्रबंधों में संबंधित व्यक्तियों में विमल मंत्री जैसे युद्धवीर तथा धर्मवीर भी हैं, एवं जगड् जैसे दानबीर, और विक्रम जैसे युद्धवीर, और सदयवत्स या पृथ्वीराज जसे शृंगारवीर भी उल्लेखनीय हैं। यों प्रबंध खास करके ऐतिहासिक व्यक्तियोंके चरित्र-निरूपण के ही काव्य हैं।

वीररस का आलंबन- रसशास्त्रका एक सिद्धांत है कि उत्तम प्रकृति के नायकों का ही वीररसमें बयान करना चाहिये। क्योंकि वीरत्व उत्तम पुरुषों में ही होता है। वीररस का स्थायीभाव उत्साह है। उत्साह का राजस गुण किसी भी कार्य में वीर को प्रवृत्त करता है। क्योंकि उस कार्य में उसको विजय प्राप्त करना है। वीर का उत्साह यूं पाँच प्रकार का हो सकता है। जैसे कि युद्ध करने का उत्साह, धर्म करने का उत्साह, दान करने का उत्साह, दया करने का उत्साह, तथा प्रेम करने का उत्साह।

महाभारत के पात्रों में अर्जुन युद्धवीर, हैं युधिष्ठिर महाराज धर्मवीर हैं। कर्ण दानवीर हैं। शिविराज दयावीर हैं। भगवान कृष्णचंद शृंगारवीर के रूप में विख्यात हैं ही। यदि कोई कहेंगे कि क्षमावीर, सत्यवीर, लज्जावीर, नीतिवीर, धृतिवीर जैसे भेद क्यों न हो सके? वीरके

अनेक भेद और केवल पांच ही भेद क्यों कहे गये ? इसका समाधान इस प्रकार हो सकता है कि क्षमाका अन्तंभाव दया में हो जाता है । तथा सत्य आदि का संनिहित धर्म में ।

अंग्रेजी वीरपूजा की भावना–कार्लाइल के 'वीर और वीरपूजा' (Hero & Hero worship) नामक पुस्तक में जीवन के विविध क्षेत्रों में वीरता दिखाने वाले वीरों का पूजन करना उचित है ऐसा प्रतिपादित किया गया है। इसमें वीरता को व्यापक अर्थ में सूचित किया गया है ।

कवि, धर्मगुरु, बैद, व्यापारी, सैनिक प्रत्येक के क्षेत्र में हरेक को वीरता दिखलानेका पूर्ण अवकाश रहता है । और वीरता दिखलानेवाले सच्चे वीर कहलाने के योग्य हैं । उपर्युक्त दिखाये गये पाँच प्रकार के भेद में इसका भी अंतंभाव हो जाता है ।

वीररस के अन्य पद्यस्वरूप- वीरोंके चरित्र 'प्रबन्ध' रूपमें 'पवाडा' रूप में, श्लोक (सलोका) रूप में, या 'रासा'के रूपमें वीररसके लिये उचित ऐसे 'छंद' में रचे जाते हैं। और रचे भी गये हैं । जिसके दृष्टांत ऊपर दिये गये हैं । सामान्य मनुष्यों के चरित्र कभी काव्य द्वारा विरदाने के योग्य होते नहीं हैं, या ऐसे साधारण मनुष्यों के चरित्र काव्य में वर्णित किये नहीं जाते हैं, या योग्य भी नहीं होते । इसलिये गुजराती एवं राजस्थानी पद्य-साहित्य में खास तौर पर चरित्र, प्रबन्ध, पवाडो, रासो तथा छंद, एवं शलोका, ये सर्व शब्द करीब पर्याय रूप में प्रयुक्त किये गये शब्द न हों, ऐसा समझने का मन होता है ।*

---

* कान्हडदे प्रबंध की कुछ प्रतियों में उसका शीर्षक कान्हड चरिय, कान्हडदेनी चुपइ, कान्हड देनउ पवाडउ, और श्री कान्हडदे रास-ऐसा भी उल्लेख मिलता है-देखिये प्रा० कान्तिलाल व्यास, श्री सिंघी ग्रंथमाला अंग्रेजी प्रस्तावना, पृ० २० की पादनोंट ।

वीरगाथा काल- वीरगाथा काल के राजाश्रित कवियों एवं भाट चारणोंने अपने आश्रयदाता राजाओं के शौर्य पराक्रम एवं प्रभाव आदि के वर्णन अपनी ओजपूर्ण सनकदार बानी में काव्यों में किये हैं। ये लोग कभी कभी रणक्षेत्र में जाते थे, तलवार भी चलाते थे। और अपनी वीर बानी से सैन्य में शौर्य का संचार करते थे। खुद भी युद्ध में प्राणार्पण कर देते थे। ऐसी रचनाओं की पीढ़ीगत रक्षा भी की जाती थी एवं वृद्धि भी।

हमें वीरगाथायें दो रूप में मिलतीं हैं। (१) मुक्तक रूप में, और (२) प्रबंध में। जिस तरह युरुप में वीरगाथाओं के विषय (Age of Chivalry) युद्ध एवं प्रेम थे, वैसे भारत के साहित्य में भी हुआ है। किसी राज्य की स्वरूपवती राजकन्या का समाचार सुनकर अपने लश्कर के साथ उस राज्य पर धावा करके उसकी राजकन्या छीन ली जाती या अपहृत की जाती थी। इसमें वीरों का वीरत्व, गौरव, शौर्य, अभिमान, बल, प्रभाव, आदि माना जाता था। इस तरह प्रबन्ध काव्यों में वीररस के साथ शृंगार रस का भी मिश्रण होता था, हुआ है।

वीररस के मुक्तक- वीररस के प्राचीन मुक्तकों का संग्रह मुनि श्री हेमचन्द्राचार्य के 'प्राकृत व्याकरण' ग्रंथ में दृष्टान्त के रूप में प्राप्त होता है। इसके सिवा भी प्रबंध काव्य एवं वीरगीतों के स्वरूप में रचना हुई है।

रासा साहित्य- गुजराती के रासा युग के समसामायिक काल को हिंदी साहित्य में "वीरगाथा काल" नाम दिया गया है। इस काल में 'खुमान रासो' 'विशालदेव रासो' 'पृथ्वीराज रासो' 'हम्मीर रासो' 'जगनिक का आल्हाखंड' आदि रचना हुई है।

गुजराती में वि. सं. १३७१ के आसपास श्री अंबदेव सूरि रचित "समरारासु" में पट्टण के समरसिंह नामक एक ओसवाल वणिक बनिया ने संघ (यात्रा) निकाल के शत्रुंजय पहाड़ पर श्री ऋषभदेव के मन्दिर का जीर्णोद्धार किया। और घर लौट आया उसकी प्रावस या तीर्थ-

यात्रा आदि का वर्णन आता है । इसमें समरसिंह स्वयं दानवीर एवं धर्मवीर भी दिखाई देता है ।

श्री कक्कसूरि के वि. सं १३९२ में संस्कृतमें रचित ग्रंथ 'नाभिनंदन जिनोद्धार प्रबन्ध' में भी इसका वर्नन है । श्री अम्बदेवसूरि इस यात्रा में सम्मिलित थे । ऐसा उसमें उल्लेख है ।

गुजराती प्रबन्ध साहित्य- 'विसलनगरा नागरवंश' पद्मनाभने वि. सं १५१२ में 'कान्हडदे प्रवंध'की रचना की है। यह बिना सुपरिचित तथा सुविदित हो गई हैं। वि. सं १५६८ में श्री लावण्यसमयने 'विमल प्रबन्ध' की रचना की है वह भी प्रसिद्ध है। कायस्थ कवि गणपति ने 'माधवानल कामकंदला प्रबन्ध' की रचना वि. सं १५७४ में आम्रपद्र, आमोद ज़िला भडोच में की है।

शील से शोभित नायक नायिका का शृंगार इसका वर्ण्य विषय है। इसमें माधव चारित्र्य-शुद्ध शृंगारवीर है। कामकंदला अभिजात गणिका-पुत्री है। और वह मृच्छकटिक की पात्र वसंतसेना का स्मरण कराती है। इसीलिये उनका मिलन साहसवीर तथा परदुःखभंजन ऐसे राजन विक्रम द्वारा होता है। इस प्रवन्ध में विप्रलंभ तथा रतिक्रीडा यों दोनों प्रकार के शृंगार रसप्रद वाणी में वर्णित किया गया है। फिर भी इसमें कविने शीलका, चारित्र्यका, माहात्म्य अधिक भावपूर्वक स्थापित किया हैं।

वैष्णव कवि श्री गोपालदासे ने "श्री वल्लभाख्यान" श्री वल्लभाचार्य (जीवनकाल वि. सं. १५२९-१५८७) तथा श्री विटठ्लनाथजी (जीवन-काल वि. सं. १५७२ से १६४२ में) धर्मवीर ऐसे गोस्वामी श्री विट्ठल नाथजी की प्रशस्ति की, प्रबन्ध-रूप में नौ गेय पद्यों में रचना की है।

संस्कृत गद्य कथा- श्री रत्नशेखर के शिष्य श्री हर्षवर्धन-गणिने वि. सं. १५२७ में "सदयवत्स कथा" संस्कृत गद्य में रची है। वह शायद एक जैनेत्तर कवि भीम ने रचित "सदयवत्स वीर प्रबंध" की वि. सं १४८८ में श्री पट्टन में लिखी गयी प्राचीनतम प्रतिकृति प्राप्त हुई है। इसे बिनासे इस कृतिकी रचना के संभव में

सकता है कि भीम की रचना अनुमानतः वि. सं. १४६६ में हुई होगी,
ऐसा कुछ लोगों ने अनुमान किया है। दूसरी प्रति वि. सं. १५९० में
एवं तीसरी प्रति वि. सं. १६६२ की प्राप्त है। इस परसे कहा जा सकता
है कि सदयवत्स और सार्वलिंगा की प्रेम कथा का यह सबसे प्राचीन
एवं उपलब्ध संस्करण है।

श्री चीमनलाल दलाल महोदय ने जिस प्रति की जांच की थी उसमें
पद्य-संख्या ६७२ थी। दूसरी प्रति में ६८९ पद्य-संख्या है। किंतु सर्व
प्रतियां का मिलान करनेके वाद,प्रबन्ध की ७३० जितनी कड़िया प्राप्त हुई
हैं।

संस्कृत कथानक भीम के प्रबन्ध का मुख्यतः अनुसरण करता है।
किंतु उसमें जिनधर्म की महिमा का गुंथन करलेनेकी तक श्री हर्षवर्धन-
ने छोड़ दी नहीं है। इन प्रसंगों का उल्लेख कथा-सार देते समय कौंस
या कोष्टक में सूचित किया जायेगा। खरतर गच्छ के यति श्री कीर्ति-
वर्धन ने इस कथानक में जिनमत का कुछ भी प्रचार नहीं किया है।

कथानक का मूल- 'कथा सरित् सागर' जो कि लोककथाओंके
महासागर स्वरूप गिना जाता है। उसमें भी 'सदयवत्स कथा' का पता
चलता नहीं है। फिर भी उज्जयिनी, हरसिद्धिमाना, प्रतिष्ठान नगर,
शालिवाहन, बावनवीर, और खापरा चोर इत्यादि उल्लेखों से
और सदयवत्स के अद्भुत वीरता-भरे वर्णनों से या गाथाओंसे इस लोक-
कथा की उत्पत्ति का सम्बन्ध 'विक्रम कथा-चक्र' के साथ होना अनुमान
किया जा सकता है।

* संस्कृत में 'सदयवत्स', प्राकृत में 'सुदयवच्छ' 'सुद्धवच्छ' एवं
सुद्द, गुजरातीमें 'सदयवच्छ' और 'सदेवंत' इस तरह राजस्थानी-मारवाडी
में 'सूदों', एवं 'सदेवछ' शब्द हैं। इससे ज्ञात होता है कि ये सर्व शब्द
कथानक से सम्बन्ध रखने वाले हैं। कथानक के निकटवर्ती शब्द हैं।
सांवलिंगा का निर्देश कहीं कहीं सार्वलिंगी के रूप में भी प्राप्त है।

प्राचीन उल्लेख पद्मावतमें सदयवत्स कथा के विषय में दो प्राचीन उल्लेख प्राप्त होते हैं। (१) मलेक मुहम्मद जायसीकृत रचना पद्मावत में इस कथानक का उल्लेख उसने किया है। और श्री सुधाकर द्विवेदी वाला जो संस्करण हैं उसमें यही पाठ है।

(२) शिरफ ने जायसीकृत 'पद्मावत' के अपने अंग्रेजी अनुवाद में पृ० १४४ की पादटिप्पणी में भी 'सदयवत्स' पाठ का उल्लेख किया है।

अपभ्रंशमें उल्लेख- एक दूसरा उल्लेख भी प्राचीन समय का प्राप्त होता है, जो अब्दुल रहेमानके अपभ्रंश काव्य 'संदेश रासक'में है। जिसका रचनाकाल वि. सं. १४०० के आसपास है। उसने मुलताननगर का वर्णन किया है। उसमें वहाँ के विचक्षण नागरिकों की साहित्यक विनोद की चर्चा के प्रसंग में उन्होंने लिखा है कि मुलताननगर के सर्व नागरिक पंडित थे। ये विचक्षणों के साथ नगर में परिभ्रमण करते समय कहीं कहीं प्राकृत के मनोरम्य छंद के आलाप सुनने में आते थे। तो कहीं भेष परिवर्तन करने वाले लोग (बहुरूपी) 'रासक' करते देखने को मिलते थे, तो कहीं वेद, सदयवत्स कथा, नल चरित्र, महाभारत एवं रामायण (रामचरित) सुनने में आते थे।*

---

* देखिये, मूल अपभ्रंश रचना की संस्कृत टिप्पणी--

"यदि विचक्षणैः सह पुरान्तः परिभ्रम्यते तदा मनोहरं छंदसा मधुरं प्राकृतं श्रूयते।

कुत्रापि चतुर्वेदिभिः वेदः प्रकाश्यते।

कुत्रापि बहुरूपिभिर्निबद्धो रासको भाष्यते ॥४५॥

कुत्रापि सुदयवच्छ कथा, कुत्रापि नलचरितम्।

कुत्रापि विविध विनोदैः भारतं उच्चरितं श्रूयते ॥

अन्यच्च कुत्रापि कुत्रापि आशिष त्यागिभिर्द्विजवरैः

रामायणमभिनूयते ॥४४॥

यहां नलचरित्र, महाभारत एवं रामायण के साथ 'सदयवत्सकथा' का उल्लेख प्राप्त होने से ज्ञात होता है कि उस समय यह कथा उन ग्रंथों की तरह ही लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध होगी ।

प्रान्त प्रान्तमें प्रचार- जायसी के पद्मावत में इस कथा का उल्लेख है इससे ज्ञात होता है कि उस कथातक की प्रसिद्धि उत्तर प्रदेश में भी इसी रूप में होगी । यह बात स्पष्ट नजर में आ जाती है ।

अब्दुल रहेमान के इस का इस रूप में उल्लेख, वास्तव में पंजाबकी ओर इस कथा के प्रचार का द्योतक है । राजपुतानी (राजस्थान) एवं गुजरात में भी इस कथानक का बहुत प्रचार रहा है । यह बात भी उस संपादित संशोधित एवं प्रकाशित ग्रंथ से ज्ञात होगी ।

विक्रम कथाचक्र से सम्बन्ध- जिन कवि के संस्कृत कथानक में जिनाचार्य कालक के साथ उसका सम्बन्ध जुटाया है । एवं कथा में उज्जयिनी, हरसिद्धिमाता (देवी), प्रतिष्ठाननगर एवं शालिवाहन राजा, बावन वीर, और खापरा चोर आदि के उल्लेख किये हैं । और इस प्रकार से विक्रमकथाओं के वार्ताचक्र (कथा चक्र) के साथ उसका सम्बन्ध व्यंजित किया है ।

प्रबन्धके रचयिता कविका परिचय- कवि ने प्रवन्ध में अपने निर्देश के अतिरिक्त अन्य कोई भी परिचय नहीं दिया है । नामका निर्देश निम्नलिखित काव्य-पंक्ति में मिल जाता है, जो यहां उद्धृत किया गया है ।

"इम भणइ भीम तस गुण थुणिसु,
जो हरिसिद्धि-वर-लवध ।"

नाम का निर्देश प्राप्त होता हैं । किंतु कवि ने अपनी जाति ज्ञाति एवं जन्मस्थल या निवासस्थान के बारे में कुछ भी उल्लेख नहीं किया है । साथ साथ प्रबन्धके रचना-कालका भी किंतु उनके प्रबन्धकी प्राचीन-

तम प्रतिकृति श्री पट्टन में वि. सं. १४८८ की लिखी हुई प्राप्त हुई है। (विद्वद्जन मनः प्रमोदाय) इससे काफी अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना विक्रम की १५ वीं शती के उपरार्ध से अर्वाचीन नहीं है।

कविका निवास स्थान-कविने अपने निवास स्थानके बारेमें कुछ भी संकेत नहीं किया है। किंतु कविका निवास स्थान गुर्जर भूमि हो ऐसा प्रतीत होता है। क्योंकि जब कामसेना के व्याधिकी चिकित्सा केवल गुर्जर वैद्यराज से ही हो सकी थी। और इससे गुर्जर वैद्यकी कवि भीम ने काफी प्रशंसा भी की है।

प्राचीन काल की गुर्जर भूमि का विस्तार भी गूर्जर प्रतिहार राजाओं के साम्राज्य विस्तार के साथ साथ हुआ है। जिस राज्य में सौराष्ट्र, आनर्त, एवं समस्त राजस्थान का भी सन्निवेश होता था; और इसकी व्यापक लोक भाषायें भी समान थीं।

कवि की ज्ञाति- कवि का ब्राह्मण होना सम्भव है। क्योंकि उसने गणेश, शंकर, एवं हरसिद्धि माता परमेश्वरीका उल्लेख किया है। साथ साथ कैलाशपति भगवान शंकर के प्रासाद का सुन्दर बयान दिया हैं। (दे०कडी २१७, १८, १९) । प्रतिष्ठान नगर वर्णनके प्रसङ्गमें विक्रम, त्रिविक्रम, विष्णु एवं सूर्य का भी उल्लेख हैं। सावलिंगा के अग्निप्रवेश की पूर्व तैयारी के रूप में जो प्रार्थना दी है इससे भी पता चलता है। जैसे कि 'करउ साखि त्रिकम ने तरणी' कडी (५९९)।

कवि रामायण एवं महाभारत से भी विशिष्ट रीति से परिचित थे ऐसा जान पड़ता हैं। कुछ छंद एवं काव्य पद्धतियां के द्वारा इसका पता चलता हैं। सदयवत्स के गुण एवं कार्यों की प्रशंसावली के अनुसंधान में नल, कंदर्प, युधिष्ठिर, गांगेय भीष्म पितामह, भीमसेन, कर्ण एवं दुर्योधन जैसोंके उपमान भी कविने दिये हैं।(दे० छप्पय कडी २८७)कविके जमाने में जिनधर्म एवं जीवदया अहिंसाका भी काफी प्रचार था। इसके द्योतक निम्नलिखित काव्य-पंक्तियां हैं। इससे पता चलता है। जैसे कि 'जिन शासन गाढउ गहगहइ। जीवदया देखी मन रहइ ॥'(दे कडी ४५१,४५२)

प्रबंध की भाषा- प्रस्तुत प्रवन्ध की भाषा किसी भी जिनेत्तर गुजराती ग्रंथ की भाषा से प्राचीन जान पड़ती है। प्राकृत एवं अपभ्रंश के शब्द और प्रयोगों के रूप में उसमें इतनी सामग्रियां भरी पड़ी हैं कि न पूछो बात। यदि प्रारम्भ के मंगलाचरण में कवि ने गणपति का नाम-स्मरण न किया होता तो इसकी गणना किसी जिन कवि की कृति के रूप में गिना जाने का सम्भव था। डा० टेसिटोरीने जूनी पश्चिम राजस्थानी का नामाभिधान जिस भाषा-स्वरूप को दिया है। और गुजराती विद्वान महाशयोंने 'अंतीम अपभ्रंश' और 'जूनी गुजराती', ऐसे शब्दों से उसका व्यवहार किया है। उसी समयकी भाषा 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध'में प्रतीत होती है। वास्तव में वि. सं. १४८८ की प्रति की उपलब्धि से भाषा के प्राचीन स्वरूप की रक्षा हुई है। और इसमें कुछ परिवर्तन एवं आधुनिकरण नहीं हुआ है।

सरस या सुन्दर रचना -कवि इस प्रबन्धके प्रारम्भ में 'सरस' 'सुअर्थ' एवं सुच्छंद प्रबन्ध के रचयिता सर्व कोई प्रौढ़ एवं लघु छोटे बड़े ऐसे कविजनों को नमस्कार करते हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि कवि ने किसी प्राकृत किंवा प्राकृत अपभ्रंश ग्रन्थों में से इस प्रबंध के विषय में प्रेरणा प्राप्त की होगी जिसका निर्देश हमें निम्नलिखित काव्य पंक्तियों से मिलता है। जैसे कि "गुरु लहुय जि कवि कवियण, सरस सुअत्थ सुछंद बंधयरा।" कवि के पुरोगामी काल में ऐसी प्रबन्ध रचना होना भी शायद सम्भव हो। फिर भी अद्य-यावत्प्राप्त जिनेत्तर रचनाओं में कवि भीम की रचना सबसे प्राचीन है-ऐसा कहने में संकोच नहीं है।

भीम कवि की रचना एवं काल-समय- सदयवत्स चरित कथानक के सम्बन्ध में उपलब्ध साहित्य से निर्णय किया जाता है कि उन रचनाओं का प्रारम्भ वि. की १५ वीं शती से होता है। प्राचीन गुजराती भाषा में रचित भीम कवि की रचना 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' ग्रंथ उपलब्ध रचनाओं में सबसे प्राचीन है। इसकी प्राचीनतम प्रतिकृति

वि. सं. १४८८ की प्राप्त हुई है। इससे अनुमान किया गया है कि यह रचना निदान २० बीस साल पहले की होना सम्भव है। अतएव इनकी रचना वि. सं. १४६६ की है। ऐसा निर्देश कई लेखकों ने किया होगा। वास्तव में कवि का इसके वारे में कहीं भी स्पष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं होता।

प्रबन्ध के छंद- कवि ने प्रस्तुत प्रबन्धमें दूहा, दूहासोरठा, पद्धडी, चउपई, अडयल, वस्तु, छप्पय, कुंडलिया. चामर एवं मौक्तिकदांम इन मात्रामेल छंद एवं एकताली केदारराग, और धउल धनासी, जैसे गेय काव्य-छंद प्रयुक्त किये हैं। अतएव ७३० कडियों में वह कृति प्रसादयुक्त एवं वैविध्यपूर्ण और सुन्दर बन पाई है।

वस्तुछंद 'पिंगलसारोदार'के नियमानुसार, १२५ मात्राओंका नवपदी छंद है। पहले तीसरे ओर पाँचवें पदमें १५ मात्रायें, दूसरे एवं चौथे पद में ११ मात्रायें, और अंत्यके चार पदों से दूहा बनता है।

पद्धडी पद्धडिका और पावडी छंद कडवक के अंत में अपभ्रंश काव्यों में प्रयुक्त होता है।

आचार्य हेमचंद्र जी ने 'छंदानुशासन' में चौः पद्धडिका' चार च गणों से पद्धडिका छंद बनता है ऐसा लक्षण दिया है। चार मात्रा के गणकी चगण संज्ञा है। एवं १६ मात्रा का एक पाद, इस तरह के चार पाद पद्धडिका छंद में रहते हैं। इसमें उसका नाम चतुष्पदी भी है।

प्रबन्ध में रस- कवि ने इसमें नौ ९ रस होने का उल्लेख किया है, किंतु प्रधानतया वीर एवं अद्‌भुत रसका संचार अधिक है। शृंगार रस उसमें गौण रूप में पाया जाता है। 'सदयवत्स वीर प्रबन्ध' नाम की गुजराती कवि की रचना प्रयः वीर रस से ही प्रेरित हैं।

गुजराती रूपान्तर-उज्जयिनी के राजा प्रभुवत्स के महालक्ष्मी रानी से सदयवत्स नामक पुत्र हुआ। उसे द्यूत का कुव्यसन लगा हुआ था। प्रतिष्ठानपुर के राजा शालिवाहन के सावलिंगा नामक पुत्री थी। उसके स्वयंवर में जाने के लिये आमंत्रण मिलने पर राजा प्रभुवत्स ने मंत्री के साथ सदयवत्स को प्रतिष्ठानपुर भेजा। मंत्री कृपण होने से कुमार को खर्च के लिये आवश्यक द्रव्य नहीं देता था। स्वयंवर में सदयवत्स ने अपने गुण एवं कला से आकर्षित कर सावलिंगा से विवाह कर लिया।

उज्जयिनी में महादेव नामक एक दरिद्र ज्योतिषी रहता था। स्त्री की प्रेरणा से एक दिन वह राजा प्रभुवत्स की सभा में उपस्थित हुआ। राजा ने उसका परिचय पूछा उसने कहा कि मैं ज्योतिष के बल से भूत, भविष्यत् और वर्तमान के शुभाशुभ को जानता हूं। राजा ने उसके इस अभिमान से क्रुद्ध हो परीक्षार्थ अपने निकटवर्ती जयमंगल हाथी का आयुष्य पूछा। ज्योतिषी ने कहा यह कल दोपहरको मर जायगा। राजा ने क्रोधित होकर उसे कैद कर लिया और नौकरों को जयमंगल हाथी की विशेष रक्षा करने की आज्ञा दे दी। लोक ज्योतिषी की अवज्ञा करते हुये कहने लगे, देखो इस ज्योतिषी ने हाथी का मरण तो जान लिया पर अपने बंदीखाने में पड़ने की बात को नहीं जानी।

इधर वैद्यों की देखरेख में जयमंगल की विशेष सुरक्षा की व्यवस्था हो चुकी थी। पर भवितव्यतावश दूसरे दिन दोपहर के समय हाथी मदोन्मत्त हो भाग निकला और बाजार में उपद्रव मचाने लगा। इसी समय एक सगर्भा ब्राह्मणी के अधरणी उत्सव का वरघोडा उसके पीहर से ससुराल जा रहा था, वहाँ वह हस्ति आ पहुंचा। उत्सव में सम्मिलित लोग भाग खड़े हुये, पर ब्राह्मणी गर्भभार के कारण भाग न सकी। अतः हाथी ने उसे पकड़ ली। यह देखकर उसके पति ने चिल्लाते हुये उसकी रक्षा करनेवाले को हार आदि देने की उद्‌घोषणा की। सदयवत्स की दृष्टि भी उस ओर पड़ी और उसने हाथी को मारकर ब्राह्मणी की रक्षा की। इससे प्रसन्न हो प्रभुवत्स राजा ने कुमार को युवराज-पद देने का

निश्चय किया। स्वयंवर में साथ जाने वाले मंत्री ने कुमार को युवराज-पद मिलता देख विचार किया कि मैंने इसे आवश्यक द्रव्य व्यय के लिये नहीं दिया था संभव है वह उस वैर का बदला मुझ से ले। अतः इसे युवराज-पद नहीं मिले ऐसा सोच राजा को उलटी मंत्रणा दी कि कुमार ने एक साधारण स्त्री की रक्षा करने के लिये "जयमंगल"-जैसे राजमान्य हाथी को मार डाला यह उचित नहीं किया। राजा को मंत्री की बात जँच गई उसने कुमार के कार्य को अनुचित समझ कर उसे राज्य छोड़कर चले जाने की आज्ञा दे दी।

कुमार ने भी अपमान होने से अब वहाँ रहना उचित नहीं समझा और जाने की तैयारी कर ली। माता ने समझाया पर उसने नहीं माना। सार्वलिंगा भी उसके साथ हो गई। चलते चलते वे एक वन में आ पहुंचे वहां सार्वलिंगा को जोरों से प्यास लगी। कुमार पानी की खोज में इधर उधर घूमते हुए एक प्रपा पर नज़र आई। पानी लेनेके लिये पास पहुंचने प्रपालिका वृद्धा ने कहा यह हरसिद्धि माता की प्रपा है। जितना पानी लोगे उतना ही खून देने की शर्त से ही जल ले सकते हो। कुमार ने सार्वलिंगा के प्रेमवश यह शर्त स्वीकार कर, पानी ले जा कर, सार्वलिंगा को पिलाया। वृद्धा भी साथ गई और खून माँगा। कुमार शिरच्छेद करने को उद्यत हुआ। इससे देवी ने प्रसन्न हो वर माँगने को कहते हुए कहा- कि मैंने ही तुम्हारी परीक्षा लेने के लिये जंगल की रचना की है। और मैं उज्जैन एवं प्रतिष्ठान नगर की कुलदेवी हूं। कुमार ने संग्राम एवं युद्ध में जय होने का वरदान माँगा।

देवी ने सारियों के द्यूत में जय होने के लिये दो पासे, कपर्दक द्यूत में जय होने के लिये कपर्दिकायें, और संग्राम में जय होने के लिये लोहछुरिका दी। आगे चलते हुए स्त्रियों के समूह के बीच में एक कुमारिका को ध्यान करते हुए देखकर सार्वलिंगा ने उसके पास जाकर वृत्तान्त पूछा। कुमारिका ने कहा यहाँ से ५ कोस पर स्थित धारावती-नगरीके राजा धारवीरकी स्त्री धारिणीकी मैं लीलावती नामक पुत्री हूं।

बन्दीजनों के मुख से सदयवत्स का गुण श्रवण कर उसे पाने के लिये इस कामितप्रद तीर्थ में ६ महीने से ध्यान कर रही हूं। सदयवत्स के न मिलने पर कल चिता में जल मरूंगी। सार्वलिगा ने यह बृतांत सदयवत्स को कहा। कुमार सबके साथ नगरी में आया और लीलावती से विवाह कर उसकी इच्छा पूर्ण की।

[इसी समय धर्मघोष नामक जैनाचार्य वहां पधारे और "थोड़ा बहुत भी धर्म जरूर ही करना चाहिये" ऐसा उपदेश देते हुये मृगांक की कथा कह सुनाई। सदयवत्स ने उसे सुनकर श्रावक धर्म स्वीकार किया।]

लीलावती को पितृगृह में रखकर सावलिगा के साथ कुमार आगे चला। रास्ते में एक पर्वत पर शिला से ढकी हुई गुफा देखी, दोनों नें कौतूहलवश भीतर प्रवेश किया तो उसमें ५ चोर बैठे देखे। चोरो ने सदयवत्स को अकेला देख उसे मारकर सावलिगा को ग्रहण कर लेने का विचार किया। उन्होंने द्यूत रमने के लिये सदयवत्स का आव्हान किया और जो हारे उसे मस्तक देना पड़े यह शर्त रखी गई। देवीके वरदानसे सदयवत्स जीता पर सज्जनतासे उसका शिर छेदन नहीं किया। इससे चोर प्रभावित हुए। और अदृष्टांजन, संजीवनी, रससिद्धि आदि विद्यायें देने को कहा पर कुमारने उन्हें नहीं लिया। फिर भी एक चोर ने गुप्तरूप से कुमार के उत्तरीय वस्त्र के छोर से पद्मिनिपत्र वेष्टित लक्ष मूल्य का कंचुक बांध दिया। चोरों ने यह भी कहा कि कभी आप संकट में पड़ जायें तो हमें स्मरण करते ही हम आकर आपकी सहाय करेंगे।

कुमार आगे चलते हुए एक निर्जन नगर में पहुंचा। राजभवन के समीप आने पर एक स्त्री का रोना सुन कर उसके पास जाके रोने का कारण पूछा। उसने कहा मैं नंद राजा की लक्ष्मी हूं, अनाथ होने से रो रही हूं, तुम मेरे स्वामी बन जाओ।

[नगर का निर्जन होने का कारण पूछने पर लक्ष्मी ने कहा कि इसे

वीरपुर नगर में एक तापस आया था। वह ब्रह्मचारी था। लोगों पर प्रभाव जमाने के लिये स्त्री का स्पर्श हो जाने पर बड़ा गुस्सा दिखलाने का ढोंग करता था। एक बार नगरी की वेश्या ने उसका स्पर्श किया, इससे उसने राजा के पास फरियाद की। वेश्या ने उसे ढोंगी बतलाया राजा ने उसकी परीक्षा के लिये उसे महल में लाकर रानी के संसर्ग में अधिक रूप से आने की व्यवस्था कर दी। रानी को देख कर वह कामातुर हो उठा और भोग के लिये प्रार्थना की। रानी ज़ोर से चिल्लाई तब राजा ने आकर तापस को मारडाला। वह तापस मरकर राक्षस हुआ और पूर्व भव के वैर से नगरी की यह स्थिति कर दी।]

लक्ष्मी ने कुमार को धन का ढेर पड़ा बतलाया। कुमार सावलिंगा से कहा कि यह धन अपने फिर कभी विधि विधानपूर्वक ग्रहण करेंगे। अभी तो प्रतिष्ठानपुर चलें। चलते चलते वे प्रतिष्ठान के समीप आ पहुंचे और पास के गाँव में एक ब्रह्मभट्ट के यहां जा कर ठहरे। ससुराल होने के कारण नगर-प्रवेश के लिये योग्य वस्त्राभूषण लाने एवं रचनादि की व्यवस्था करने के लिये कुमार अकेला नगर में जाने लगा तब सावलिंगा ने कहा कि यदि आप ५ दिन में वापिस नहीं लौटे तो मैं चिताप्रवेश कर लूंगी।

कुमार को नगर में प्रवेश करते हुए एक टूंटक मिला। कुमार उसे अपशकुन समझ कर वापिस जाने लगा। टूंटक को यह बात अखरी और वह पुष्प एवं खाद्यादि मांगलिक वस्तुओं को लेकर पास में आकर कहने लगा कि मैं सिंहल के राजा का सुरसुंदर नामक पुत्र हूं। कौतुकवश ५०० हाथी एवं करोड़ मोहर लेकर नगर देखने के लिये यहाँ आया था पर मैं उसको जूए में हार गया। जुवारियों ने मेरे हाथ कान भी काट डाले। दैव रूठता है वही जूआ खेलता है।

टूंटक के साथ कुमार ने नगर में प्रवेश किया। रास्ते में सूर्यप्रासाद में विवाद हो रहा था। विवाद का विषय यह था कि राज्यमान्य कामसेना वेश्या ने स्वप्न में देखा कि श्रेष्ठि दत्तक के पुत्र सोमदत्तने उसके

घर आकर उससे भोग किया। अतः सोमदत्त से अपनी द्रव्य मुद्रा रूप में गर्हित कार्यों की शुल्क लेने के लिये वेश्या ने अक्का भेजी। श्रेष्ठि ने-धन देने से इनकार किया। इसी कारण ३ दिन से विवाद चल रहा था कुमार को देख उसे इसका न्यायाधीश चुना गया। उसने श्रेष्ठि से कहा कि राजमान्य से विरोध करना उचित नहीं। अतः तुम इसे धन दे दो। कुमार ने श्रेष्ठि से धन मंगा कर उसका आधा भाग लेने के लिये अक्का को कहा पर उसने आधा लेने को स्वीकार नहीं किया। तव कुमार ने एक दर्पण मांग कर उसके सामने धन रख दिया और प्रतिबिम्बित धन लेने के लिये अक्का से कहा। क्योंकि स्वप्न एवं प्रतिबिम्बित अवस्था समान ही होती है। इस न्याय से अक्का लज्जित हो विलखती हुई लौट गई।

कामसेना यह वृत्ताँत जानकर नृत्य करने के वहाने सूर्य प्रासाद में आई और कुमार को देख कर मोहित हो गई। उसने कुमार को अपने घर चलने को कहा। टूंटक ने जाने का विरोध किया कि वेश्या किसी की नहीं होती। पर कुमार निर्भीकता से चला गया और ५ दिन उसके यहां रहा। कुमार नगर में जूआ खेलने गया और वहुत सा धन कमा लाया। उसमें से कुछ धन सार्वलिगा के लिये आभूषणादि खरीद करने के लिये टूटक को दे दिया वाकी वेश्या को दे दिया।

५ वें दिन कुमार ने वेश्या से जाने की आज्ञा मागी। वेश्या ने रहने का वहुत आग्रह किया पर कुमार को सार्वलिगा से बचनवद्ध होने के कारण जाना जरूरी था अतः रवाने हुआ। जाते समय वेश्या-ने कुमार का उत्तरीय वस्त्र खेंचा तो उससे चोर का बाधा हुआ पद्मिनीवेष्टित कंचुक खुल पड़ा। वेश्या ने वेष्टन खोलने पर रत्नमय कंचुक देख कर कुमार से मागा और उसने वह उदारतापूर्वक दे दिया।

वेश्या उसे पहिन कर राजसभा में जा रही थी, इसी समय एक सेठ ने कंचुक को देख, वह अपना चोरी गया था वही है यह निश्चय

कर राजा से इसकी फरियाद की। राजा द्वारा वेश्या को पूछने पर उसने कहा हमारे यहां अनेक चोरादि आते हैं मैं उनका नाम नहीं बतला सकती। तब राजा ने वेश्या को शूली की सजा का हुक्म दे डाला। कुमार ने जब यह बात सुनी तो वह शूली के स्थान पर पहुंचा और कोतवाल को जाकर कहा 'चोर मैं हूं, वेश्या को छोड़ दो" पर उसके नहीं छोड़ने पर जबरदस्ती उसे छुड़ा दिया, राजाने कुमार को पकड़ने के लिये अपनी सेना भेजी पर कुमार ने उसे भी हरा दिया।

उधर ५ दिन तक कुमार के न आने के कारण सावलिंगा ने चिता-प्रवेश की तैयारी कर ली। कुमार ने यह सुनते ही अपने बदले सोमदेव को वहां छोड़ वापिस आने की प्रतिज्ञा कर वहां पहुंचा। और सावलिंगा को जलने से बचाया। प्रतिज्ञानुसार कुमार शूलीस्थान पर वापिस आया राजा ने ५२ वीरों को कुमार से युद्ध करने के लिये भेजा। नारद से सूचना पाकर कुमार के पूर्व परिचित ५ चोर वहां सहायतार्थ आ पहुंचे अतः ५२ वीर भी हार गये।

राजा ने बल से काम निकालता न देख नम्रता से कुमार का नाम पूछा और उसके न बतलाने पर वेश्या से पूछा। तो वेश्या ने उसका नामाङ्कित खड्ग लाकर राजा को दिखलाया। राजा को छलने के लिये कुमार ने कहा इस तलवार को तो मैं सदयवत्स से जूए में जीता था। राजा ने उसे वश में करने को गजघटा बुलाई। उसे भी सिंहनाद द्वारा कुमार ने भगा दिया। अंत में राजा के अनुरोध से कुमार ने अपना वास्तविक स्वरूप प्रगट किया। तो राजा को उसे अपना जामाता ही जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई और अपने पुत्र शक्तिसिंह को भेज कर सावलिंगा को भी बुला ली।

अवान्तर कथा। कुछ समय तक दोनों वहां आनंदपूर्वक रहे। इसी समय सदयवत्स की मित्रता १ बनिक, १ क्षत्रिय एवं ब्राह्मण जाति के तीन व्यक्तियों से हो गई। इतने में ही एक विदेशी के मिलने पर कुमार ने पूछा कि कहीं कुछ कौतुक देखा हो तो कहो। उसने कहा तुम्बन नगर में धनपति सेठ के मृत पिता बहुत

समय हुए जला दिये गये थे, पर वे रात के समय जीवित अवस्था में घर पर आ जाते हैं। यह बड़ा आश्चर्य है। कुमार कौतूहलवश तीनों मित्रों के साथ वहां गया। तुम्वन में प्रवेश करते हुए एक ब्राह्मणकन्या को सीकोतरी पीड़ा दे रही थी,उसे छुड़ाकर उसका विवाह ब्राह्मण मित्र के साथ कर दिया।

आगे चल कर मित्रों सहित कुमार सेठ के घर पहुंचा। और अमुक धन लेने का तय कर वे उसके पिता का शव जलादेने के लिये स्मशान ले गये। उसे प्रातःकाल जलाने का निश्चय कर रात को १-१ प्रहर वारी वारी पहरा देने की कर ली गई।

पहली वारी वणिक की थी। पहरा देते हुए उसे एक स्त्री के रोने की आवाज सुनाई दी। वणिक शव को अपनी पीठ पर बाँध स्त्री के पास गया। और रोने का कारण पूछा। स्त्री ने कहा मेरा पति शूली पर लटका हुआ है मैं उसके लिये थाली में भोजन लाई हूं पर शूली के ऊंची होने के कारण उस तक पहुंच नहीं सकती। इसी दुःखसे रो रही हूं। वणिक ने करुणावश उसे पीठ पर चड़ा कर ऊंची कर दी। स्त्री ने ऊंची चढ़ कर शूली पर लटके हुए पुरुष का माँस खाना शुरू कर दिया। जब एक मांसखंड वणिकके ऊपर पड़ा तब उसने उसको नीचे डाल दिया। पड़ते ही वह स्त्री भागने लगी पर वणिक ने उसका पीछा कर एक हाथ काट डाला और उस हाथ को बालुका में डाल दिया।

दूसरे पहर में एक ब्राह्मण ने एक राक्षस द्वारा एक राजकुमारी को ले जाते हुए देखा। राक्षस को राजकुमारी से भोग की प्रार्थना करते देख पीछे से ब्राह्मण ने उसे मार डाला।

तीसरे पहर क्षत्रियकी वारी थी। शव को जलाने के लिये वह अग्नि लेने की खोज में निकला तो उसने भूतों को खीर पकाते देखा। उनके पास ७ पुरुष खिचड़ी के साथ साग की जगह खाने के लिये बंधे हुए थे।

क्षत्रिय पुत्र ने भूतों को डरा कर भगा दिया। और पत्थर मारकर खिचड़ी की हांडी को फोड़ डाला। बंधे ७ पुरुष राजकुमार थे।

चौथे प्रहर सदयवत्स उठा तो शव ने उसे जूआ खेलने को आह्वान किया। शव में रहे हुए वैतालने अपने बाहु प्रसारित कर एक राजमहल में से जूआ खेलने की सामग्री उठाकर ले ली। जो हारे उसका मस्तक छेदन कर दिया जाय। इस प्रतिज्ञा पूर्वक साथ वैतालको जीतकर कुमार ने शव को जला दिया।

प्रभात में श्रेष्ठि के पास जाकर पूर्व निश्चित धन मांगा। श्रेष्ठि ने कहा कल खातरी करके दूंगा। कुमार ने राजा के पास फरियाद की और रात का सारा वृतांत कह सुनाया। राजा के प्रमाण मांगने पर बालू में गढ़ा हुआ हाथ उपस्थित किया और वह हाथ रानी का होने से रानी सीकोतरी सावित हुई। राजकुमारी राजकुमारों को भी उपस्थित किया गया। श्रेष्ठि ने कुमार को अपनी कन्या व्याह दी।

सदयवत्स वहां से वापिस लौटते हुए निर्जन नगर को जिसे देख आया था वहाँ गया। वहाँ राक्षस की आराधना कर वीर कोट नामक नगर बसाया। सदयवत्स के लीलावती रानी से वनवीर और सावलिंगा से वीरभानु नामक पुत्र हुए।

[सदयवत्स ने चतुर्थी को संवत्सरी करने वाले जैनाचार्य कालकसूरि के हाथ से अपने वसाये नगर के जैनमंदिर की प्रतिष्ठा करवाई।]

इसी समय उज्जयिनी, जो कि अपनी मूल राजधानी थी, पर शत्रुओं के ६ महीने से घेरा डालने की बात सुन कर कुमार ने ससैन्य वहां जाकर शत्रुओं को परास्त किया। प्रभुवत्स राजा ने सदयवत्स को उज्जयिनी का राज्य दिया। वीरकोट का नवीन स्थापित राज्य राजकुमार को सौंप दिया गया।

[अन्यदा कालकाचार्य उज्जयिनीमें पधारे और पूछने पर सदयवत्स का पूर्वभव कह सुनाया कि तू विंध्याचल की पल्ली के गोत्रक नगर में व्याघ्र राजा की धारलदेवी रानी के गुण सुंदर नामक सरलस्वभावी

एवं दयावान पुत्र था। श्यामाचार्य के पास जीवदया व अभयदान का उपदेश श्रवण कर उसने सम्यक्त्व सहित श्रावकोचित १२ व्रत ग्रहण किये। गुणसुन्दर मुनियों को अन्नादि का दान और प्राणियोंको अभयदान देने में सदा तत्पर रहता था। एक बार उद्यान में क्रीडा करते हुए उसे ४ पुरुष मिले। उन्होंने कहा कि वैताल नगर में देवी के बलिदान के लिये हमें पकड़ा गया था पर हम वहां से भाग कर यहाँ आ गये हैं। वहाँ के लोग बड़े निर्दयी हैं और मनौती मानकर थोड़े से स्वार्थके लिये भैंसे और विशेष कार्य से मनुष्य तक की बलि दे देते हैं। गुण-सुन्दर का हृदय करुणार्द्र हो गया। अतः वहाँ जाकर बलि देनेवाले लोगों को भगाकर मनुष्यों को बचाया। और अपनी बलि देने के लिए कंठ पर तलवार का प्रहार करने लगा। देवी ने उसके धैर्य एवं साहस से प्रसन्न हो उसका हाथ पकड़ा। तब उसने देवी को प्रतिबोध देकर सदा के लिये बलिप्रथा बंद करवा दी। मृत्यु समय में आराधन करने से तुम इस जन्म में सदयवत्स हुए। जीव दया व अभयदान के पुण्यसे प्रबल पराक्रम और मुनि दान के फल से सब प्रकार के भोग प्राप्त किये। अपना पूर्व वृतान्त सुन सदयवत्स को पूर्व-भव स्मरण हो आया।

राजस्थानी रूपांतर-राजस्थान में प्रचलित सदयवत्स कथा में केशव की प्रति सबसे प्राचीन है। अतः तुलनात्मक विचार करने के लिये यहाँ उसका सार दे दिया जाता हैं।

पूर्व दिशा के कोंकण देशस्थ विजयपुर में महाराजा महीपाल राज्य करते थे। उनका पुत्र सदयवच्छ था। राजा के मंत्री सोम के सावलिंगा नामक पुत्री थी। योग्य वय होने पर महाराजा ने पंडित को बुला विद्याध्ययनार्थ कुमार को उसके सुपुर्द कर दिया। इसी प्रकार मन्त्री सोम ने सावलिंगा को भी पढ़ाने के लिए उन्हीं की पाठशाला में भेज दिया। और उसे पाठशाला के छात्रों से अलग रखकर पढ़ाने का निर्देश कर दिया।

सावलिंगा की पढ़ाई परदे में होने लगी। राजकुमार के पूछने पर

पंडितजीने उसके परदे में पढ़नेका कारण उसका अन्धी होना बतलाया। और कुमारी को कुमार का कोढ़ी होना कह दिया जिससे परस्पर कोई सम्बन्ध न हो सके। एक दिन किसी कारण से पंडितजी नगरमें गये थे और सबको पढ़ाने का काम कुमार को सौंप गये। पढ़ते हुए परदे में स्थित कुमारी ने कोई पाठ अशुद्ध बोला। तब कुमार ने कहा 'अन्धी! अशुद्ध क्यों बोल रही हो?' प्रत्युत्तरमें कुमारीने कहा--कोढ़ी! जैसा पाटी में लिखा है वैसा ही पढ़ रही हूं।' कुमार का भ्रम इस उत्तर से दूर हो गया। उसने सोचा गुरुजी के कथनानुसार कुमारी यदि अन्धी है तो पाटी पर लिखा वह पढ़ने की बात कह नहीं सकती,और मुझे कोढ़ी कहने का कारण भी क्या ? अतः हम दोनों एक दूसरे को देख न सकें इसीलिये गुरुजी ने भ्रम फैला रखा है। भ्रम दूर होते ही कुमार को कुमारी के देखने की उत्कंठा बढ़ी। और एक दूसरे को देख करके प्रेमसूत्र में बंध गये। फिर परस्पर दूहा-गूढ़ादि लिखते व कहते रहने के द्वारा प्रीति दृढ़ होती गई।

गुरुजी के बाग में खेत थे। उसकी रखवाली के लिये बारी २ से शिष्य वहां जाते थे। नियमानुसार सदयवच्छ अपनी बारी पर खेत पहुंचा और सावलिंगा उसे भाता (भोजन) देने खेत गई। वहाँ एकान्त होने से प्रीति विशेष रूप से दृढ़ हो गई। सावलिंगा ने किसीके भी साथ विवाह होने पर पहली रात उसके साथ रमण का वादा किया।

शिक्षा समाप्त होने पर यौवनावस्था देख, राजा ने सदयवच्छ का विवाह किसी राजकन्या से कर दिया। और सावलिंगा के पिता ने भी कुमारी की अवस्था विवाहयोग्य जानकर, ब्राह्मण को भेजकर पुष्पावती के सेठ धनदत्त से उसका सम्बन्ध निश्चत कर दिया। सदयवच्छ यह जानकर वेश्या के कथनानुसार स्त्रीवेष में कुमारी से उसके घर जाकर मिला। तब उसें देवी मन्दिर में मिलने का कुमारी ने संकेत किया।

निश्चित समय पर पुष्पावती सें धनदत्त आया और उसके साथ सावलिंगा का विवाह हो गया। सदयवच्छ के साथ अपनी पुरानी प्रीति

एवं वचन निवाहने के लिये देवी मन्दिर में अपनी पूर्व मनौती पूर्ण करने को पति से आज्ञा लेकर वहां पहुंची।

सदयवच्छ ने उस दिन दूना नशा कर लिया और देवी के मन्दिरमें जाके सो गया। नशे की अधिकता से उसको इतनी प्रगाढ़ निंद्रा आगई कि सावलिंगा ने उसे जगाने के लाख प्रयत्न किये पर सब निष्फल गये। तब निराश होकर वह अपने घर लौटते समय अपने आने के सूचक चिन्ह एवं फिर मिलने का संकेत-सूचक दूहा कुमार के हाथ पर लिख दिया।

निद्राभंग होने पर कुमार नें सावलिंगा के न आने का बड़ा अफसोस किया। दतौन के समय हाथ की ओर देखने पर कुमार ने हाथ पर उसका लिखा हुआ दूहा पढ़ा। और अपनी गलती महसूस कर,योगी होकर दोहे की सूचनानुसार पोहपावती नगर पहुंचा। रास्ते में हाथ का लेख नष्ट न हो जाय अतः बावड़ी में पशु की भांति मुंह सें पानी पिया। इस प्रसंग में पनिहारियों सें वातचीत करते हुए कुंभारिन से पता लगा कर वह धनदत्त सेठ के घर पहुंचा और सावलिंगा से चार आँख होने पर दोनों अधीर हो उठे।

उस समय सावलिंगा ने अपने पति को कहकर नया महल या मंदिर बनानेका काम शुरू कर रखा था। सदयवच्छ उसीके निर्माण-कार्यमें मजदूरी करने लगा। एक बार जोगीका वेष धारण कर भिक्षा लेने सावलिंगा के घर गया, जब उसने अन्य किसीके हाथ से भिक्षा न ली, तब साव-लिंगा देने आई और पुनः चार आँखें होंने पर स्तम्भित से हो गये।

राजगवाक्षमें बैठी हुई राजकन्या नें यह स्वरूप देख उपालंभ सूचक दोहे कहे। इन दोहों को सुनकर कुमार नाराज होकर चला गया। राज-कन्या ने सावलिंगा से मिलकर दोनों का प्रेम-सम्बन्ध ज्ञात किया।

इधर सदयवच्छ नें सैन्य संग्रह कर पुहुपावती के राजा भोज को राजकन्या देनेका कहलाया। और उसके न मानने पर युद्ध कर,उसे हरा दिया। तब भोज ने अपनी कन्या का विवाह उससे कर दिया। कर-

मोचन के समय कुमार ने अन्य वस्तुयें न लेकर धनदत्त सेठ को बांधकर मंगवाया और उससे सावलिंगा देने का स्वीकार कराके छोड़ दिया।

सावलिंगा और सदयवच्छका युगल जोड़ा मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ। कुछ दिन वहां रहने के पश्चात् सपरिवार अपनी नगरी लौट राज्यपालन करता हुआ विलास करता रहा। सावलिंगा आदि रानियोंके साथ विषय-सुख भोगते हुए उसके ४ पुत्र हुए। यहीं कथा की समाप्ति होती है।

कथा के विविध रूपांतर-उपर्युक्त कथा में प्रेम और विरह प्रधानतः है, अर्थात शृंगाररस प्रधान हैं। सावलिंगा ने भी अपनी प्रीति व वचन निभाया। इसके परवर्ती रूपांतरों में सदयवच्छ की नगरी का नाम किसी में मुंगीपुर किसी में आनन्दपुर और किसी में पुहुपावती मिलता है। उसके पिता का नाम सालिवाहन व महीपाल, माता का नाम कहीं चंपकमाला कहीं सौभाग्यसुन्दरी, एवं गुरु का नाम सगुण महात्मा लिखा है। सावलिंगा के पिता का नाम पदमसन, कहीं पदमसेठ, और माता का नाम लीलावती लिखा है विद्याध्ययन के लिये गुरु के पास कहीं सावलिंगा पहले गई और कहीं पीछे, ससुराल का स्थान धारानगर ससुर का नाम हीरा, पति का नाम रतनपाल एवं वहां राजा का नाम विजयपाल लिखा है। पुहपावती में सदयवच्छ के पहुंचने पर कई कथानकों में घर में आग लगा कर सावलिंगा का बगीचे में उससे जाके मिलना, कहीं वहाँ भी सदयवत्स का नहीं पहुंच सकना लिखा है। वहाँ के राजा का नाम कहीं भिन्न ही लिखा है और उसकी कन्या के विवाह का कारण कन्या का सावलिंगा से अनुराग हो जाना बतलाया है। कहीं स्वयंर विधि से उसके साथ विवाह होने का उल्लेख हैं। कई रूपांतरों में सदवच्छका अपने नगर लौटने का कारण पिता अन्वेषण कर बुलवा भेजना लिखा है। और भी कई घटनाओं में अंतर व कमीवेशी पाई जाती है। अर्थात अनेक व्यक्तियों की सूझबूझ से इस कथा में बहुत कुछ समय समय पर जोड़ा एवं रूपांतरित किया गया है।

कई कथानकों के प्रारंभिक भाग में उसके पूर्वभव का प्रसंग देकर

प्रीति का प्राचीन सम्बन्ध होना व्यक्त किया है। एक रूपांतर में अन्य अनेक कथानकों की भाँति शिव पार्वती का प्रसंग भी जोड़ दिया गया है।

कथारूपों में भिन्नता-अब गुजरात और राजस्थानी संस्करण में मुख्य रूप से जो अन्तर है उस पर प्रकाश डालता हूं।

(१) गुजराती संस्करण वीर एवं अद्भुतरस प्रधान है राजस्थानी शृंगार प्रधान है।

(२) गुजराती संस्करण में कई घटनायें हैं। तब राजस्थानी कथा में घटनाओं का प्राधान्य व अधिकता नहीं है, पर प्रेम सम्बन्धी कथन ज्यादा हैं।

(३) गुजराती संस्करणानुसार सावलिंगा सदयवत्स की विवाहिता पत्नी है, तब राजस्थानी संस्करणानुसार वह रत्नपालकी विवाहिता पत्नी और सदयवत्स की प्रेमिका है।

(४) गुजराती संस्करणानुसार सदयवत्स उज्जैनी के राजा प्रभुवत्स का पुत्र है तब राजस्थानीके अनुसार विजयपुर, आणन्दपुर, मुंगीपुर, या पुहपावती के राजा महिपाल या सालिवाहन का पुत्र है।

(५) गुजरात एवं राजस्थान में प्रचलित आधुनिक कथानक मिलता जुलता हैं अर्थात-गुजरात में भी प्राचीन कथानक को अब भुला दिया गया प्रतीत होता है-। इनमें पूर्वभवों के प्रेम सम्बन्धों की कथा ७।८ भवों तक बढ़ चुकी है।

शृंगारप्रधान कथानक-कीर्तिवर्धन की 'सदयवत्स चउपई' और मारवाड़ राजस्थान के अन्यान्य गद्य पद्यात्मक 'सदेवंत सावलिंगा' नाम के कथानकों में प्रधान रूप में शृंगार रस पाया जाता है।

सदयवत्स कथा एवं दो परिपाटी-राजस्थान की अनेक प्रसिद्ध लोककथाओं में "सदयवत्स सावलिंगा" की प्रेमकथा का कई शताब्दियों तक राजस्थान में सर्वाधिक प्रचार अधिक लम्बे समय तक

रहा है। इस कथा की अनेक प्रतियां एवं विविध रूपांतरों की उपलब्धि इस कथन का समर्थन करती है।

सदयवत्स कथा के विविध रूपाँतरों के अभ्यास से जाना जा सकता हैं, कि उस लोककथा का मुख्यतः दो प्रवाहों में विकास हुआ है। भीम कवि का गुजराती 'सदयवत्स वीर प्रवन्ध,' एवं हर्षवर्धनके संस्कृत 'सदयवत्स चरित्र' के गद्य कथानक की परिपाटी वीर रस से प्रेरित चली आ रही है। तो राजस्थानी पद्यात्मक एवं गद्य पद्यात्मक सभी प्रकार के कथानक शृंगार-रस-मूलक होने के नाते उससे बहुत ही भिन्न रहे हैं।

पंजाब एवं उत्तर प्रदेशमें उल्लिखित 'सदयवत्स कथानक' का केवल नामोल्लेख के अलावा विशेष कुछ भी ज्ञान अभी तक प्राप्त हुआ नहीं है।

सदयवत्स चउपई-राजस्थानी रूपांतरों में सबसे प्राचीन रचना खरतरगच्छीय जैनकवि केशव, अपर (दीक्षित) नाम कीर्तिवर्धन रचित "सदयवत्स सावलिंगा चउपई" है। इसकी रचना वि. सं. १६९७ के विजयादशमी को प्रथमाभ्यास के रूप में की गई है। किंतु जान ऐसा पड़ता है कि वास्तव में यह चउपई भी कवि की स्वतंत्र रचना न होकर जनता में प्रसिद्ध दोहे आदि पद्यों को अपने धागेसे माला बनाने के रूप मे पिरोये हों ऐसे, संकलन सा दिखाई देता है। राजस्थानी भाषा के पिछले सभी रूपांतर प्रायः गद्य पद्यात्मक रूप में ही हैं। जिनमें से कुछ रचनाओंमें दोहे हैं, गद्यांश कम हैं। तो कुछ में गद्याँश बहुत विस्तृत है। कीर्तिवर्धन ने अपनी रचनाकृति में बीच बीच में अपने पद्यों के साथ २ प्रचलित पद्यों को भी यथास्थान जुटा दिये हैं।

गद्यपद्यात्मक रूपांतर-राजस्थान की गद्यपद्यात्मक 'सदयवत्स कथा' सचित्र रूप में भी मिलती हैं। अतएव वह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'सदयवत्स सावलिंगा री कहा' गुजरात में आबाल वृद्धों में ज्ञात है। उनके आठ भव के प्रेम एवं वियोग की कथायें स्त्रियां भी बड़े चावसे

पहले भव की कहानी ब्राह्मण-ब्राह्मणी-धारापुर नामका एक देहात था। उस गांव में दो ब्राह्मण रहते थे। दोनों निःसन्तान थे। जिससे उन्होंने वनमें जाकर तपश्चर्या की। ब्रह्माजी प्रसन्न हुए दोनों को वर दिये। एक को पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ दूसरे को पुत्री-रत्न की प्राप्ति हुई। योग्य उम्र होते ही इन दोनों की शादी हो गई। युवक शादी के बाद विध्याध्ययन करके घर वापस आ रहा था। रस्ते के बीच में ससुरसे भेंट हुई वह जामाता को अपने घर ले आया। कुछ दिनों तक वह ससुराल में रहा। और बाद में ये दोनों पति पत्नी (युवक-युवती) अपने घर जाने के लिये निकल पड़े।

किंतु रास्ते में ऐसी घटना घटी कि इन दोनों की तृषातुर अवस्थामें मृत्यु हुई। पार्वतीजी ने भगवान शंकर से प्रार्थना की कि प्रभु इस जोड़ी को जिन्दा कीजिये। तो शंकर भगवान ने कहा कि अब ये लोग कृपा करने के योग्य नहीं हैं। फिर भी पार्वतीजी ने हठाग्रह धारण किया और उन्हें जिन्दा करवाया।

यौवन के मद में मस्त बने हुए ये भट-भटाणी एक शिवालय में आये। विषयवासना बढ़ गई, इसकी तृप्ति करने के लिये देवल में जो शिवजी का लिंग (मूर्ति) था उसको उखाड़कर कहीं बाहर फेंक दिया और अपनी मनोवांच्छा पूर्ण की। इस अयोग्य और नराधम कृत्यसे भगवान शंकर क्रोधित हो गये और श्राप दिया कि तुम्हें सात भव (अवतार) तक वियोग सहना पड़ेगा।

शंकर भगवान का श्राप सुनकर ये दोनों काशी में करवट लेने के लिये निकल पड़ें। रास्ते में एक गांव आया भट। (युवक) खुराक की तलाश में गया। जब वापस आया तब देखा तो पत्नी का पता नहीं था। अब क्या करें। इसलिये उसने काशी (वाराणसी) जाकर गले पर करवट लगवा दिया और मौत के शरण हो गया।

जब भट्ट खुराक की तलाश में गया था, उस समय वहां एक राजा आया और भट्टाणी का अपहरण कर गया। वह स्त्री रात्रि के समय

चुपचाप राजा के पंजे में से छुटकर निकल पड़ी। और उसने भी काशी (वनारस) की राह पकड़ी। और गले पर करवट लगवा दिया। इस लोक को छोड़कर चली गई।

कहानी दूसरी, चकवा-चकवी-किसी एक जंगल में एक पेड़ पर एक चकवा और चकवी रहते थे। उसी जंगल में एक बार अचानक अग्नि संचार हो गया। दावाग्नि का भीषण कांड शुरू हो गया। और जिस वृक्ष पर ये दोनों पंछी रहते थे यह वृक्ष भी जलने लगा। किंतु दोनों को ऐसा लगा कि हमें आश्रय देने वाला वृक्ष जल जाय और हम यहांसे भाग छूटें। यह बात ठीक नहीं है। ऐसा विचार करके ये दोनों पंछी भी दावाग्नि में आग के शोलों से जलकर भस्म हो गये-मर गये।

कहानी तीसरी, हिरन और हिरनी की-एक जंगल था। वहां एक हिरन एवं हिरनी रहते थे। ये वन में घूमते थे और अपना गुजर-वसर करते हुये आनन्द में जीवन व्यतीत करते थे। उस जंगल में एक बार एक पारधी आया उसने हिरनी को फँसा दिया, हिरनी ने वहुत आक्रंदन किया। हिरनीका आक्रंदन सुनकर उस शिकारीके मन में दया उमड़ पडी। उसने हिरनी को मुक्त कर दी। अब तो हिरनी अपने पति हिरण की खोज में निकल पड़ी। किंतु रास्ते में एक पहाड़ के पास हिरन को मृत अवस्थामें पाया। हिरनकी मृत्यु देखकर उसने भी अपना शिर पटककर मृत्यु से भेंट की। वह भी चल वसी।

कहानी चौथी, मयूर ढेलणी-इस कहानी के वारे में कुछ लिखा गया प्राप्त नहीं होता।

कहानी पाँचवी, हंस और हंसी की-हंस एवं हंसी की एक जोड़ी जंगल में रहती थी। उसकी रहने की जगह पर एक वार एक साँप आया। और उनको निगल जाने लगा। किंतु दैवसंजोग से उनके कर्णपट पर भगवान का नाम सुनाई पड़ा। दोनों की मृत्युन्हुई। किंतु इस पुण्य के प्रभाव से अगले जन्म में (भव में) ये दोनों राजा एवं रानी के रूप में अवतरित हुये।

पड़ती हैं। उपलब्धि प्राचीन राजस्थानी काव्य ग्रंथों में पूर्ववर्ती केवल १-२ एक या दो भव की कथा का वर्णन पाया जाता है। आठ भव की कथा का सम्बन्ध पीछे से जोड़ा जुटाया गया प्रतीत होता है।

कथा द्वारा जैन मतका प्रचार एवं प्रसार सदयवत्स कथा का संस्कृत गद्य रूप कि जो गुजराती कथानक से प्रेरित होना प्रतीत होता है, उसके रचयिता हर्षवर्धन ने इस लोक-कथा को अन्य जैन विद्वानों की भांति ही जैन स्वांग या चोला पहना दिया जान पड़ता है। जैसे कि सदयवत्स ने अपने बसाये हुए नगर में वीर जिनेश्वर के मन्दिर की प्रतिष्ठा चतुर्थी की संवत्सरी मनाने वाले कालकाचार्य के हाथों से करवाई है। जैन कवि ने जैनाचार्य कालक के साथ उसका सम्बन्ध जोड़ा जुटाया है। जिसने सदयवत्स को इसके पूर्वभव की कथा सुनाई उससे सदयवत्स को जाति-स्मरण तब हुआ। हर्षवर्धन के उल्लेख के अनुसार सदयवत्स ने श्रावक-धर्म स्वीकार किया था। किन्तु, केशव (कीर्तिवर्धन) ने उसे राजस्थान में प्रचलित लोककथा के रूप में ही रहने दिया है।

परिशिष्ट १-में-प्रकाशित 'सदयवत्स सावलिंगा पाणिग्रहण चउपई' की रचना किस कवि ने की है उसका उल्लेख अप्राप्य है। प्रायः उसका रचयिता जैन होना सम्भव है। कवि ने किसी प्राचीन चरित्र के आधार पर यह रचना की है। पाणिग्रहण अधिकार के प्रथम अधिकार होने का उस चउपई में उल्लेख है। जैसे कि 'ए पहिलु हुउ अधिकार, कवि जोई चरित्र आधार'। इसकी भाषा १६ वीं शती के अंत भाग की अथवा १७ वीं के प्रारम्भ के होना सम्भव है।

कवि केशव की रचना-केशव कवि की 'सदयवत्स सावलिंगा चउपई' की रचना (परिशिष्ट २) विप्रलंभ शृंगार रस में ही भरपूर है। इसमें जो छंद हैं दूहा (दोहे), चंद्रायणा, एवं कवित्त, मनोवेधक है। एवं सुभाषित, अन्योक्ति, अर्थान्तरन्यास, कहावतें, और मुहावरों के द्वारा काव्य रसपूर्ण बनाया है। कवि ने कडी ४५४, ४५५, ४५८, में वस्तु-निर्देशात्मक मंगलाचरण किया है। (पृ० १३५) और अंत में फल

श्रुति दी है।

पूर्वभव का कथानक-संस्कृत कथानक में पूर्वभव की कहानी दी गई है। वह कीर्तिवर्धन की चउपई में नहीं है। सदयवत्स एवं सावलिंगा के प्रेमी युगल का सम्बन्ध नायक एवं नायिका के रूप में है। इसमें पराक्रम की कोई भी बात नहीं है। केवल पुष्पावती के राजा को पद-दलित करके, सावलिंगा को सदयवत्स प्राप्त करता है. इतने पराक्रम का ही उल्लेख है। परन्तु इसमें कुछ अद्‌भुतता नहीं दिखाई देती। सदय-वत्स शौर्यवीर के रूप नहीं दिखाई देता, किंतु प्रेमवीर के रूप में दृश्य-मान होता है।

सदेवन्त सावलिगा के आठ भव की कहानी-कवि या लेखक-इस कहानी के रचयिता का पता नहीं चलता।

कथानक का प्रारम्भ जगन्माता पारवती जी ने बनलीला देखने का हठाग्रह किया। इसलिए भगवान शंकर उनको साथ में लेकर बनसें चल आये। रास्तेमें एक नारियल नामक प्राचीन वाव देखने में आयी। तृषा लगी हुई थी जिससे पार्वती जी ने भगवान शंकर से पानी लाने के लिये प्रार्थना की। शिवजी ने प्रार्थना सुनकर पानी लाकर दिया। सती उमा पानी पीने की तैयारी करती है कि वहां शिर उठाने पर एक नर एवं मादा वंदर की जोड़ी देखी। पार्वती ने भगवान शंकरसे पूछा कि ये वन्दर कौन से विचार में इतने मग्न हो गये हैं। शिवजी ने उत्तर दिया कि यह बात बहुत लम्बी चौड़ी है, छोड़ दो इसे। उत्तर सुनकर यह रूठ गयी, और मारे क्रोध के जब भगवान शंकर के शिर के बालों में छुप गई। तब आखिर में शिवजी वह वात सुनाने के लिये तैयार हो गये।

अष्ट भव के नाम-(१) ब्राह्मण-ब्राह्मणी (२) चकवा-चकवी (३) हिरन-हिरनी (४) मयूर-ढेलणी (५) हंस-हंसी (६) राजा-रानी (७) वंदर-वंदरी, और बाद में (८) नर-नारी

कहानी छटवीं राजा और रानी-एक नगर था उसका नाम देयपुर। वहाँ के राजा का नाम था सालवाहन और रानी का था दुर्मति उनके पुत्र का नाम था वल्लभ।

एक दूसरा रायपुर नाम का नगर था। वहां सुव्रत नाम का राजा था। उसकी गुणवन्ती नाम की एक कन्या थी। उसके पिताने उसका विवाह संबंध किया था वल्लभ के साथ। किंतु उसकी मां भाई और चाचाजी ने अलग २ स्थान एवं अलग २ व्यक्तियों के साथ सगाई कर दी थी। खूबी यह थी कि इन सब रिश्तेदारों ने शादी की तिथि जो निश्चित की थी वह एक ही थी।

शादी के दिन चारों वर बरात लेकर सजधज के साथ आ गये। राजकुमारी आश्चर्य में पड़ गई। शादी किसके साथ की जाय। क्योंकि यहां तो एक के स्थान पर चार चार वर आये हैं। इससे उसके मनमें बहुत दुःख हुआ। अपनी जिंदगी पर नफरत आयी और वह अग्नि में जल गई। दुनियां से विदा ली।

शादी करने के लिये जो यहां चार वर आये थे। उनमें से एक वर ने कुंवरी की मृत्यु से अपनी बलि देदी। दूसरा कहीं भाग गया। तीसरे ने उसकी हड्डियों की राख गंगाजी में बहा दी। चौथा वल्लभ था उसने उसका पिंडदान दिया और पिंड भक्ष्य करने लगा।

जो व्यक्ति भागकर दूर देश चला गया था। उसके हाथमें अकस्मात एक अमृत का घट आ गया। उसको लेकर वह जिस जगह पर राजकुमारी जल गई थी, वहां आया। और राख के ढेर पर अमृत का सींचन किया। फलस्वरूप वह राजकुमारी एवं उसके साथ जलजानेवाला राजकुमार दोनों जीवित हो गये। बाद में चारों के बीच में लड़ाई शुरू हो गई।

इन लोगों ने इस लड़ाई का फैसला करने के लिये एक पंच चुना। और पंच से न्याय करने की प्रार्थना की। क्योंकि पंच में परमेश्वर का निवास है। पंच ने सारा हाल सुन लिया। बाद में फ़ैसला दिया कि

राजकुमारी को जिसने जिन्दा किया है वही उसका पति हुआ। नदी में राख बहानेवाला पुत्र हुआ। कुंवरीके साथ जलजानेवाला तथा उसके साथ फिर जन्म लेनेवाला उसका भ्राता होगा। और वल्लभ को उसका हकदार पति ठहराया गया। यों आखिर में राजकुमारी की शादी वल्लभ के साथ हुई।

विवाह के बाद कुछ समय पश्चात् ये दोनों एक वार एक जंगल में सैर करने निकले। वहाँ एक वाघ (शेर) आया। वह राजकुमार का भक्षण कर गया। राजकुमारी उसकी खोज में घूमती थी। इतने में वहाँ एक चोर आया उसने इस कुमारी को लूट लिया। उससे सब कुछ ले लिया। इससे दुखित होकर इस स्त्री ने एक कुए में गिरकर आत्म-हत्या कर ली। दूसरे भव में ये दोनों वंदर एवं वंदरी के रूप में अवतरित हुये।

कहानी सातवी बंदर और बंदरी- एक जंगल में वंदर और वंदरी रहते थे। वहाँ से एक दिन शिव जी और पार्वती जी गुजरे। उस समय पार्वती ने वंदर-बंदरी की जोड़ी देखकर भगवान शंकर से पूछा कि उनके सम्बन्ध में क्या बात है। तो शिवजी ने उनके गत जन्मों की (भवों की) बातें कह सुनाईं। बात सुनकर सती पार्वती जी ने उनको फिरसे मनुष्यावतार देने के लिये अनुरोध किया। प्रार्थना की। तो भगवान शंकर ने कहा कि "इस मुहूर्त में यदि यह वंदर एवं वंदरी इस वाव में गिर जाय तो मनुष्य रूप प्राप्त होगा।"

वंदरी ने यह बात सुन ली। और पतिदेव बंदर को भी अपने साथ इस वाव में गिर जाने को कहा। किंतु बंदर ने न माना, बंदरी की बात को स्वीकार न किया। बंदरी अकेली वाव में गिर पड़ी। तो शिवजी के वरसे (कथनानुसार) यह बंदरी एक सुंदर स्त्रीके रूप में पलट गई। बंदर अब पछताने लगा किंतु अब पछताने से क्या होवे, "जब चिड़िया चुग गई खेत।" यह पुण्य क्षण तो अब व्यतीत हो चुकी थी।

इसी समय हीरासेन नाम का एक राजा अपने प्रधान के साथ वहां

आ पहुंचा वहाँ उसने इस रूपसुंदरी को देखा। वह प्रसन्न हुआ। और उस सुंदरी को रथ में बैठाकर अपने साथ ले चला। बंदर वन में फल लेने गया था। वह वापस आ गया। स्त्री को न देखकर वह रथ के पीछे हो गया। रानी राजा से प्रार्थना की कि इस बंदर को भी साथ में ले चलिये। राजा ने स्वीकार किया। बंदर को भी साथ में ले लिया गया। स्त्री ने छः महीने के बाद राजा के साथ शादी करने का बादा किया।

राजा नगर में आ गया। राजा ने इस बंदर को सुवर्ण की शृंखला से बाँध रखने की व्यवस्था की। राजा की जो एक सम्मानित रानी थी। उससे मिलने के लिये राजा जाता था। किंतु उस रानी से मिलने में बंदर रुकावट डालता था, रानी से नहीं मिलने देता था। इसलिये उसने रानी के बंदर का घाट घड़ने को युक्ति सोच ली। किसी भी तरह से उसका इलाज खोलना चाहिये। तरकीब की गई।

उस रानी ने इस बंदर को एक मदारी के हवाले किया। इस कृत्य से रूपसुंदरी एवं बंदर दोनों अप्रसन्न हुए, आखिर में रूपसुंदरी ने इस मदारी को फिर एक बार आकर अपना तमाशा दिखा जाने के लिये कहा।

छः महा की अवधि बीतने के पहले मदारी वहाँ फिर से आया उसने अपना खेल शुरू कर दिया। इसी बीच में रूपसुंदरी ने अपना अमूल्य हार तोड़ दिया। मदारी ने उस हार के मोती (मोक्तिक) बीनकर इकट्ठे कर देने के लिये बंदर को मुक्त कर दिया। उस बंदर ने राजा की माननीया रानी से वैर लेने के लिये फलांग लगाई, किंतु वह निशाना चूक गया और मृत्यु के शरण हो गया। बंदर की मृत्यु होते ही रूप-सुंदरी ने भी अपने प्राण त्याग दिये और मर गई।

बंदर दूसरे भव में सदेवंत हुआ। सुंदरी सावलिंगा हुई। शादी की अभिलाषा रखनेवाला राजा हीरासेन धारानगरी के पदमशा सेठ के पुत्र रुपाशा के रूप में अवतरित हुआ। और प्रधान, लाल ब्रह्मभट हुआ मदारी गोरख साधु हो गया।

कहानी ८ वीं सदयवत्स और सावलिंगा- [illegible]

नामक एक राजा था उसके पुत्र का नाम सदयवत्स था । उस नगर के नगरसेठ पदमशाह के सावलिंगा नाम की लड़की थी । वह रूप की अंबार थी । मानो रूपराशि वहां खड़ी हुई हो । उसके रूप लावण्य या सौंदर्य को देखनेवाले मोहित हो जाते, फीके भी पड़ जाते । अधिक सुंदरता के कारण उसका नाम रोशन हुआ । उसके अनुपम सौंदर्य की बाते सदयवत्स ने भी सुनीं, इससे वह उसको देखने के लिये आकुल-व्याकुल हो गया था । मन भी अधीर हो गया था ।

एक बार एक गोरख नाम का साधु भिक्षा के लिये उस नगर के, नगरसेठ पदमशाह के घर पर आया । उसने लड़की सावलिंगा को देखा, और देखकर वह मोह के कारण मूर्छित हो गया । इतने में उसका गुरु भी वहां आ पहुंचा । और उसको वहां से ले गया, इस गड़बड़ी में सदयवत्स भी वहाँ आ गया । और उसने अपने मित्र लाल बारोट (ब्रह्मभट) से पूछा कि यहां सावलिंगा कौन है और कहां है ?

ब्रह्मभट लाल ने उत्तर दिया कि अगर सावलिंगा के दर्शन करने हैं तो यह कार्य यहाँ नहीं बनेगा । किंतु एक रास्ता है कि आप उस स्थान पर चले जाइये कि इस नव डेरी पर सावलिंगा गीत गरबी गाने के लिये जाती है, वहां आप जावेंगे तो दर्शन होंगे । सदयवत्स वहां पहुंच गया । वह स्त्रीमंडल के बीचमें जाकर खड़ा हो गया । और सावलिंगा से कहा कि "अरी तूं तेरे घूंघटका ओजल दूर कर दें और तेरा मुखचंद्र दिखा दें ।" तब सावलिंगा ने उत्तर दिया "कि मैं जिस शालामें पढ़ती हूं उस शाला में आना ।"

यद्यपि सदयवत्स सदेवंतकी पढ़ाई खत्म हो गई थी । फिर भी पिता-जी से आज्ञा पाकर वह शाला में गया । किंतु वहाँ मेहत्ताजी के भय से सावलिंगा ने उसको समझाया कि अगले दिन चंपाबाग में प्रीतिभोज का प्रबन्ध करो । उसमें मेहत्ताजी को भी आमंत्रण भेज दो

इससे हम मिलेंगे और शांति से बातें करने का मौका भी मिल जायगा।

दूसरे दिन गुरुजी को आमंत्रण भेजा गया। इससे वह चंपाबाग में भोजन करने गये और सभी बच्चों को निकाल दिया और बाद में इन दोनों ने एकान्त पाकर प्रेम से अनेक बातें कीं। दृष्टि से दृष्टि मिली और बातें करके तृप्त हुए।

किंतु यह सब प्रेम-विषयक बातें गुप्त न रह सकीं, प्रकट हो गईं। गुरुजी को भी जानकारी प्राप्त हुई तो वे दौड़ते वहां आ गये। तब दोनों शर्मिंदे होकर वहां से चल दिये और जाते समय निश्चय किया कि दूसरे दिन सदयवत्स गुरुजी के बगीचे की रखवाली करने को जाय, और सावलिंगा गुरुजी की आज्ञा से उसको भोजन देने जाय। निर्णय के अनुसार सदेवंत ने गुरू जी से कहा कि आप सावलिंगा को भोजन देने के लिये आज्ञा देने की कृपा कीजिए ताकि आपके बगीचे की रखवाली करनेवाला भूखों न मरे। गुरुजी ने स्वीकृति देदी। और सावलिंगा को आज्ञा दी गयी। तो सावलिंगा भोजन में बत्तीस प्रकार की सामग्री लेकर वहां गयी बात कही गयी थी भात चावल देने की किंतु वह तो भाँति भांतिके उत्तम खाद्य पदार्थों की सामग्रियां लेकर गयी। अधिक प्रणयकलह के बाद सदेवंत एवं सावलिंगा ने भोजन किया। दोनों ने आपस में या परस्पर प्रेम टिकाने का निभाने का वादा किया।

प्रतिदिन दोनों एक तोते के द्वारा प्रेमपत्र लिखकर परस्पर भेजते हैं। सावलिंगा के पिता पद्मशाह सेठ ने लड़की की शादी फौरन करने के लिए निश्चय कर दिया। और रूपशाह एक बड़ी बरात लेकर बड़े सजधजके साथ शादी करनेके लिये यहां आ भी गया।

सावलिंगा ने सदेवंत से संदेश भेजा कि आप स्त्री का भेष लेकर मेरे महल में आ जाना। सदेवंत भेष बदल कर वहां महलमें आया किंतु वहाँ उसकी लीलावती नाम की ननद आ धमकी। जिससे इन दोनों में बातें न हुईं। इससे सावलिंगा ने सदेवंत से कहा कि रात को भगवान शिवजी के मंदिर में आ जाना। भला यह बात याद रखना। भूल

मत जाना।

सदेवंत की पाटमदे नामक एक रानी थी। उसने पति को पर-स्त्री से दूर रहने के लिए समझाया किंतु वह न माना। और उसने रानी को धमकी दी। भली बुरी सुनाई, रानी चुप हो गई।

शादी का समय हुआ तो सावलिंगा ने एक युक्ति की। ब्राह्मण देव को फोड़ दिया गया, प्रपंच किया गया। और सावलिंगा ने अपनी लविंगिया नाम की चेरी को अपने वस्त्राभूषण पहिना दिये और लग्नमंडप में शादी के स्थान चाँरी (शादी की वेदी) के सन्मुख बिठा दी। इस तरह रूपशाह सेठ की शादी उस दासी के साथ हो गई।

रात को सावलिंगा रूपशाह सेठ के पास आयी। और घूंघट के पट खोल दिया। उसका रूप सौंदर्य देखकर मोहित हो गया, और उसने सावलिंगा का हाथ पकड़ लिया किंतु सावलिंगा नें बहाना दिखाया कि मैंने एक शरत की है। प्रण किया है कि यदि मुझे रूपशाह, पति के रूप में प्राप्त होगा सो मैं अकेली आकर 'हे भगवान शिवजी तेरा पूजन करूंगी। बाद में पति से मिलूंगी।'

सावलिंगा की बात सुनकर रूपशाह सेठ ने कहा कि रात का समय है और अकेली जाना चाहती हैं, यह बात अच्छी और ठीक नहीं है। बहुत समझायी किंतु उसने सावलिंगा ने नहीं माना। पूजन का थाल लेकर वह अकेली पैदल चलकर भगवान शंकर के मंदिर में आ पहुंची। सदेवंत भीतर से द्वार बंद करके नशे की खुमारी में नींद ले रहा था। बहुत कोशिश कीं, किंतु वह किसी प्रकार सें जाग्रत नहीं हुआ। इससें सावलिंगा ने मंदिर पर चढ़कर ऊपर के शिखर को उतारकर मंदिर में प्रवेश किया। और मोह-निद्रा में पड़े हुए उस सदेवंत को जाग्रत करने के लिए अनेक प्रयत्न किये। किंतु ये सब प्रयत्न बेकार साबित हुए, निष्फल हुए। बाद में हताश होकर उसने सदेवंत की हथेली में समस्या (निम्नलिखित काव्य पंक्तियां) लिखीं। जैसे कि

"कोरे घड़े कुंवारि का, जेने खोले आंखाणुनी जार।
एवा शुकने तमो आपशो, तो मलशे सावलिंगा नार।
× × ×
सुणो सदेवंतराय, अमल कर्या आकरे।
हुं छु बालकुमार, जाउं छुं सासरे ।।"

देह-दर्द और हृदय के दर्द से पीड़ित होकर उसने हथेली में घाव के रूप में काव्य-पंक्तियां लिखीं। हतोत्साह हुई, और अपने घर पर वापस आ गई। तुरंत वह पति के साथ पति के देश सिधार गई।

इधर सदेवंत नींद से जाग उठा और सावलिंगा का मिलन न होने से क्रोधित होकर अपने महल में वापस लौट आया। फिर उसकी रानी पाटमदे ने उसको एक वनियेकी कन्यासे प्रेम करने के कारण कई अयोग्य बातें सुनाईं, वहुत कुछ कोसा। महेणे टाणे लगाये। इससे क्रोधित होकर सदयवत्स ने कड़ी प्रतिज्ञा की कि सावलिंगा से शादी करके उसको मुखिया रानी महाराणी या पटरानी बनाकर छोड़ूंगा। ऐसा कहकर वह अश्वशालामें पहुंचा। एक अच्छा अश्व लेकर उस पर आरूढ़ होकर अकेला चल दिया।

सदयवत्स सावलिंगा के नगर के बाहर पहुंचा। उसको तृषा लगी हुई थी। हाथ में काव्य रूपी समस्या लिखी हुई थी उसकी रक्षा करने के हेतु, वह हाथ से पानी न पीकर पशु की तरह मुंह से पानी पीने लगा। यह देखकर वहाँ की पनिहारियाँ उसकी दिल्लगी करने लगीं कि यह कोई गंवार है क्या ?। किंतु वहाँ सावलिंगा की चेरी तथा उस नगर की राजकुमारी कनकावती उस समय नदी-तट पर आयी हुई थी। इन दोनों ने ताढ़ लिया कि यह तो कोई चतुर बुद्धिशाली आदमी है। राजकुमारी कनकावती तो उसके दर्शन करके इतनी मोहित हो गई कि उसके मनसे निश्चय भी कर लिया कि मैं इस व्यक्ति के साथ शादी करूंगी, अन्य से नहीं।

ससुराल में आकर भी सावलिंगा ने अपने पति के साथ बहाने बाजी

बढ़ा दी। और पति से कह दिया कि पीहर आते समय मैंने एक व्रत लिया है निश्चय किया है कि यदि मैं ससुराल में क्षेमकुशल पहुंच जाऊंगी तो मैं सात दिनों तक अकेली शयनगृह में नींद लूंगी।

पति रूपशाह ने इस बात को सत्य मान लिया। इस घटना से हमारे देश में उस समय समाज में व्रत मानता के विषय में कितनी दिलचस्पी थी इसका पता चलता है। कितना था प्रावल्य व्रतों के विषय में इसके हमें दर्शन होते हैं।

अब तो सदयवत्स ने एक मालन को साथ लिया और उसकी सहायता से सावलिंगा से मिलने का निर्णय किया। सावलिंगा ने मालन से कहा कि तुम सदयवत्स को साधु का भेष पहनवा कर मेरे महल में जरूर भेज देना।

अव मालन उस नगर की राजकुमारी के यहां चल दी। और पहुंची कुमारी के महल में। राजकुमारी कनकावती ने भी मालन को कुछ लालच दिया। और कहा कि यदि तूं मेरी शादी सदयवत्स के साथ कराने के काम में सहायता प्रदान करेगी तो मैं जिन्दगी भरके लिये तेरी ऋणी रहूंगी तेरे उपकार को न भूलूंगी।

मालन दोनोंके संदेश लेकर सदेवंतके पास आयी और राजा सदयवत्स से कहा कि मैं सावलिंगा के साथ आपका मिलाप करा दूंगी। किंतु साथ ही मैं भी आपसे एक वर चाहती हूं, सदयवत्स ने कहा क्या कह दो। मालन ने कहा कि यदि आप मेरी बात के साथ सहमत होते हैं तो मेरी शरत यह है कि यहां के राजा वीरमदे की राजकुमारी कनकावती है उसके साथ भी शादी करनी पड़ेगी। है यह शरत मंजूर? राजा ने शरत को स्वीकार कर लिया। हाँ भर ली। क्योंकि उसका मन सावलिंगा से मिलने के लिये अधीर हो रहा था। जिसके फलस्वरूप उसने यह शरत स्वीकार ली।

अव राजकुमारी कनकावती ने दूती मालन के द्वारा सदयवत्स के मनोभावों की सारी जानकारी प्राप्त कर ली। और अपना निश्चय

सदयवत्स के साथ शादी करनेका यह उसने अपने पिता वीरमदेसे सुना। इस बात को राजा ने स्वीकार भी कर ली। साथ ही पितासे सावलिंगा की सब बातें कह सुनाई। और उनका निश्चय भी बतला दिया। राजा ने इस कार्य में सहायता देने के लिए हां भर ली।

अब राजा ने सावलिंगा की शादी के विषयमें निर्णय करने के लिए रूपशाह सेठ को अपने पास बुलाया और सारीं बातें बतला दीं। रूप-शाह को भी अब पता चला कि सही रीतिसे उसकी शादी भी सावलिंगा के साथ नहीं हुई है एक चेरी के साथ हुई हैं। दूसरा पता यह चला कि सदयवत्स एवं सावलिंगा इन दोनों की परस्पर अत्यंत एवं हृदय से भी चाह हैं। ये सारी बातें जानकर उसने सावलिंगा को सुपुर्द कर देने की सम्मति देदीं। सदेवंत को दे देने की भी रूपशाह ने हां भरी। अब राजा वीरमदे ने एक बड़ा लग्न-महोत्सव निश्चित किया और सदेवंत के साथ ये दोनों स्त्रियों सावलिंगा एवं कनकावती की शादी कर दी।

कुछ समय यहां बिताकर राजा सदेवंत दोनों रानियों को साथ में लेकर बड़े सजधज के साथ अपने देश वापस लौट आया।

राजा शालिवाहन को पता चला कि पुत्र आ रहा है। यह जानकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ और बड़ी धूमधाम से लेने के लिए सामने गया।

सदयवत्स की मां भी उमंग में आ गई। उसने भी अपने बेटे को कि जो दो रानियों से शादी करके आया है, पोंख (शादी की विधिके अनुसार) लिये। सदयवत्सने निर्णयानुसार इन तीनों रानियोंमेंसे सावलिंगा को पटरानी के पद पर स्थापित करके प्रण पूर्ण किया। सदयवत्स ने कई वर्षों तक सुख से राजकाज किया। खाया पिया और मौज-मजा तथा शान्ति एवं आनन्द में जीवन व्यतीत किया।

प्रबन्ध में सामाजिक जीवन-नृपति एवं प्रजाजनोंके बीचका संबंध बहुतायत से नगरों में एवं राजधानी में भी सदवर्ताव एवं प्रेम-भावना से युक्त रहता था। फिर भी राजा की अमाप सत्ता के सामने प्रजाजनों का कुछ बस नहीं चलता था "राजा किसी का मित्र नहीं"

प्राचीन सुभाषित के अनुसार, सदयवत्स के पिता प्रभुवत्स का आचरन या वर्तांव कथानक को नया मोड़ देता है। एक दिन पुत्र के पराक्रम पर संतुष्ट होने वाले पिता दूसरे दिन प्रधान मंत्री के षड्यंत्र-शिकार बनता है। स्वयं युवराज-पद पर स्थापित किये गये पुत्र को (राज कुमार को) राज्य की हद छोड़कर चले जाने की आज्ञा देते हैं। यदि राजा किसी पर संतुष्ट (प्रसन्न) होता है सब उसे 'पसाय' (सं. प्रसाद) देते थे।

राज्य की कार्यवाही में-अनेक प्रकारके प्रपंच एवं षड्यंत्र की कार्यवाही चलती थी, यह बात हमें प्रधान के षड्यंत्र (पृ० १४) की कार्यविधि से ज्ञात होती है। बहुतायत से राजा लोग निष्क्रिय रहते हैं।

क्षणंतुष्टः एवं क्षणं रुष्टः ऐसी राजा की उदात्त भावनायें भी गणना-पात्र हैं ही। प्रभुवत्स राजा को प्रजाजनों ने जो चीजें प्रदान की थीं उनका राजा ने स्वीकार भी नहीं किया था। किंतु वापस लौटा दी थीं। (कड़ी ३९१)

न्याय देने की पद्धति का दर्शन-सदयवत्स राजा एक प्रसंग देता हैं (पृ. ६४) वहाँ होता हैं। खास करके कानून के चक्कर में पड़ने के बजाय सरल समजदारी एवं व्यावहारिक बुद्धि का प्रयोग करके ही न्याय का फैसला या निर्णय लिया जाता था।

त्यौहार या उत्सव-प्रसंगऊपर नगर जनों द्वारा नगर-की जोसजावट या शृंगार वंदनवार होता था इसका भी कवि ने सुंदर बयान दिया है। (पृ. १२-१३)

नगर में एक ओर जैसे **गणिकागृहों की** अनिवार्यता देखने में आती है, वैसे दूसरा ऐसा अनिवार्य स्थान **द्यूतस्थान** (जू-ठाण) प्रख्यात गिना जाता था ऐसा हमें पता चलता है (कड़ी ४०१) द्यूतस्थान द्यूत के क्षेत्रीय अखाड़े) राज्य-सम्मत गिने जाते होंगे ऐसा प्रतीत होता है। प्रसिद्ध जुआरियोंके नाम भी कविने अंकित किये है। (कड़ी ५०९-५१०)

वैसे ही प्रसिद्ध वारांगनाओं के नाम भी (कड़ी ५४२, ५५२) क्रमबद्ध एवं व्यौरेवार गिनाये हैं। आधुनिक युग के जिसकी गणना समाजमें होती है और इस समाजमें जितना महत्व का गिना जाता है, उतना प्राचीन समय में गणिका एवं द्यूतका स्थान होगा, ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

महाजन श्रेष्ठियोंकीसत्ता-नगरों में उनके व्यापार के क्षेत्र में अवाधित रूप में रहती थी। उस समय के प्रचलित श्रेष्ठियों के नामों की जानकारी भी हमें प्राप्त होती है। (कड़ी ५३२, ५३५)

बारहट्ट और ब्रह्मभट-या चारन का स्थान राजा एवं प्रजा के बीच में संयोग जोड़ने वाली शृंखला के समान था। किसी भी व्यक्ति के लिये वह 'प्रतिभू' यानी Surety किंवा प्रतिनिधि बन सकता था और वह राजमान्य भी गिना जाता था। (पृ० १२) सार्वलिगा को बहिन (भगिनी) समझकर एक गांव का बारहट्ट कि जिसको राजा ने पसाव (ग्रास) प्रदान किया था और वह उसका उपभोग भी करता था। उसने पांच दिनके लिए आश्रय दिया था। यह उसका उदात्त चरित्र उदाहरणनीय जान पड़ता है।

राजा की आज्ञा का पालन करने वाले-'तलार' औलग (सेवक) उपस्थित रहते थे। (पृ० ८०-८१) दंड के भेदों में शूलि, अंगच्छेद एवं कारागृहवास जेलखाना इतने भेद जानने समझने के लिए प्राप्त होते हैं।

आत्महत्या इसके उपरांत स्वेच्छा से लोग संसार असार जानते ही जीवन से तंग आकर काशी में जाते थे, और वहाँ करवट लगवाकर जीवन समाप्त करते थे। इसके द्वारा समाज की पूर्वजन्मके प्रति कितनी अड़ग श्रद्धा रहती थी इसका हमें दर्शन होता है। मालवा प्रदेश में शिक्षा के रूप में किसी धातु या सिक्का गरम करके निशानी कर दी जाती थी ऐसा भी उल्लेख मिलता है।

ज्योतिष- ज्ञाता ब्राह्मण देवकी भविष्य वाणी यदि बेकार असत्य साबित होगी तो उसको शिक्षा देने की चेतावनी के उद्‌गार प्रभुवत्स राजा ने निकाले हैं। (कड़ी २४)

कुनबा एवं गृह जीवन-हिंदू संसारके ब्राह्म विवाह विधिको रसिक एवं यथारूपा (सादृश्य) वर्णन कवि ने दिया है। (कड़ी ६३६ ३७-३८) साथ साथ हिंदू संसार में सउकी (विपत्नी) या सौत को भी एंक अनिवार्य परिस्थिति के रूप में गिनी गई है। (कड़ी २७२-७५) अतिथि या मेहमान का आदर सत्कार भावपूर्ण रीति से होता था। इसके वैभवद्योतक स्वरूपका वर्णन भी प्राप्त होता है। (कड़ी ३९७-९८) सावलिंगा ने आत्महत्या के पूर्व जो प्रार्थना की है उसमें सती साध्वी सन्नारी के पति के प्रति भावात्मक ऐक्य व्यक्त किया गया है। (कड़ी-६००-६०८)

विरहाग्नि की जलन से आकुल व्याकुल सदयवत्स अपने दोनों हाथ दूर रखकर चौपाये की तरह पानी पीता हैं। क्योंकि उसके हाथके भीतर हथेलियों में उसकी प्रेयसी सावलिंगा ने समस्या के रूप में काव्य पक्तियां लिखीं थीं। वे पंक्तियाँ नष्ट न होने पावे, इसलिये उसको ऐसा करना पड़ा है। इस दृश्य को देखकर जन-सुभाव से परिचित ऐसी पानी भरने आयी हुई पनिहारियों ने भी कैसे अनुमान किये हैं। वह प्रसंग बहुत ही हृदयंगम है। एक सचित्र पोथी में एक चित्रकार ने उस प्रसंग को रंग एवं रेखाओं के द्वारा जीवंत बना दिया है।

उस समय समाज मे **गणिका का स्थान** अनिवार्य एवं आवश्यक माना जाता था जान पड़ता है। क्योंकि चातुर्य प्राप्त करने के जो पाच स्थान मुख्य हैं। उसमें गणिका को स्थान दिया गया है। फिर भी उस गणिका का द्रव्य हरण एवं पुण्य आदि बातें सुभावजन्य हैं। अभिजात गणिकाका आदर्श व कामकंदला में भी प्राप्त होता है। गणिका की सूची कवि ने दी है। उस परसे अनुमानतः विक्रम की १५ वीं शताब्दी

में स्त्रियों के कैसे नाम प्रचलित होंगे, उसका हमें खयाल आता है। वैसा ही दूसरा नाम का वर्णन व्यापारी एवं सेठ शाहूकार का भी मिलता है।

बहुतायत से सामाजिक एवं धार्मिक प्रसंगों के वर्णन में कवि ने अपने जमाने का सुंदर चित्र अंकित किया है। सीमन्तिनी-यात्रा-वर्णन में उसका लाक्षणिक दृष्टाँत प्राप्त होता है। लीलावतीके साथका विवाह विधि या शादी का वर्णन 'धउल' (धोल) में किया है। इस तरह कवि ने वर्णनमें स्वाभाविकता ला रक्खी है।

जीवनमें रूढ़ मान्यतायें ज्योतिष शास्त्र के विषय में लोक मानस में बहुतायत से उसके फलादेश के प्रति बहुत आदर रहता था– जान पड़ता है। कथानक के प्रारम्भ में एक चतुर्वेदी ज्योतिष ज्ञाता-विप्र के ऊपर तथा उसके कहे हुए भविष्य कथानक के ऊपर कथानक में रस केन्द्रित होता है। और भविष्य वाणी को नष्ट करने के लिये राजा अनेक प्रयत्न करते है, किंतु उसको सफलता प्राप्त नहीं होती है। फलस्वरूप पहले कुंवरके ऊपर प्रसन्न होनेवाला राजा दूसरे ही दिन प्रधान-मंत्रीके षड्यंत्र के कारण तुरंत राजकुमार को देश छोड़कर चले जाने की आज्ञा देता है। देश से बाहर कर देता है।

यहां से कथानक में साहस एवं अद्भुत रस का संचार होता है। किंतु उसके मूल में वही ज्योतिष-ज्ञाता विप्र का फलादेश ही निमित्त होता है।

शकुन अपशकुन को मान्यतायें-भी अनेक स्त्रियों एवं पुरुषों के हृदय में जड़ जमाये बैठीं हुई मालूम होतीं है। अपशकुन की परम्परा का वर्णन (दे. पृ० ८) एवं शकुन की मीमांसा (दे. कडी १६७-१७५) वाला वर्णन-विभाग उसका समर्थन करता है। श्याम (कृष्ण) रंग के शृंगार श्याम रंग के वस्त्र आदि अपशकुनके द्योतक अंग हैं। (पृ० १४-१५) प्रतिदिन के व्यवहार में इस मान्यता का गहरा असर रहता था। दे. सउण भणी सीरामणी कडी १४३ और जोगिणी जिमणी जाय कडी १६६)।

वर्णन शक्ति के दर्शन-प्रबंध में प्रसंग के अनुसार कवि ने अपनी वर्णन शक्ति का सुन्दर परिचय दिया है । कथानक का प्रवाह अस्खलित (बिना रुके) बहता ही रहता है । किंतु फिर भी कथानक में रम्य बीजांकुर उद्दिप्त होता है, वहां कविराज क्षणभर के लिये विराम पाते हैं । और करामात ऐसी करते हैं कि तीन या चार कड़ियों या पंक्तियों में सारे प्रसंग-चित्र को तथा उसके अनुरूप हूबहू वातावरण खड़ा कर देते हैं । यहां केवल उसका निर्देश किया गया है । जैसे कि नगरी-पथ का वर्णन (कडी ४१२-४२२) पंसारी बाजारी एवं यहां की चीजों का वर्णन (कडी३४–४०) व्यापारियों का वर्णन (कडी २१२-२१६), स्त्रीसौंदर्य का वर्णन (कडी १५९-१६३) वनश्री का वर्णन (कडी २०६-२२६) कैलाशपति के मंदिर का वर्णन (कड़ी २१७-२१९), दूल्हा-अश्व-प्रशस्ति (धवलकड़ी २१७-२१८) सदयवत्स का गुन-वर्णन (कड़ी २८), सावलिंगा का रूप वर्णन (कड़ी ३१२-३३२), वरयात्रा या वरात का वर्णन (कड़ी ३२२-३२४), गहरे अरण्य का वर्णन (कड़ी ३६०-३६४), नगर वर्णन (कडी ४२३-४२२), सदाशिव वन वर्णन (कड़ी २१७-२१९), युद्ध वर्णन (कडी ६२९-६३५), शूर या वीर जनों की प्रशस्ति (कडी ५९६, ५९७) एवं पुण्य की महिमा (कडी ७३०) ये सब उल्लेखनीय वर्णन रोचक एवं प्रासादिक भी हैं । और कवि की प्रतिमा एवं बहुश्रुतता के द्योतक हैं ।

प्रबंध में अलंकृत एवं सुभाषित वानी का प्रयोगः-

कविकी रचना मनोगम्य एवं प्रसादिक भी है । उसके दृष्टांत कविने कथानक में अनेक जगह पर विविध रूप में अंकित किये है । जैसेकि अर्थान्तरन्यास (कडी २२६,२१८ २९०,८२) सुभाषित(कडी १०३६२२) और अन्योक्ति (चक्रवाकीके प्रति कडी ३६५-३६६) एवं इसमें सामली वचन जैसे सुभाषित भी हैं । जैसे कि बिना पतिकी प्रेमदा (पति विनानी प्रेमदा) ऐसे संबंधित सुंदर भाव–चित्र कवि ने खड़े किये हैं ।

कुकर्म से मनुष्य के पुण्य कार्यों की वृद्धि नहीं होती है । किसी सत्पुरुष के समागम से ही भाग्योदय होता है । या भाग्य फल देता है । इस मान्यता में कर्म का सिद्धांत ध्वनित होता है । (कड़ी १३)

इस तरह कवि "भीम" की रचना सदयवत्स वीर प्रबन्ध विक्रमी नेक दृष्टि से एक अमूल्य रत्न जैसा है ।

आदि पृष्ठ । सदयवत्स वीरप्रबन्ध । लिपि संवत नहीं है । प्राच्य विद्या मंदिर, बड़ोदा ।

अंतिम पृष्ठ, सदयवत्स वीरप्रबन्ध । लिपि संवत नहीं है । प्राच्य विद्या मंदिर, बड़ोदा ।

कवि भीम-विरचित

श्री सदयवत्सवीर प्रबंध[1]

ॐ नमः । श्री शारदायै[2] नमः । श्री सद्‌गुरुभ्यो नमः ।

[मंगलाचरण]

(गाहा)

माई महामाई-मज्झे, बावन्न वन्न जो सारो ।
सो बिंदु ओंकारो, स ओंकारो नमस्कारो ॥ १ ॥

जिण रचीय आगम निगम, पुराण सर-अक्खराण वित्थारो ।
सा ब्रह्माणी वाणी, पय[3] पणमवि सुपय मग्गेसु ॥ २ ॥

गयवयण गवरीनंदण, सेवइ सुहकरण असुह-अवहरणो ।
बहु-बुद्धि[4]-सिद्धिदायक, गणनायक पढम पणमेसु ॥ ३ ॥

गुरु लहुय जि केवि कवियण, सरस-सुअत्थ सुच्छंद-बंधयरा ।
एकत्थ[5] ताण सव्वे, करजुअलं जोडि पणमामि ॥ ४ ॥

[नव रसात्मक सदयवत्स प्रबंध]

सिंगार हास करुणा, रुद्दो वीरो भयाण बीभच्छो ।
अद्‌भूत संत नवइ रसि, जसु जंपिसु[6] सदयवच्छस्स ॥५॥

---

१. 'सुदयवत्सवीर चरित्र' अ.; 'सुदयवच्छचुपइप्रबंध' आ. २. 'वीत-रागाय नमः' अ. ३. 'पय पूनवि हूँय मग्गेसु' आ. ४. 'रिद्धि', 'बुद्धि' आ. ५. 'एकंत बाणि सव्वे', अ. ६. 'बभिस', आ.

[सदयकुमार परिचय]

(छप्पय)

मालवदेस–मज्झारि, नयरि ऊजेणि अणोपम[1] ।
पहु पहुवच्छ नरिंद, नारि[2] बहु लच्छि लच्छि-सम ॥
तिह सुअ सदयकुमार, सबल सामलि-भत्तारह ।
साहसि[3] पवर-प्रसिद्ध, जय जगि जयत जूआरह ॥
खित्ततणि[4] खित्तीय सोहकर, रायरीति वीर[5] जि बिबुध ।
इम[6] भणइ भीम तस गुण थुणिसु, जो हरसिद्धि वर लबध ॥६॥

[उज्जयिनी नृप प्रभुवत्स]

(गाहा)

ऊजेणि अवणि-मज्झे, नयरीवर[7] नयर-सयल-सिंगारो ।
तेणि पहू पहुवच्छो, पत्थंतह पूरए अत्थो ॥७॥

[नगरी-निवासी ज्योतिषी विप्र]

तिणि नयरि एक निवसइ, विप्पो विज्जा-निहाण चउवेई[8] ।
जोइत्तिक-कला – कुसलो, निद्धण कणवित्तियाजीवी ॥८॥

तस घरणि इक्क अवसरि, अखय मंत कंत एक्क तस्स ।
"पिय ! पहुवच्छ नराहिव, पच्चूसे[9] पत्थि हो पत्थि" ॥९॥

मनि धरवि घरणि-वयणं, विप्पो संपत्त[10] राय-अत्थाणं ।
लेई अक्खय करपत्तं, आसीय-वयणं पयासियं तस्स[11] ॥१०॥

---

१. 'निरुपम' आ. २. 'महिल' आ.; 'बहुलच्छि' अ. ३. 'साहसि जसि' अ. ४. 'क्षत्ततणइ क्षत्तीय' आ. ५. 'कीरति विबुर नर' आ. ६.'कवि भीम तासु गुण वन्नवइ,जो हरसिद्धि लबधवर' आ. ७. 'नारीवर' मा. ८. 'चउवेयो' अ. ९. 'पच्छसे पत्थि हो पत्थि' अ. १०. 'संपन्न' अ. ११. 'अघ्याणो' आ.

[आशीष वचनार्थं राजसभा-गमनं]

(दूहा)

विप्प[1] सुविज्जउ ऊलखिउ, कीउ पहुवच्छि[2] प्रणाम ।
आदरि आसण अप्पीउ, "कहिन[3] देव ! कुण ठाम ?" ॥११॥

(छंद पद्धडी)

पहु[4] प्रच्छइ जंपइ विप्पराउः
"सुणि[5] नरवर ! अम्ह ऊजेणि ठाउ" ।
"दिन एता[6] दिट्ठि न दिट्ठ देव !
तं कांई कारण ? कहिन हेव" ॥१२॥

"जां लगइ कुकम्म-वसि हुइ कोई,
तां सुपुरिस-सरिसी भेट न होइ ।
जव टलिउ देव ! दारिद्दनु भाउ,
तव पामिउ मइं पहुवच्छ राउ !" ॥१३॥

[प्रभुवत्स वचन]

(दूहा)

विप्प-वयणि, राउ रंजिउ, पूछइ वलीअ विगत्ति ।
"कवण कला गुण तू[7] अ-तणइ?, कवण तुज्झ[8] कुल-वित्ति ?[9] ॥१४॥

[विप्र वचन]

(वस्तु)

विप्प जंपइ, विप्प जंपइः "निसुणि नरनाह ।
जयवंती ज्योतिष कला, कुलकम्मि अम्ह अच्छइ अग्गइ ।

---

१. 'पहुणा' आ. २. 'सवि जउ' आ. ३. 'कहुन' आ. ४. 'पहु पूछिउ' अ. ५. 'सणि' आ. ६. 'कांइ' आ. ७. 'तदम' आ. ८. 'शुत' आ. ९. 'वित्ति' आ.

बरतारउ[1] संवच्छरह, नष्ट जन्म नवि वित्ति लग्गइ ॥
जं सुरपुहि जं नरभुवणि, जं जं हुइ पायालि[2] ।
नरवर ! निज मंदिर-थिकूं, तं जाणू तिणि कालि" ॥१५॥

(दूहा)

विप्प-तणइ अति वड वयणि, वसिउ राउ-मनि रोस ।

[प्रभुवत्स वचन]

"जं बंभण ! तूं[3] बरलिउ, तं[4] जाणिसु तूं अ जोस" ॥१६॥

तिणि[5] अवसरि अग्गलि रहिउ, गलि गज्जइ गजराउ ।

[ज्योतिष ज्ञान परीक्षा । गजराज जयमंगल आयु प्रश्न]

"जयवंतु[6] जयमंगलह, एह कहि, केतूं[7] आउ ?" ॥१७॥
लगन लेई[8] तव ततखिणि, कहिय खडी करि झल्लि ।

[जयमंगल फलादेश कथन]

"जइ पूछिसि पहुवच्छ पहु, मरइ ति कुंजर कल्लि !"॥१८॥

बंभण-केरइ बोलडइ, राउ चमक्किउ चित्ति ।
"जउ कुंजर कल्लि नवि मरइ,तउ तूं अ कहि,कुण गत्ति?॥१९

आगइ एक अणजाणतां, तइं घड़ बोलिउ बोल ।
आ तिहूं पाहिइं अधिक, जाणइ निरस निटोल" ॥२०॥

विप्प भणइः "नरवर ! निसुणि, देव मद्दु छि अनंत ।
जे जयमंगल हत्थीउ, तेअं थिइ दिणि अंत ॥२१॥

---

१. 'बरतक' आ. २.'पैयाल' अ. ३. 'तइं' अ. ४. 'सिउ जाणिस तूं जोस' आ. ५. 'तीणि' आ. ६. 'जइवंतु' आ. ७. 'किशूं' आ. ८. 'लिहुंत बहुंत तीणई' अ., 'स' आ. ।

चिहुँ दिसि चिहुँ थम्भे सरिस, जइ बहु बंधरिण बद्ध।
तोइ बि प्रुहरे [बंभरण भरणइः] "चल्लइ मत्त मदंध ॥२२॥

गरूअ गुफा भल भुंहिरइ, चिहुँ पक्खे पुंतार।
इम रक्खंतइ राय! सुणि, बि-पुहरि मंडइ मार" ॥२३॥

[प्रभुवत्स नृप कोप-कथन]

(वस्तु)

राउ जंपइ, राउ जंपइः "वयरण निसुरिण[1] विप्प।
मुझ परतन्या पुव्व लग्गइ, अधिक उच्छ बोलइ स वारू।
अलीअ न चल्लइ अम्ह-तरणइ, सच्च होइ तुह कज्ज सारू।
जउ बंभरण! बि-पुहर-समइ, मत्त न मोडइ खंभ।
तउ तूं[2] आगा तिलयनइ ठामि दिवारिसु[3] डंभ ॥२४॥

(चउपई)

"जउ जोसी! तूं ज्योतिष साच, तउ थिर थापउं माहरी वाच।"

[फलादेश मिथ्या करणोपाय]

इम बोली तुरी पाठविउ, राइं गज-राखरण आठविउ ॥२५॥

एकि भरणइः "ए बांभरण[4] बूड", एकि भरणइः "ए[5] काचउ कूड"
एकि भरणइः "ए पडिउ अपाइ,किम छूटेसिइ राखिउ राइं ?"॥२६॥

गज-पाखलि पायक सइं पंच, ते[6] पुंतारि मुरगइ प्रपंच।
तीह आपी आंकुस नइ आर, राइं[7] मेल्हया राखरगहार ॥२७॥

मत्ता-पाखलि पुहरा पडइ, एकि आंकुस लेई ऊपरि चडइ।
इरगइ[8] परि राखिउ सघली राति,पुहतउ तिहां पहुवच्छ प्रभाति॥२८

१.'निसुणि वर विप्प' आ. २.'तल तणइ' अ. ३.'दिवारिसु'अ. ४.'बूड' अ. ५.'कीधउ' आ., ६.'जे' अ; 'कुणइ प्रपंच' अ. ७.'धूणी घडा पाड्या पुंतार' आ. ८. 'इम बध्यु गज' आ.

[विशेष गज-रक्षण-प्रबंध]

वली अधिकि बंधाविउ बंधि, सवा-भार लोह-संकल कंधि।
नवि सलसली सकइ थिउ ठामि, किरि[1] चित्र कि लिखिउ
चित्रामि ! ॥२६॥

राईं तइं तेडया पुंतार, "रे ! रूडि-परि करिज्यो सार।
गाढा थई राखउ[2] गजराज, बांभणि बि पुहर लहिणा आज"॥३०

[उच्छृङ्खल गज-गमन]

इम करतां सिरि आविउ सूर, गज चालिउ पावरिसनूं पूर।
धाइ धसइ अनइ धडहडइ, किरि आसाढि अंबर गडगडइ।।३१॥

छोडी संकल मोडया खंभ, चुहुटइ चालिउ गरूआरंभ।
नवि लेखइ[3] आंकुस नइ आर,धूणी धरा[4] पाडया पुंतार ॥३२॥

[उन्मत्त गज पथ-विहार-परिणाम]

गजि चउहटइ जई मंडिउं गाह, पान-तणां सवि लाख्यां लाह।
फूल-तणा तिहां पूर्या पगर, सइगलि माथइ कीधउं नगर ॥३३॥

पुहुतउ श्रेणि सुगंधी-तणी, राज-वस्त मेली रेवणी ।
लांखइ केसर अनइ कपूर, वास्यां तेल वहाव्यां पूर ॥३४॥

[लोक-संभ्रम]

लोणइ दोठइ दोसी दडवडइं, पारिखिने पगि पींडी चडइं।
फडीआ फोफलीआ सोनार,[5] नाठा लोक : न जाणइं सार ॥३५॥

हाट-मांहि थिउ हालकलोल, किरि कमलापति करइ कलोल।
पोतां लांख्यां पारिखि-तणां, कापडि सरिस किरिआणां घणां॥३६॥

---

१. 'जाणे गज लखीउ चित्रामि' आ. २. 'राख्यो' अ. ३. 'मानइ' भा. ४. 'धरि' आ. ५. 'सूनार' आ.

एकि अटालि मालि गढि चडइ, एकि पाधरि दह दिसि दडवडइ ।
एकि[1] छाबड़ां अछइ छडछोक, ते सीकिइं[2] -थ्यां लूसइं लोक॥३७॥

गिउ गयंद सुर-हटनी वाट, तिहां[3] मदिरानां दीठां माट ।
मधु महुअडां द्रवणि जस द्राख, ते गजवरि आरोग्यां लाख[4] ॥३८॥

आगइ पंचायण पाखरिउ, आगइ पन्नग पंखावरिउ ।
आगइ गज अंगि जमदूत, वली वारुणी भावि थिउ भूत ॥३९॥

सुंडाहल पूरइ परचंड, दंतूसल जाणे जमदंड ।
पाडइ विसमा पोलि प्रासाद, नर नारिनूं[5] ऊतारइ नाद ॥४०॥

[गजनियंत्रणे नृपागमन]

राउ असवार थई थिउ[6] केडिः "जे भड भला ते वहिला तेडि ।
जे आणी बंधइ[7] गज ठामि, तेहनइं आपूं गाम अनामि ॥४१॥

आपउं अंग-तणउ शृंगार, आपूं एकाउलिनउ हार ।
आपूं अधिक वली पसाउ, जे बलीउ बंधइ गजराउ" ॥४२॥

एकि भणइः 'आघो थाईइ', एकि भणइः 'जमपुरि जाईइ' ।
एकि भणइः 'वरि रूसइ राउ, सरसिइ[8] एहना-पखइ पसाउ'॥ ४३

[ब्राह्मण सीमन्तिनी-गृहागमन प्रसंग]

नव[9] बारहि नयर ऊजेणि, नितु नव नवा महोत्सव तेणि ।
बंभण एक-तणइ तिणिवार, आघरणि अवसरि जयकार ॥४४॥

गयगामिणी धवल-धुणि करइ, वारु विप्प वेअ उच्चरइ ।
मस्तकि मेघाडंबर छत्र, वाजइं पञ्च शबद वाजित्र ॥४५॥

भरीय सेसि सइं हथिइं माई, पीहरि—थी पस पूरइं जाई ।

---

१. 'जे छां छडा असइ छड छोक' आ. २. 'पाछलि' आ. ३. 'मदिरा-पूर्यां' आ. ४. 'राष' अ. ५. 'नवनरिंद' अ. ६. 'त्रिउ' आ. ७. 'वंधइ बलीउ' आ. ८. 'रुडिसिइ' आ. ९. 'नव बाहरि' आ.

[अपशकुन परम्परा]

जां[1] घडि चालइ पहिलइ पाइ, तां आडी ऊतरइ बिलाइ ॥४६॥

खडकी खूली चाली बाट, जातां वाडि विलागू घाट ।
जां[2] घाटडूं विच्छोडी वाडि, तां तरु-मइंली छींकी बिलाडि ॥४७॥

पग खंचीनइ पाछी वलीइ, सूकइ काठि काग किलगिलइ ।
अनइ अनेरां हूई असुरा, तिहनां कारण जाणइ कुण ? ॥४८॥

एकि भणइ : 'एह पडिसि आभ',[3] एकि भणइ : 'एह गलिसिइ गाभ' ।
एकि भणइ : 'एह हवडां हाणि, एह असुण-तणइ परमाणि' ॥४९॥

[गजराज कृत सीमन्तिनी-ग्राह]

गजर सुणी गज तिहां-थउ वलिउ, पेखणहार लोक सहु पलिउ ।
सगूं सणीजूं गिउं सहू वही, विप्र-घरणि[4] गयवरिं ग्रही ! ॥५०॥

इम साही सुंडिहि कडि यंत्रि, जाणे लाठि[5] लगाडी यंत्रि ।
नवि मेहल्हइ नवि मारइ मत्त, पेखइं राइ राणा राउत्त[6] ॥५१॥

[सीमन्तिनी-पतिकृत मोक्षयाचना]

(छन्द पद्धडी)

तव आविउ धाइउ[7] ति नारी-भरतार,
बुंबारव बंभण करइ अपार ।
"को सुभट शूर साहसिक शुद्ध[8]
को धीर वीर वंसह विशुद्ध ? ॥५२॥
कोइ जाइउ चउदिसि चपल अंग ?
को अकल अटल आहवि अहंग ? ।

---

१. 'छेडि वीलइ' आ. 'आगलि' आ. २. 'जां घाटक कुंच डीओ वाडि, तां न रमइका छींक निलाडि' आ० । ३. 'पडिसि' अ. ४. 'नारि कराहरि' अ. ५.'माटि' अ. ६.'सामंत' आ. ७. तिहिं' आ. ८.'सिद्ध' आ.

काइ खित्तीअ खल-खंडण समत्थ ?
को अछइ छयल्ल खिति खग्गहत्थ ?" ॥५३॥

[मार्गे कुमार सदयवत्सागमन]

इम करतउ जउ जुवटइ जाइ,
पूछिउ[1] ताम पहुवच्छ-जाइ ।

[सदयवत्स वचन]

"देव ![2] दया कर, कुण दूहवइ तुज्झ ?
थिर थइ भिइ-कारण कहिन मुज्झ ॥५४॥'
कुणि मारिउ ? डारिउ ? हरिउ रिद्धि[3] ?
कुणि लूसिउ ? लीधउ ? तू कहिन सिद्धि ?"

[विप्र रक्षण-याचना]

तीणि वयणि विप्प गीअ[4] विहलमुच्छ,
"करि वाहर, स्वामी सदयवच्छ ! ॥५५॥

(दूहा)

आघरणि अवसरि घरणि, आवंती आवासि ।
मारगि अबला एकली, पडी महागज-पासि ॥५६॥
जम-मुहि किस्यूं[5] जीवीइ ?, चतुर ! विमासिन चित्ति ।
सदयवच्छ ! सा बंभिणी, मारीय हुसिइ मत्ति !" ॥५७॥

[वीर सदयवच्छ मत्तगजाक्रमण]

(छंद पद्धडी)

तव धायो धूंबड धसमसंत,
किरि आवइ केसरि करि[6] कसंत ।

---

१. 'तिहां पूछीय' आ. २. 'दैव दैव म करि' आ. ३. 'अरथि' आ. ४. 'वयु बुहम पुछ' आ. ५. 'केतूं' आ. ६. 'कसकसंत' आ.

बर्बरीय झंटि झलकंति[1] झालि,
कलकिल्यु[2] वीर थ्यु भृकुटि भालि ! ॥५८॥

मयमत्त[3] रत्तू जब दिट्ठ दिट्ठि,
तव असिमर कड्ढवि किद्ध मुट्ठि।
मुहि मंडवि हक्किउ सबल हत्थि,
साहसीय[4] सुभट्ट सुंदर समत्थि ॥५९॥

नवि मेल्हइ नारिय सूंडि-अग्गि,
दंतूसल तोलवि वलिउ वेग्गि ।
इम हणिउ करडि करिमालि कंधि,
जिम त्रूटि[5] सीसि गिउं श्रवण-संधि ॥६०॥

[6](राग केदारु एकताली)

राइं बोलाव्या बहू, जे भड गय-घड खंडंति।
तेहू पाखलि परिभमइ, नवि वारण मुहि मंडंति ॥६१॥

मेगल मत्तालउ ए, नवि जाणइ पवरिस-पार ।
अंकुसि सरिसा अवगणी धूणी, धर पाड्या पुंतार ॥६२॥

[सदयवत्स कृत हस्ति-निग्रह]

सदयवच्छ सूरु सही, जीणइ बलीइं बंभण-नारि।
मेल्हावी. हणी हाथीउः, जग पेखइं जइ जयंत जूआरि ॥६३॥

(छंद पद्धडी)

गडअडिउ गयंद कि पडयउ पुहव्व,
सुर अंतरिक्खि पेक्खिइं अपूव्व ।

---

१. 'झलकइ कवालि' अ. २. 'कलकलिउ वटाणु, थिउ भृगुटि भालि' अ. ३. 'मयमत्तउ जव नयणि दिट्ठ' आ. ४. 'साहसीक सूर' आ. ५. 'त्रूटिवि' आ. ६. टूंक ६१ थी ६३ आ. प्रति मां नथी।

'जय जय' शबद जंपइ जगत्त,

पहुवच्छ-पुत्त[1] पेखइ चरित्त ॥६४॥

[सीमन्तिनी त्राणजन्य आनंद]

(चउपई)

ते बंभण तेडिउ[2] तिणिबार, युवति समोपी किद्ध जुहार[3] ।
बंभण-घरि बिमणउ[4] उच्छाह, 'सुद्द! सुद्द !' करइ[5] नरनाह ॥६५॥

[प्रभुवत्स-दत्त धन्यवाद]

लाजंतइ जई किद्ध जुहार, राइं आलिंगण दिद्ध अपार ।
बापिइं बेटउ बाँहि धरिउ, राउ राजभवनि संचरिउ ॥६६॥

बारहट्ट बोलइ तिणि वार, सदयवत्स न सहइ कईवार ।
भाटइं भेद परीठिउ[6] इसिउ: "पशु मारइं पुरषारथ किसिउ?॥६७॥

(छंद तोटक)

मइमत्त कि मारिय लज्ज रयउ,
शर-टंकीय सुंदर शल्ल विगयउ ।
गयगंजण ! लज्जजइ रि किमइ ?
किम किज्जय सद्द सुसमर तिमइ ? [7]" ॥ ६८ ॥

(गाहा)

पोढा करीय पहारो, मेलावइ मुच्छ मोडए मूढो ।
साहसीअ सदयवच्छो, लज्जरिउ मारि मयमत्तो ॥६९॥

---

१. 'अवरिउ पेखइ पुत्त' अ. २. 'तेडाव्यु ताम' आ. ३. 'प्रणाम' आ. ४. 'मनिई' आ. ५. 'सूदा साद' आ. ६. 'रीछयउ' आ. ७. टूक ६८ आ. प्रति० मां नथी.

[सदयवत्स युवराज-पट्टाभिषेक]

(चउपई)

ते महूरत ते मंगलाचार[1], सेसि भराव्यउ सदयकुमार।
राउ अप्पइ राणि मनइं राज, सूदउ भणइः'न राजिइं काज॥'७०॥

घरि घरि तलीया तोरण बहू, ऊजेणी आणंद्यउं सहू।
हऊउ हरिष राजा-मनि घणउ, पेखि पवाडउ सूदा-तणउ॥७१॥

[सदयवत्स विनय वचन]

"तुम्हि जगि जयवंता[2] हुयो देव !, करिसु सदा हूँ तह्म पय-सेव
नयरि[3] निचिन्त रमूं निशिदीस, तह्म पसाइं पहुवच्छ पहीस॥७२॥

रमूं भमूं जाऊं जूवटइ, चूरि[4] चाचरि खेलूं चउवटइ।
सुहडपणानी लीलां फिरूं, अधिपतिपणूं न अंगी करूं॥७३॥

जिहां जिहाँ रामति हासा होड, जिहां जिहां कला कुतूहल कोड।
जोवा जाऊं तीणिइं ठामि, ईणइ संकटि पाडि[5] म स्वामि॥७४॥

राज-काजि एक बंधव बाप, मारइ पुरुष न बीहइं पाप।
लीलावंत-तणइ मनि लाज, [सूदउ भणइः] न राजिइं काज"॥७५

[प्रभुवत्स-प्रसाद]

आपिउ एकाउलिनउ हार, आपिउ अंग-तणउ शृंगार।
आपिउ आसण-तणउ तुरंग, राजा-अंगि[6] न माइ रंग॥७६॥

ते बंभण तेडाविउ ताम, प्रति ऊठीनइ[7] किद्ध प्रणाम।
आपिउं वासि वसंतूं गाम, बहु[8] अरथ नइ अंबर द्राम॥ ७७॥

---

१. 'मंगलवार' आ. २. 'जइजइवंता देव' आ. ३. 'निरंतर' आ. ४. 'चरि' आ.; 'निग्र' अ.५.'पाउ काइं' आ. ६. 'रिदइ' अ. ७. 'राजा ऊठी' अ. ८.'अरथ सरीसु अंबर द्राम' आ.

बंभणनइ घरि भागी भूख, नाठूं दुरीय-सरीसूं दूख ।
महाराज़ि जउ दीधउं मान, लोक-मांहि तीणइ[1] वाधिउ[2] वान ॥७८

(दूहा)

बंधी[3] तलीया तोरणह, गूडीय वन्नरवालि ।
दीसइ दीवाली-तणा,[3] उच्छव हुई[4] अगालि ॥७९॥

पंच शब्द निनाद[5] रसि, वद्धावी वाजंति ।
पड-सद्द[6] पूरी भुंवण, गयणंगण गज्जंति ॥८०॥

विप्प वेअ-धुणि उच्चरइं, करइं सुकवि कइवार ।
रायंगणि राजा-तणइ, मिलिया मग्गणहार ॥८१॥

वर-मंडपि मंडीय गजर, वज्जइ मधुर मृदंग ।
[7]रागरंग गायण गमक, नच्चइं नाचिणि चंग ॥८२॥

किहिं कप्पड़ किहिं दिइं कणय, किहिं केकाण कच्छाहि ।
धन देयंतो[8] किलकिलइ, पहुवच्छ मन-मांहि ॥८३॥

[9]आसीस दिइं बहिनर बहू, मा भनि रंग-रसाल ।
भरीय सेसि सइं हथि-सिउं, वद्धावइ वर बाल ॥८४॥

(चउपई)

मणि माणिक मुत्ताहल-हार, [10]कापड-कणय कपूर अपार ।
विवहारीए वधावूं किद्ध, राजा किहिंनूं कांईअ न लिद्ध ॥८५॥

---

१. 'तु'आ. २. 'लागउ' अ. ३. 'घरिघरि' अ. ४. 'दीपाछव' आ. ५.'नयरि' अ. ६.'निरंदह घरि' आ. ७.'पडिछंदे' 'रागरंगि आलविकरइ, नाचइ पात्र सुरंग' आ. ८ 'वेचंतु' आ. ९. 'बहिन करइ ऊआरणां, आ मनि' आ. १०. 'हीर-चीर सोवन श्रृंगार' आ.

[सदयवत्स सन्मान-अप्रसन्न प्रधान]

सदयवच्छनूं सुणी वृत्तंत, मुहुतानइ[1] घरि बइठउ मंत्र ।
"राउ आपतां न लीधूं राज, [2]भूप-जमलउ थिउ युवराज ॥८६॥

आज-थिकउ इहनइ सिरि भार, राजा आरोपिसिइ अपार ।
लहुडपणा लगइ लक्षण सार, आगइं जूठउ अनइ जूआर ॥८७॥

जे माणस एहनइ नितु नमइ, ते माणस एहनइ मनि गमइ ।
जे माणस आगइ एहना, सरसिइं काज सवि तेहनां ॥८८॥

आज-थिकी[3] हिव एहनी आस, आज-थिकउ एहनउ वीसास ।
आज-थिकउ राजा मनि एह, आज-थिकउ हिव[4] अम्हनइ छेह॥८९

आगइ "इह-सिउं नवि मुझ रंग, जे मइं जीव[5] विणासिउ रंग[7]
अरथ-तणउ अति कीधु लोभ, सगे-सणीजे[8] न रही शोभ ॥९०॥

[प्रधानकृत युवराज-विरुद्ध षड्यन्त्र]

हिव ते कांई करउ उपाउ, जीणइ[9] एहनइं रूसइ राउ ।
इसिउ अनूरव पाडउ रेस, कइ मारइ कइ काढइ देस ॥९१॥

कुटंब तणूं [10]सांभलिउं कहिउं, मुहुतइ सोइ जि कथन[11] संग्रहिउ ।
मंति-पयहपणूं तउ आज, जउ हूँ कालि कढावूं राज ॥९२॥

[प्रधानकृत भेद-प्रपंचारंभ]

तउ परधानि मांडिउ परपंच, उडद अणाव्या पाली पंच ।
सांझइ अरक[12] आथमणी दार, [13]वीर ववावूं लेई[14] तीणि वार।९३

---

१. 'महितानइ' आ. २. 'तु हू जमलि' अ. ३. 'पछी' आ. ४. 'राज-मनि' आ. ५. 'एहनइ नहीं मूं ग' आ. ६. 'जान' आ. ७. 'रंग' अ. ८. 'माहि' अ. ९. 'जिम हिव' आ. १०. 'कुटुम्बि इस्यूं विमासी' आ. ११. 'वयण' आ. १२. 'सूर' आ. १३. 'वार' आ. १४. 'करइ' आ.

आपणि कीधउ कालउ शृंगार, कालउ अंग-तणउ आकार।
काला कापड कीधां भेटि, तउ राजा घण पइठउ पेटि ॥९४॥

रा एकंति मंति लेई गउ, "कांइ प्रधान, काल-मूंहुअ थिउ ?।
एतां सघलूं ताहरूं राज, नवूं ति कांई कारण आज ?" ॥९५॥

जाणइ कामण मोहण कूड, जाणइ बुद्धि बोलतउ बूड।
जाणइ अंग-तणउ [1]अनुराग, [2]वातइ ततक्षिणि लेई ताग ॥९६॥

[मंत्री वचन]

"नही उच्छव तम्ह घरि तेतलउ, वइरी-घरि होसिइ जेतलउ।
'जयमंगल[3] मारिउ' महाराज!, इसिउ वधामणु छाजइ आज ?॥९७

मदि[4] आव्या छूटइ मयमत्त, रोसि चड्या ते हींडइ रत्त।
आइ उपायि, वली धराइ, इम अजुगतिइ[5]न आलि मराइ।९८॥

जास पसाइं दमिया देस, जास पसाइं नमइ नरेस।
जास पसाइं दोहिलउ दुग्ग, लीधी पोलि त्रिभोगल[6] भग्ग ॥९९॥

जीणइ तात ! तम्हे[7] लिउ दंड, दमिय देस लीजइ[8] सवि खंड।
ते उलग आवइ अहिठाणि[9], जे जीता जयमंगल प्राणि ॥१००॥

मदि आविउ करि सारइ काज, वइरी-तणां विध्वंसइ राज।
पाडइ विसमा पोलि पगार, प्राण-तणउ नवि जाणइ[10]सार॥१०१॥

ऐरावण सुणीइ इन्द्र-नइ, जयमंगल हूंतउ तुम्ह-तणइ।
बीजउ कोइ न त्रिभुवनि कन्हइ, प्रापति पाखइ[11]न रहिवा लहइ॥१०२

---

१. 'आकार' अ. २. 'वात करंतु बोलइ नारि' अ.। ३. 'मइ मइगल' अ. ४.'मन्दिर'अ. ५.'अजुगतउ' अ. ६. 'ति' आ. ७.'तु महारउ पंड' अ. ८. 'लीजंता दंड' अ. ९. 'अप्पाणि' आ. १०. 'लाभइ पार'अ. ११. 'विण किम लहिवा लहइ ?' आ.

(दूहा)

अमूलिक चिंता-रयरा, जउ करि चडइ सुरंक।
तां घरि कित्ताउ ते रहइ ?, जित्ताउ बीय-मयंक" ॥१०३॥

[आशंकित राजा-चित्त]

(चउपई)

मुहूतइं मंत्र-भार जउ भरिगउ, तीरिग राजा-मन धारिउ घूरिगउ ॥
न सहि कोई नीसासा-फूंक, जाणे पूरव पूरिउ डंक ॥१०४॥

जे बहु नेह धरंतउ बाप, ते साचु तीणइं कीधु साप।
रोस चडाविउ सघली राति,[1] पुहुतु तिहाँ पहुवच्छ प्रभाति॥१०५॥

[रोषपूर्ण प्रभुवत्स]

फूंकी धमी धमाविउ एम,[2] जिम ते ततक्षरिग त्रूटई[3] प्रेम।
बूड[4] बोलंताँ आविउ वंधि, सूदा-सरसी पाडी संधि ॥१०६॥

[सदस्यवत्स माता-वचन]

थिउ अवसर ऊलगनु जाम, माइं बेटउ बोलाव्यउ ताम।
"सूदा ! सुप्रभातनी वार, जई राजा-प्रति[5] करु जुहार" ॥१०७॥

[क्रुद्ध पिता मुख-दर्शन]

माता-वयरिग सभागिउ सुद्द, तां राजा-मुखि[6] दीठउ रउद्द।
सिर नामंतां बोलिउ राड[7], हासा-मिसिइं भागां[8] हाड ! ॥१०८॥

नीचु नइं न-पाणीउ कूउ, तिह ऊपरि ढालइ[9] ढींकूउ।
वार वार पय[10] करइ प्रणाम, नीर-तणूं नीठाडइ[11] ठाम ॥१०९॥

---

१. 'पाछइ बोलाविउ परभाति' अ. २. 'इम' अ. ३. 'ओडइ तीम' अ. ४. 'बूड' अ. ५. 'राजानइ कयइ' अ. ६. 'मनि' आ. ७. 'साड' आ. ८. 'भजइ' आ. ९. 'मांडिउ' आ. १०. 'सिरि' आ. ११. 'नीवाउइ' आ., अ.

(गाहा)

मा जाणिसि खल नमीयं, जीहां जंपेइ अमीय-सा वयणं ।
ढींकू[1] कूप-विलग्गो, पय लग्गवि, सोसए जीयं ॥११०॥

(चउपई)

जे आकारइ ऊलखइ अंग, भमहि-तणउ जे बूझइ भंग ।
[2]ते नर बोलिउ [3]बूझइ इसिउ, एह वातनूं[4]अचरिज किसिउ ॥१११

वोर विचारी जोइउं सरूप, भमहि-भावि ऊलखिउ भूप ।
कुमर ततक्षणि विमासइ चिंति, किसी कहीइ ज उत्तम रीति? ॥११२

(अडयल्ल)*

जिम जिम केसरि पइ ऊहटइ, जिम जिम विसहर नूली वटइ ।
दीन वयण जिम जंपइ सूरु, देसि देसि कीधह बहु पूरु ॥११३॥

[सदयवत्स पिता-वंदन]

अणबोलिइं ऊठिउ कुंआर, जातइं [5]नरवर किद्ध जुहार ।
वारू लोक विमासण भरिउ, शिर नामी आघउ संचरिउ ॥११४॥

जे आपी अधिकारी हाथ, ते तिवार मुहि[6] लई नरनाथि ।
ते रणि रहइ जे हुइ लाजणउ, तेजी तुरय[7] न सहइ ताजणउ॥११५

[उत्तम-जन लक्षण]

संपदि हरिख न विपदि विषाउ, ए आगइ सतपुरिस सभाउ ।
जोउ करमनूं कारण आम, त्यजी[8] राज वनि जाई राम ॥११६॥

एक दिवस प्रभि किउ पसाउ, बीजइ सूदा रूठउ राउ ।
एकि राउल नइ बीजूं रान, सूदानइ मनि सहू समान ॥११७॥

---

१. 'जे' आ. २. 'प्रींछइ' आ. ३. 'कारण' आ. * टूंक ११३ घ. प्रति० मां नथी. । ४. 'जातउ' आ. ५. 'लीधी' आ. ६. 'किम साहइ' आ. ७. 'राजवार मनि' ८. 'प्रति' आ. ।

सभा-समाहि जे बोलिउ राइ, ते सूदउ जाणीनइ जाइ।
एउ सुपुरिस-नइ संबल साथ, एक हिऊं नइं बीजउ हाथ ॥११८॥

[सदयवत्स मातृ-वंदना]

वलीय वीर-मनि वसिउ विचार, जातउ जणणी करूं जुहार।
जस उअरि वसिउ दस मास, पाय प्रणामूं जणणी तास ॥११९॥

(गाहा)

जस ऊअरि वसीअ वासं, नव मासं दिवस अट्ठ अग्गलिया।
पय पणमवि जणणी, तास करिसु निवासं विदेसम्मि ॥१२०॥

(अडयल्ल)

जई लागु जणणी-तणा पाय,
आसीस-वयण उच्चरइ माइ।
"कहि पुत्त! अज्जु चलचित्त काँई ?"
"अम्ह ऊपरि कीय[1] कुदिट्ठी राइं॥१२१॥

[पिता रोष कथन]

"मइं" मारिउ आसण-तणउ मत्त,
तीणि कज्जि कोप वहु छरइ तत्त।
जे पामिउ कल्लि दीउ पसाउ,
ते सयल अजूता जुत्त आउ ॥१२२॥

(दूहा)

आयस राउ-तणा पखइ, जे मइं कीधू आल।
बाल-स्त्री ऊगारिवा, कुंजर सिरि करवाल ॥१२३॥

एक अबला नइ बंभणी, गब्भिणि गजि आरोडि।
जु देखी ऊवेखीइ, तु क्षित्री-कुलि [2] खोडि ॥१२४॥

१. 'कुदिट्ठ' अ. २. 'खित्रातण' अ. 'आ' मां १ लीटी वधारे: 'तत्त जे पामिउ कालि पसाउ दाउ, ते आज सयल हऊ जिवाउ'.

बन्धेवा नइ कारणि, बहु माणस मेल्यां राइ।
जउ मनि मारण चींतवइ, तउ करि केत्यउ जाइ ? ॥१२५॥

[अन्यायी राजाज्ञापालन अशक्यता]

राउ-अन्याय जिसां सहइ, बेटा बंधव बाप।
प्रहि ऊगमि तीह पहु-तणइ, मुहि दीठइ बहु[2] पाप ॥१२६॥

एकि अस्या छइ इह-तणइ[3], साहसवन्त सुभट्ट।
जे रणि संगमि अंगमइ, गुडीय महागज घट्ट ॥१२७॥

'रूठइ[4] जीवन जोखिम-ह, त्रूठइं पयड़ पसाउ।
[सदय भणइः] स्वामीपणा, तीह जूठउ जस-वाउ ॥१२८॥

जस असंख सीआल-सिउं, इक्क सरोवरि सीह।
पीइ जल जमलां[5]-रहीय, लोपी न सकइ लीह ॥१२९॥

एक भलेरूं भोगवइ, राजा-पाहिइं रज्ज।
अधिपति-पणूं एतइं अधिक, जे सहू मानइ मज्झ ॥१३०॥

राय-धम्मु तिहि[6] रायनइ, रूडूं[7] दीसइ रज्जि।
जे अन्याई[8] अप्प-पर, लेखइ समउ सहज्जि" ॥१३१॥

[माता वचन]

"देसाउरि दिन केतला, जाइस रूठइ राइ ?।"

[सदयवत्स वचन]

"देवि ! म [9]चिंतिसि दोहिलउ, वलिसु वहिलउ माई !" ॥१३२॥

---

१. 'वे बांधवा' आ. २. 'हुई' आ. ३. 'प्रभु-तणइ' आ. ४. 'रूठइ भेषिभ नारि, तूडईं नहीं य' आ. ५. 'जमलां रहिया' अ. ६. 'तेडराउ नउ' आ. ७. 'रूडइ-राषइ' आ. ८. 'अन्याय' ९. 'वरिसि' आ.

श्रवणि सूं आले[1] पाडिऊं,[2] कडूआं कथन कुमारि।
धूजी धर-मंडलि पडी, जाणे[3] लीध अमारि ॥१३३॥

[माता–दुःख-मूर्च्छा]

बेटा-केरे बोलडे, मा-मनि वसिउ विसाद।
उत्तर आपेवा[4] भणी, नवि नीसरिउ साद ॥१३४॥

चित्ति चटकउ नीसरिउ, गहबर गलइ न माइ।
[5]ऊसासे नीसासडे, जाणे जीवी जाइ ! ॥१३५॥

वाला-केरे वींजणे, वारिणि-[6] छंटइ वाउ।
मइं-हत्थिइं सूदउ करइ, जणणी जीवेवाउ ॥१३६॥

[7]महूरति एक जि माउली-मनि मूरछा जि भग्ग।
"जावा दि जणणी ! भलूं:" [बेटउ बोलण लग्ग] ॥१३७॥

[सदयवत्स वचन]

"जाऊं तउ जीवी ऊगरूं, रहूँ तउ[8] रूसइ राउ।
कहि,[9] जणणी ! किम सांसहइ, ए एवडउ अन्याउ ? ॥१३८॥

[10]मंत्र मइलउ मंती-अणु, जे पइसिउ पहु-कन्नि।
तीण माडी ! मूं मारिवा, राउ सोधिसिइ रन्नि ॥१३९॥

(गाहा)

तं तं जंपंति कहा, दूअणा होइ सव्व सारिच्छा।
जम्मंतरे न होइ, जं नवि होइ जम्म'-[11]जम्मेहिं ॥१४०॥

---

१. 'सांभल्यु' आ. २. 'करूउ' अ. ३. 'जीवीं जइ' अ. ४. 'आपेवा बणउ' अ. ५. 'तं संभलि सूदासही, जाण जणुणीअ मारी' अ. ६. 'बीजी' आ. ७. 'अमूरति जणणी जवा दिइ नहीं' अ. ८. 'इअइ' आ. ९ 'कहइ भाडी' १०. 'मंत्री मयल्लु-मह-मलिण' आ. ११. 'लकुवेहिं' इ.।

नह मास भेय जिणाणो,[1] दोसुहलो हट्टि-खंडण समत्छो।
तह विहि मज्झ वलयउ, नमो खलो नहि रण-सरिच्छो ॥१४१॥

(दूहा)

भद्दा भूप भूयंगमह, ए मुह[2] दुहिलां हुँति।
जे नवि जाणइ जालवी, ते वहिलां विणसंति ॥१४२॥

[माता-दत्त शकुन-भोजन]

कारण जाणी कुमरनूं, बईसण मंडिउ मंड।
सउण-भणी सीरामणी, प्रीस्यूं[3] दहीं अखंड ॥१४३॥

सद्द[4] सुणवि धणि धवलहर, अंतरि[5] जोयुं जाम।
कंत करइ सीरामणी, सासू-मुह थिऊं स्याम ॥१४४॥

जणणी जिमाडीय[6] अप्पिऊं, बीडूं बिहु करि लिद्ध।
सदयवच्छ सामलि-तणी, भली भलामण दिद्ध ॥१४५॥

[सहयात्रा-गमनोत्सुका पत्नी सामली]

मा मोकलावी चल्लिउ,[7] असिमर[8] लेई हत्थि।
पाछलि[9] नेउर-सर सुणी, सामलि आवइ सत्थि ॥१४६॥

पय खंचवि[10] प्रमदा कहिउं,[11] "देवि ! म धरिसि दुहिल्ल।"

[सूदा-वचन]

"सुणि सामलि!" [सूदउ भणइः] "आविसु वली वहिल्ल ॥१४७॥

(अडयल्ल)[12]

मनि अप्पणइ सुणिन मनि माणिणि !।
किम पाय पंथि पुलिसि ? ओ माणिणि !।

---

१. 'जणपोदो मुद्ध लोहटि' इ. २. 'चुहु' अ. ३. 'दीधूं' आ. ४. 'सूर' आ. ५. 'उतरि जऊं' अ. ६. 'यमाडी' ७. 'साचयु' आ. ८. 'असिउउण' ९. 'रिण भिणइ' आ. १०. 'षांची' आ. ११. 'कहई' अ. १२. 'घात' अ.

हूं गय-गामिणि ! गमिसू[1] गिरी-कंदरि,
रहि रामा ! [2]अमिय-लोयणि ! मंदिरि" ॥१४८॥

[सामली-वचन]

"जे सूर नर साखि करी, बापिइं बांधियां बेह ।
सुणि सूदा ! [सामलि भणइः] ते किम छूटइ छेह ? ॥१४९॥

[नर-विहीन नारी-प्रतिष्ठा]

नर [3]विण नारी [4]एकली, लग्गइ कोडि कलंक ।
अग्गइ एक मइं संसहिऊं, मुख-उप्पम जि मयंक ॥१५०॥

नर-पाखइ नारी-[5]तणइ, राउल [6]जाणइ रन्न ।
रन्नि जि प्रीय-सरिसी [7]पुलइ, राउल मानइ मन्न ॥१५१॥

शशि-विण निशि, दिशि दिवस-विणु, जिम नदी विणु-वारि ।
[8]तिम सूदा ! [सामली भणईः] नर विणु न सोहइ नारि ॥१५२॥

माइ बाप बंधव [9]बहिनि, पोढी पीहर वेडि ।
[10]मइं मेल्ही जस- कज्जिहिं, कंत ! न छंडूं केडि ॥१५३॥

जे [11]सोहिलइ 'स्वामी' भणइ, दोहिलइ छंडइ पूट्ठि ।
नारी रूपी निशाचरी, जाणे [12]देव ति दुट्ठि ॥१५४॥

स्वामी ! सुहिल्ले दीहडे, सहुको वलगइ सत्थि ।
भाई [13]भी छति भामिनी, जे आदरइ [14]अणत्थि ॥१५५॥

---

१. 'भामिसु' २. 'मृग लोयणि' आ. ३.'पाषई'आ. ४. 'तणइ' आ. ५. 'सनइ' आ. ६. 'मानइ' आ. ७, 'भलू' आ. ८. 'सुणि' आ. ९. 'वहू' आ. १०. 'तह्म करणि मइ परहरी' आ. ११. 'सुहिलइ दीहडे दिइ' दुहिल्लिइ'अ. १२.'देवविध्ध' आ. १३. 'भीछह' अ १४.'अत्थि' आ.

[सदयवत्स-सामली प्रयाण]

अणबोलिउ चालिउ चतुर, नारी-[1]निश्चउ जाणि।
सामलि सासू-पय नमी, साथिइ थई सुजाणि ॥१५६॥

पय लगंतां प्रीय जणणि, "होयो अबिचल आयु"।
एहि विवछिनू वयण सुणि, अमृत आरोगु माई[2] ॥१५७॥

(छंद पद्धडी)

गय-गमणी रमणी तुर गति गमंति,
[3]झड अनिल लग्ग अंगिहि नमंति।
पय-पंकजि लंक [4]तलि वडवडंति,
पति-भत्ति चित्ति [5]धरि चडवडंति ॥१५८॥

[सावलिंगी सामली रूप-वर्णन]

जस जंघ-जूअल वर रंभ-थंभ।
[6]पिथल कि उरथल करिण-कुंभ॥
कर-पल्लव नव-शाखा अशोक।
सोवन्न वन्न साम-शरीर रोक ॥१५९॥

मुख-कमल अमल ससिहर-सरिच्छ।
निलवटि तिलय ताडीक मच्छ॥
कुंडल कि कन्नि पायार सार।
कोसीस निकर परिगर अपार ॥१६०॥

तिल-फुल्ल[7] नास-संजुत्त मत्त।
[8]त्रुटि दाडिम दंत, अहर राग-रत्त॥
अंजन सह खंजन सरिस नेत्त।
सीमंत-कुंत किरि [9]मयर-केत्त ॥१६१॥

---

१. 'निश्चल मन' अ. २. 'ढूंउ' अ. ३. 'कल अनल' आ. ४.'तिचउ वडंति' आ.५.'करि पउवडंति' अ. ६. 'प्रच्छल' आ. ७.'कुसुम नासिका' आ. ८. 'तुडि' आ. ९. 'मयरि' आ.

दूइ भमहि काम-कोदंड खंड ।
कडि [1]बिब प्रलम्बित वेणि-दंड ॥
उरि हार तार श्रेणी समान ।
[2]थण-मंडल अवर न उप्पमान ॥१६२॥

मंजीर चीरि आवरीय सुअंगि ।
सारिच्छी सिरि सा सार्वलिगि ॥१६३॥

(दूहा)

सुखासण आसण-पखइ, चरण न धरणिहिं दिद्ध ।
सा सामलि पाली पुलइ, प्रीय-गुण-बंधणि बद्ध ॥१६४॥

[सार्वलिगा वचन]

"सुणजि [3]सदय कुमार ! हूँअ, नयरी-तणइ नीसारि ।"
वामंगी पूछइ विगति, सार्वलिगि सु-विचारि ! ॥१६५॥

भरि खप्पर भणती 'उदउ', जोगिणि जिमणी जाइ" ।

[सदयवत्स वचन]

"सुणि सामली ! [सूदउ भणइः] तूसइ त्रिभुवन-माई" ॥१६६॥

[शकुन मीमांसा]

अबला अंगि अलंकरी, कोरइं वस्त्रि कुमारि ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] निश्चइं लाभइ नारि ॥१६७॥

हय सुपल्हाणु संमुहुउ, [4]गलि गज्जंतु गज्ज ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] रानि [5]भमंतां रज्ज ॥१६८॥

---

१. 'ढलति लंब' आ. २. 'तन मंडन उरवर-सिउ' अ. ३. 'सदय कुमार नइ' आ. ४. 'गज्जइ गज्जराज' आ. ५. 'वसंती' आ. ।

बायस जिमणउ ऊतरइ, [1]डाउ ऊतरइ स्वान ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] पगि पगि [2]पुरिस निधान ॥१६९॥

खर [3]डाबउ सस्वरु करी, जउ किरि जिमणउ जाइ ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] सगपणि कलहु कराइ ॥ १७० ॥

तरु ऊपरि तेतर लवइ, [4]धूडि सर शिवा करंति ।
सार्वलिंगि ! [सूदउ भणइः] एक्क अणेक वरंति ॥१७१॥

अधूरां पहिलइ पुहुरि, जंगलि जिमणां जाइ ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] मिलीइ [5]सुअण-समाहि ॥१७२॥

छींक डाबी धाह जिमणी, [6]भुंडनइ मुखि मांस ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] सफल मनोरथ तास ॥१७३॥

संडसु सारसु खर तुरीय, डाबी लाली हुंति ।
सुणि सामलि ! [सूदउ भणइः] अफल्यां [7]तांह फलंति ॥१७४॥

वामा देवा वामा वायसी, वामी मीज भुकंति ।
मंमुंअ उरभय पुनह, विहू नाजि पामंति[8] ॥१७५॥

[गुणवान प्रशंसा]

(चउपई)

राजा-गुणि राउत रणि रहइ, प्रीय-गुणि प्रमदा दोहिलउं सहइ ।
गुण-विण कोइ न किहनइ गमइ, जे गुणवंत ते [9]सविहूंगमइ॥१७६

---

१. 'हुइ सावडू स्वान' आ. २. 'परख' आ. ३. 'डाबी दिसि ऊतरइ सुर करि'. आ. ४. 'धुडिइ सूडि सरि सेव' आ. ५. 'सजन सुथाइ' आ. ६. 'वारणो आलू' आ. ७. 'वृक्ष' आ. ८. 'आ' प्रति०में नहीं ९. 'सवि करइ' आ.

[सहनशील सामली]

[1]सामलि चालंती मन-रंगि, भूखी त्रिसी नवि जाणइ[2]अंगि ।
मारगि नई-नीझरण-निनाद, मधुरा मोर सुहावा साद ॥१७७॥

तरुअर-तणइ [3]तलि सीली छांह, वाट-घाट विलगइ वर-बांह ।
कंद [4]मूल फल अंब [5]अहार, इणि परि गम्या दिवस दसबार॥१७८

[निर्जल बन-प्रयाण]

पुहुता परवत पइली तीर, आगलि खारू रण, नही नीर ।
सीसि सुर, तलइ वेलू-ताप, सार्वलिंगि [6]त्रणि त्रिसा प्रलाप ॥१७९।

[सामली-प्रश्न]

(दूहा)

"नाह ! कुरंगा[7]रंण-थलि, जल विण किम जीवंति ?" ।

[सूदा उत्तर]

"नयण-सरोवर प्रीति-जल, नेह-नीर पीयंति" ॥१८०॥

[सामली-प्रश्न]

"रत्ति न दीठु पारधि, अंगि न [8]लागु बाण ।
सुणि सूदा ! [सामलि भणइः] इह किम गया पराण ?" ॥१८१॥

[सूदा उत्तर]

"[9]जल थोड़ूं सनेह घण, तरस्यां बेऊ जणांह ।
'पीय' 'पीय' करतां सूकी गउ, मूआं दोय जणांह !" ॥१८२॥

---

१. 'चालंती रनि वनि मन रंगि' अ. २. 'भंगि' अ. ३. 'तीरि' अ. ४. 'फूल' आ ५. 'ऋपार' अ. ६. 'तव' आ. ७. आ. ८. 'रत्रि न देखूं' आ. ९. 'जणि' आ.

(चउपई)

जिम हीमइं [1]कमलिणि कुरमाइ, जिम वसंति परजालइ जाई।
तिम जल विण सामलि-सरीर, [2]देखी करइ विमासण वीर ॥१८३

[अद्‌भुत प्रपा-दर्शन]

दह दिसि [3]निरखइ नयणे जाम, पाधरि परब भरइ स्त्री ताम।
ते देखी नर हरखिउ हीइ, इसी [4]वाट विसमी न रहीय ॥१८४॥

वहिलउ थई पुहुतउ तीणि ठाहि-'जस भय-भंग नहीं मन मांहि।
ऊभी अबला दीठी द्रेठि, मांड्या गोला [5]मांडव-हेठि ॥१८५॥

शीतल जल सरवइं सवि ठामि, जीणि दीठइ मनि [6]भाजइ श्राम।

[सूदा-वचन]

[7]"माई" भणवि शिर नामइ वीर, वहिलउ थई [8]नइ मागइ नीर १८६

"बाई ! वार म लाइ, स्त्री श्रीसी," तीणिइं बोलइं ते बईअर हसी।
आऊं [9]अन-जाण पहुतउ आघ, जाणे किरि वउलावइ बाघ ॥१८७

[माता हरसिद्धि-प्रपा]

इणइं परबिइं कीजय पाप, आई [10]बाई म बोलसि बाप।
पाणी पलीथ न पाइ कोइ, एह परब हरसिद्धिनी होइ" ॥१८८॥

'लीजइ लोही दीजइ नीर', तिणि वातिइं [11]विलकिलिउ वीर।
"देस्युं लोही, वार म लाइ, प्रमदा त्रिसीय पाणी पाइ" ॥१८९॥

---

१. 'पोइणि' अ. २. 'पेखी वयल विमासइ' श्रा. ३. 'नयणि निहालइ' श्रा. ४. 'वात विमासी' श्रा. ५. 'मंडप' श्रा. ६. 'हुउ विश्राम' श्रा. ७. 'शरमनी नइ साहसवीर' श्रा. ८. 'नइ' अ. ९. 'श्रापन जाणइं श्राघ' श्रा. १०. 'माई म बोलसि' श्रा. ११. 'व्याकुलीउ' श्रा.

नारि वारि करवउ करि भरी, सावलिगि साहसी संचरी ।
जउ [1]तरुणी फीटउ त्रिष-ताप, "वोल आपणउ पालिन वाप:" ॥१६०

[सूदा-रक्तदान प्रयत्न]

नर [2]नीसंक, न वयणि विरंग, अणीआलिय मुहि ऊजिउ अंग ।
मच्छरि चडिउ छेदइ नस मास, न लहइ लोही-तणउ निवास ॥१६१

[3]वामइं करि सिर साही वेणि, जिमणइ जिम-दंड ताकी तेणि ।
जउ मस्तक [4]वाढइ मन-शुद्धि, तउ हसी हाथि[5]साहि हरसिद्धि ॥१६२

[प्रसन्न हरसिद्धि-वचन]

करि [6]झालीनइं कारण कही: "साहसीक तूं सूदउ सही ।
अ मइं जोइऊं ताहरूं माह, तूं [7]अजीह ऊजेणी-नाह ॥१६३॥

ऊजेणी माहरू अहिठाण, वोजूं पाटणपुर पहिठाण ।
हूँ बउलावा आवी वीर !, जोवा ताहरूं साहस धीर ॥१६४॥

हूँ जोगिणि तूठी हरसिद्धि, मागि मागि मनवंछित [8]रिद्धि ।
ताहरा [9]पवरिस नही कोइ पार तूं सूरा सविहूं-शृंगार" ॥१६५

[सदयवत्स देवी-वर-याचना]

"जूअ-संग्रामि ठामि [10]वहू जइत्त, [11]परमेसर-सूं पामे पहित्त ।
प्रभु ऊठीनइ लागउ पाइ, मया किह्वारइं म[12]टालिसि माई !" ॥१६६

[वर-प्रदान]

काली कंक लोहनी छुरी, [13]साथिइ काली कउडी खरी ।
ए बि आप्यां 'बेटा' भणी, 'जय' जंपवि चाली जोगिणी ॥१६७॥

---

१ 'तिति त्रषानु भागु ताप.' २.'नीसंकपण नइ नव रंग, अणी आसी मुहि उरइ.' अ. ३.'वाम करिइं करि' आ. ४. 'छेदइ मनसिद्धि' आ. ५. 'साहिउ'आ. ६.'सारी नइ' आ. ७.'अभंग' अ. ८ 'सिद्धि' आ. ९.'साहस न लहूं' आ. १०. 'बहु' आ. ११. 'परमेसर तूं पामे' आ. १२. 'मेल्हसि' आ. १३. 'बीजी आपी' आ. ।

[1]जोगिणी वली, टली ते परब, हुई वीर-मनि बिमणी बरब ।
जे भव भगति न लाभइ सिद्धि, ते हेलां [2]तूठी हरसिद्धि ॥१९८॥

रलीयाइत थिउ चालिउ राउ, वनिता-चित्ति वसिउ विषवाउ ।

[पति-दु:ख कारण सामली-क्षमायाचना]

"करूं अ बीनती बे कर जोडि, प्री ! माहरी पग-बंधण छोडि॥१९९॥

तइं [3]मूं पाणी पीवा काजि, मस्तक ऊडविउं महाराजि ।
मइं आविइं गुण होसिइं एह,आगइ दूख,नइ सूकिसि देह!॥२००॥

[पीहरमां मूकवा विनंति]

[4]पसाउ करी मूं [5]पीहरि आवि,मूं मेल्ही नइ स्वामि ! सिधावि ।
जातां कोइ न करइ [6]पचार, वली सव्हारइं करयो सार ॥२०१॥

[अबलाए चींतविउ उपाउ], तिहां [7]आव्यां तउ राखिसिइ राउ ।
दाखिन पाडी देसइ देस, [8]रहिसिइ तिम राखिसिइ नरेस" ॥२०२॥

वनिता-तणां वयण [9]नय-वाच, सदयवच्छि ते मान्यो साच ।
"[10]मेल्हिसु लेई पाद्रि पहिठाणि,जई [11]ऊलगि सु अवरि अहिठाणि२०३

ऊलग लेई नइ आणूं करूं, तां लग स्त्रीइ-स्यूं केत्थउ फिरूं ? ।
जिहाँ उलगस्यूं लहिसिउं तिहाँ लाख,
प्रमदा-पीहरि न [12]मेल्हउ पाख" ॥२०४॥

प्रमदा-मनि पीहरनूं राज, [13]चिंतइ कंत अनेरूं काज ।
'मनि बिहु जणां बोल जूजूउ', ए ऊखाणउ साचउ हूउ ॥२०५॥

१.'योगिणि तणी बुनी जु' अ. २.'तूठी' आ. ३.'मूं' अ. ४.'मया' अ. ५.'मझ' आ. ६.'ऊचार, वली वहिली' अ. ७. 'गयां' आ. ८.'जिम पण' अ. ९. 'मनि' आ. १०. 'लेई मूंकिस पाटण' आ. ११. 'उलग्योस' आ १२.'मूंकिस' अ. १३. 'कंतह मनि' अ. ।

[सदाशिव वन-प्रवेश]

करइ वात वे चालइ वाट, छांडिउ रण्ण नइ छांड्या घाट ।
आगलि ऊमटिउ आराम, जिहां छइ सकल सदाशिव-ठाम ॥२०६

जिणि वनि [1]बारह मास वसंत, दीसइ कोइ न [2]पामइ अन्त ।
नहीं पापीयां-जीव प्रवेस, इसी [3]अछइ मरज्याद महेस ॥२०७॥

मोर मधुर-सरि करइ निनाद, कोइलि-[4]तणा सोहावा साद ।
सुसर शबद सूडा सालही, भमइ भमर [5]माल्हइ मालही ॥२०८॥

[6]सुरहा सीत सूं आला वाउ, जे लागा तनि टालइ ताउ ।
सवे सदा-फल रूडां रूख, [7]जेहनइ दरसणि भाजइ भूख ॥२०९॥

जिणि वनि योगी-[8]यति विश्राम, जिणि दीठइ [9]मनि भाजइ भ्राम
[10]पुहुतउ वीर तेह वन-मांहि, हूउ हरिख बिहु मन-मांहि ॥२१०॥

[वन-श्री वर्णन]

(छंद पद्धडी)

तिहां दिट्ठ तरूअर अति [11]कमाल ।
जावित्तीय जाईफल तज तमाल ॥
वनि अगर तगर चंदन [12]किवार ।
कंकोल कलंब घनसार सार ॥२११॥

कदली दल कोमल फल [13]अलंब ।
सहकार फणस फोफलि [14]बुलंब ॥
तरूअर सिरि गुण गहगही गेल्लि ।
नवरंग निरूपम [15]नाय-वेल्लि ॥२१२॥

१.'बारइ' आ. २. 'चांरवीइ' आ. ३.'मायादी छइ' आ. ४.'नादि' आ. ५.'मालइ ते मही' आ. ६.'सरही' आ. ७.'जिणि दीठइ मनि' आ. ८.'तणा' आ. ९. 'मुनि' आ. १०. 'पुहुतां ते बेहु.' अ. ११. 'अति भमाल' आ. १२.'तिवार' अ. १३. 'गलंब' आ. १४.'कुलंब' आ. १५.'नाग वेल्लि' आ. ।

[1]महमहइ मलय मालय महुल्ल ।
सेवंत्ती जत्ती बकुल वेल्ल ॥
कणवीर कुसुम श्रीखंड सार ।
रयचंपु [2]पाडल जूहीय अपार ॥२१३॥

केतकी अट्ठदल कमल-वृंद ।
कृष्णागर वालु करल कंद ॥
वंकडीय कुलीय पयडीय पलास ।
[3]चिहु पखि वन पाखलि ति वांस ॥२१४॥

तिहि-मज्झि सजल सरवर [4]सुरंग ।
उत्तुंग पालि पूरीय तरंग ॥
तिहां त्रिविध कमल कैरव कमोद ।
रस-[5]रुद्ध हंस पामइ प्रमोद ॥२१५॥

तरवरइं तीरि बहु बतक कक्क ।
चिहुँ पखे [6]कुरलइ चक्कवक्क ॥
नवकुंड अमीय उप्पम ति नीर ।
शीतल सुअच्छ गहिरूं गंभीर ॥२१६॥

[कैलासपति-मंदिर वर्णन]

[7]तस अग्गलि उमयापति-अवास ।
कैलास छंडि जिणि कीधु वास ॥
भड निबीड तुंग तोरण पयार ।
अपुव्व पुष्प दीसइ दूआर ॥२१७॥

---

१. 'महमहन्ति अति मलया अमाल,फूल सेवंत्री जाती विकल वाल' अ. २. 'पाउलनु नही' आ. ३. 'वन पाखलि बिहुपखि शव-निवास' आ. ४. 'अङ्ग' आ. ५, 'लीद्ध' आ. ६. 'करलइ' आ. ७. 'तिहि' आ. ।

थिर पथरि मंडीय थोर थंभ।
पूतलीय-[1]रूप्प विभ्रम कि रंभ ॥
मंडपि गवक्ख चिहुँ पक्खि चार।
मणिमइ सलाका सिखर सार ॥२१८॥

कणयमइ दंड ऊडइं सहित्त।
लहलहइ धवल धज वड विचित्त ॥
[3]आसन्नउ आगलि सोहइ संड।
पढिआर [4]नंदी चंडी प्रचंड ॥२१९॥

[सूदा-सामली मन्दिर-प्रवेश]

(चउपई)

निर्मल नीरि पखाल्या पाउ, [5]मानिनी स्यूं मन-रंगिइं [6]राउ।
जाँ जाइ जगदीसर भणी, [7]देखी मंडपि महिला घणी ॥२२०॥

[हरगौरी-प्रणाम]

बाहरि-थिकाँ बे जोडइ हाथ, प्रणमिउ प्रभु जडधर जगनाथ।
गरूउ गजर गभारा-माँहि, अबला एक तिहाँ ईस आराहि ॥२२१॥

वारू वन ते पेखी मनि, आणदिउ ऊजेणी-धणी।
पहिरी धोती सबल साँचरिउ, राणी-सरसु रा नीसरिउ ॥२२२॥

सामली पूछिउं [8]सूदा-पाहिं, वनिता-वृंद [9]महावन माँहि।
प्रीय! प्रासाद-तणइ जालीइ, [10]ए कारण निरतिइ निहालीइ॥२२३

१.'अनोपम भ्रमति' आ. २.'कनक मचिइ कलस दंड' आ. ३.'आवास' आ. ४.'तन सोहइ' आ. ५.'प्रीय मानिनिस्यूं' आ. ६.'जाई' अ. ७.'पेखइ' आ. ८.'प्री पासि' आ. ९.'हइवासी' अ. १०. 'कुतिग नितति इ' आ.।

(गाहा)

शिव जोय समे उपवासत्त, ये मज्झि रयरिण सर-मज्झे ।
जल-केलि-कररणं मुक्कं, नीरस तरुइ नील [1]पंगुररणं ॥२२४॥

तह पंगुररण-प्रभावे, पल्लवियउ सुक्क तरुअरो तिवारो ।
तिरिण पल्लवेरण पुज्जीय शिव, वंच्छंति सदय भत्तारो ॥२२५॥

अवत्थयाय बालावत्थं, गहिऊरण सुक्क वृक्षारणं ।
पिक्खेवि रूवराई, परणमिसु सुपल्लवा गौरी ॥२२६॥

[सदय-पति-प्राप्त्यर्थ षोडशोपचार पूजन]

(चउपई)

गलते [2]कृतिका किद्ध सनान, धवली धोति-तरणू परिधान ।
निर्मल नीरिइं भरवि भृंगार, ढालइ ईश अखंडित धार ॥२२७॥

कापडि-स्यूं आलूंछइ अंग, बावनि चंदनि चरचइ चंग ।
बहु बिल-पत्र कुसुम कर लेउ, रचइं विविध-परि [3]पूजा देउ ॥२२८

कस्तूरी-[4]सिउं चंदन घनसार, धूप अगर-तरणउ उपचार ।
नव नैवेद्य [5]अनइं आरती, करइ कंत-काररिण आरती ॥२२९॥

सवे समी रूडी रुद्राख, जपमाली-स्यूं जपइ सु लाख ।
नीम न चूकइ निश्चउ घरणउ, [6]लय अखंड लीलावई-तरणउ ॥२३०

[लीलावती-सखीमंडल-कृत गीत-नृत्य]

आपी वापिइं [7]सोहली सही, सवे समारणी वय सोलही ।
तीरिण अवसरि ते मांडइ [8]रंग, वाजइं गुहिरां मधुर मृदंग ॥२३१॥

---

१. टूंक २२४ थी २२६ 'आ'. मां नथी. २. 'करते' आ. ३. 'तेउ' आ. ४. 'घरल्ले' आ. ५. 'करइ' आ. ६. 'लिम खंड' आ. ७. 'साथिइ सोलसो वइं समाणी सवे.' आ. ८. 'जंग' आ.

भूंगल भेरि तिवलि नइं ताल, वाजइ वंस [1]किरडि कंसाल।
रूपक राग रंगि आलवइ, चतुर-तणां ते चित्त चालवइ ॥२३२॥

हस्तक हाव भाव बहु धरइ, नव नव पाडि पांगति करइ।
आपापणी कला [2]भूटवइ, जे तपि खरा तेहनइं खूटवइ ॥२३३॥

तास भगति आणंदिउ ईश, वंछित-दायक जे जगदीश।
तीणइं कांई कीउ उपाउ, जिणइं आणिउ ऊजेणी-राउ ॥२३४॥

[सूदा-प्रति सार्वलिगी-प्रश्न]

सार्वलिगि पूछइ पति-रेसि, तुय पुहुती प्रासाद-प्रवेसि।
जई प्रभु-कारणि करइ प्रणाम, अबला [3]सवि आवरजी ताम ॥२३५

स्त्री एकली अनोपम रूप, ए कांइ शिव-तणू सरूप ?।
दीसइ नहीं सखीय[4] न साथ, ते कारण जाणइ जगनाथ !॥२३६॥

कइ को नागलोकनी नारि ?, कइ को रूडी राजकुंआरि ?।
कइ कहि अमरलोकनी एह ?, सवे सुहासणि पडिउ संदेह ॥२३७॥

[सार्वलिगी-प्रति लीलावती-सखी-प्रश्न]

तीह-मांहि [5]साथिइ थई एक, जे [6]बूझइ बोलिवा विवेक।
पूछी वात विनय-सिउं तेणि, "कहु बहिनि ! दिसि आव्यां केणि?"॥२३८

[सार्वलिगी-उत्तर]

"आव्यां दिसि ऊजेणी-तणी": राजकुमरि सा वाणी सुणी।

[लीलावती-ध्यानभंग]

संखेपइ शिव करी प्रणाम, लीलावई लय छांडिउ ताम ॥२३९॥

---

१. 'करिडि' आ. २. 'प्रगटवइ' आ. ३. 'आभूजी' आ. ४. 'तम' आ. ५. 'ऊभी' आ. ६. 'ऊवसि' आ.

सार्वलिंगि-सिउ सांई लिद्ध, वहु-मान मन-शुद्धिइं दिद्ध।

[लीलावती-प्रश्न]

'बहिन' भणीनइ साही वांहि: "किम एकलां पधार्यां आंहि ?" ॥२४०

[सार्वलिंगी-वचन]

"नहीं एकलां, अछइ भल साथ, हूं जुहारण आवी जगनाथ।
तुम्हे तुम्हारू कारण कहु, पाखलि अबला ऊवर सि रहु ? ॥२४१॥

राजकुंअरि कूंआरी अजी, आवी रानि राउलनइ तजी।
कुण तम्ह माय बाप ? कुण ठाहि ?
कइ कारणि तू ईश आराहि ?" ॥२४२॥

सार्वलिंगि जउ [1]पूछइ सही, लीलावती तइं कारण कहइ।

[लीलावती-वचन]

"पुहुर पंथ मुझ पीहर वेडि, हूआ छः मास वसंतां वेढि ॥२४३॥

(गाहा)

धरवीर-[2]राउ धूआ, मुहुसाले मुज्झ राउ नरवीरो।
वर वीर सदयवच्छो, वंछूं शिव-पुज्जिय अयि सहीए ! ॥२४४॥

कलिजुगि [3]कामुक-तित्थो, पत्थंतह [4]अत्थसारए सयलो।
खट मास अवहि [5]अग्गइ, मण-वंछिय दिइ माहेसो ॥२४५॥

(दूहा)

ते मूं आज अवद्धडी, पूगी [6]शिव पूजंति।
साँझ [7]समइ सूदउ मिलइ, कि [8]मूं मिलइ कियंति" ॥२४६॥

---

१. 'राउ लगनि' आ. २. 'धीआ' आ. ३. 'कामिक' आ. ४. 'सारइ सयल लोयस्सा' आ. ५. 'गमए' आ. ६. 'सवि' आ. ७. 'उरउ' अ. ८. 'मूं मिलइ उयंत' अ.

[सार्वलिगी-प्रश्न]

सार्वलिगि ते संभली, पूछइ [1]वयण विसेस ।
"तइं किहि दिठ्ठउ, किहि [2]सुणिउ, सही ! ए सदय नरेस ?"॥२४७॥

[लीलावती-वचन]

"रायंगणि राजा-तणइ, बोलइं बंदिण-वृंद ।
वीर-भणी ते वन्नवइ, सही ! ए सदय नरिंद ॥२४८॥

वीर [3]माहारउ माउलउ, तात वदीतउ वीर ।
वीर भणी सूदउ वरू, कइ दवि दहूं शरीर ! ॥२४९॥

जिम जिम पाणि-ग्रहण-नउ, अवसर जाइ अजुत्त ।
तिम तिम माय-ताइ-[4]नइ, चिंता चित्त बहुत्त ॥२५०॥

माय बाप सज्जन सविहूं, वात विमासी एइ ।
बारू माणस मोकली, बईठां बेटी देइ ॥२५१॥

कुमर किह्वारइं न आविसिइ, परणेवा परदेसि ।
तउ हासारथ होइसिइ, इम चींतवइ नरेसि ॥२५२॥

राय राणा भूमी भला, मागी रह्या महीस ।
माय बाप सहू बूझवी, सही ए सही न रीस[5] ॥२५३॥

तीणि कारणि तप आदरिउ, मइं महेसर-पासि ।
पूरी ईस आसि अनेकनी, [6]परतु छट्ठइ मासि ॥२५४॥

पुरुष न को पईसी सकइ, ए वनमांहि अजुत्त ।
आवइ कोइ किह्वार ते, जे हुइ [7]पुण्य-पवित्त ॥२५५॥"

---

१. 'वली' आ. २. 'सांभल्यु' आ. ३. 'अह्मारु' आ. ४. 'तनि' आ. ५. 'अ' मां टूंक २४३ नथी. ६. 'परता छठइ' आ. ७. 'पुनि' आ.

[सार्वलिगीं विमासण]

सार्वलिंगि ते संभली, चित्ति चमक्कइ लग्ग ।
[1]सूदि जि सउण-विचार कीय, ते मूं परतखि पुग्ग ॥२५६॥

(चउपई)

लीलावतीइ कारण कहीय, सार्वलिंगि ते संभलि रहीय ।
भ्रम चींतवइ अदीठइ भूप, सूदइं सहू संभलिउ सरूप ॥२५७॥

जाणी सूत्र तणूं जगदीस, सार्वलिंगि तउ धूणिउं सीस ।
हर साहमूं जोईनइ हसी, लीलावती-नइं विमासण वसी ॥२५८॥

[लीलावती-प्रश्न]

"गोरी ! गुज्झ कहंतां कांइ, माथूं धूणी मरक्यां कांइ ? ।
साचउं कहउं, सदाशिव आण, नहीतरि आहां आव्यां अप्रमाण" २५९

सूदइं सपथ दीजतउ सुणिउ, राजा-हृदइं बोल रणझुणिउ ।

[सामली-विमासण]

सामली वली विमासण पड़ी, वहितां वाट सउकि सांपडी ! ॥२६०

एक अण-कहइं तउ एहनूं पाप, बीजउ वली सदाशिव शाप ।
रवि [2]ऊगइ जु विहाइ राति, तउ ए प्राण तजइ परभाति ॥२६१॥

आगइ एक माहरइ काजि, मस्तक ऊडविउं महाराजि ।
आ बीजी पग-बंधण मानि, राजकुमरि प्रीउ पामिउ रानि ॥२६२॥

सार्वलिंगि अति ऊतावली, अण-बोलतां हुई आकुली ।
लीलावतीइ [3]मांडिउ लाग, ए मइं कांइ पाडिउ पाग ? ॥२६३॥

[लीलावती-वचन]

"बाई ! कां [4]अण-बोल्यां रहउ, कांई जाणउ तउ कारण कहउ ।"

---

१. 'सूदइं सकल विचारियां', अ. २. 'ऊगमणि विहाणी' अ.
३. 'पाम्यु' आ. ४. 'म म रहउ ? जु जाणइ', आ.

[सार्वलिंगी-वचन]

"अबला जे तइं आराधिउ ईस, ते जाणे तूठउ जगदीश ॥२६४॥

वली म कांई पूछिसि पछइ, वहिनि ! वाहिरि ते ऊभउ अछइ" ।
[1]सार्वलिगि-सुवचन संभली, क्षामोदरी सवे खलभली ॥२६५॥

[लीलावती-सदयवत्स-दर्शन]

लीली-गई लीलावई नारि, आवी ऊभी देव-दुआरि ।
निय नयणइ नर निरखइ जाम, [2]किरि मूरतिमय ऊभउ काम!॥२६६

(गाहा)

[3]लीलावय सारिच्छा, समवडि लीलस्स रायहंसस्स ।
उअरि वेणी-दंडो, पुट्ठिवि सोहइ ए हारो ॥२६७॥

[4](दूहा)

"लज्जा संकटि दिट्ठ, प्रीय बोल सवणु न जाइ ।
लिउ रे नयणां रिट्ठ, ध्रउ, जां नवि अंतरि थाइ" ॥२६८॥

(चउपई)

चलिउ सूदउ सहू सांभली, सार्वलिंगि [5]साथि जई मिली ।

[सूदा प्रति सार्वलिंगी-वचन]

भलउ भावि वीनविउ भूपः "स्वामी ! तुम्हि [6]सांभलउ स्वरूप॥२६९॥

ईश-सूत्र अवधारिउ आम, किहां ऊजेणी ? किहां आराम ? ।
कीधी वाड हूउ कूपसाउ, ते जाणि जगदीश-पसाउ ॥२७०॥

इम जावा जुगतूं नहीं कंत !, आ वनितानउ सुणी वृत्तंत ।
एक हत्या, वीजउ हर-लोप, कहितां वात म करिसिउ कोप ॥२७१॥

---

१. 'लीला वतीइ' आ. २. 'जाण मूरित वंतुकाम' आ. ३. 'अहिली-वयण समरि सा, समवइ लीलंमि राय हंसस्स' आ. ४. टुंक २६८ 'अ' मां नथी. ५. 'सीकिइ' अ. ६. 'सांभलु' आ.

[सउकि (सपत्नी) विवरण]

आदि-[1]सकति कीधउ आग्रहउ, स्वामी ! सउकि किसी हुइ? कहउ ।
माखण-तणी महेसरि घडी, तीणइ तउ उमया वीर [2]बीगटी ॥२७२

खेडि मांहि अधिपति अधभाग, बेटा वंधव लखमी लाग ।
[3]सविहू-पाहिइ सपराणी सउकि, [4]वर वहिंचवा चाली चउकि॥२७३

स्वामी ! कहिउ महारूं मानि, सिरजी सउकि [5]मिली सूं रानि ।
माहरी [6]कांई म करउ लाज, अण-परणइ अनरथ हुइ आज ॥२७४

दिनि एकइं आगमि छः मासि, राणी राउ वीनविउ विमासि ।
कुमरि-तणू कारण जाणीइ, [7]अति आग्रहु मांडी आणीइ" ॥२७५॥

[धारापति(लीलावती-पिता)-चिंता]

राणी-वयण विमासइ राउ, पुत्रि-तणी प्रीछवण-उपाउ ।
सदयवच्छ नवि [8]जाणइ शुद्धि, कालि कुमरिनइ तपनी अवधि॥२७६॥

धारानयरि-राउ धरवीर, सभां बईठउ साहसधीर ।
सुधि पूछइ कुमरि-नइ काजिः "कोई ऊजेणी आव्यउ आजि ? ॥२७७

लीलावतीइं लीधइ नीम, छमासि छइ थोडी सीम ।
"आणइ भवि अनेरउ [9]वरूं, कइ सूदउ कइ [10]जमहर करूं ॥२७८

फूल धतूरा धरणि पडइ, कइ महेसर-मस्तकि चडइ ।
त्रीजी गति नवि तीह लहीइ": तिम कुमरीइं हठ लीधउ हईइ ॥२७९

[बंदीजन-कथित सदयवत्स-समाचार]

राजा वयण सुणी तिणि वार, बंदिण एक करइ [11]जइकार ।
"हूं ऊजेणी आविउ आज, सूदा-सुधि सांभलि महाराज ! ॥ ८०॥

---

१. 'शकनि लीधु' आ. २. 'चीघटी' अ. ३. 'मिवहु' आ. ४. 'वर विहंचावइ ताडीउकि' अ. ५. 'वली' आ. ६. 'कांई करसि' ? आ. ७. 'आग्रह करीनइ आंहां' आ. ८. 'संधि' आ. ९. 'वरुइ' अ. १०. 'साहस करू' अ. ११. 'करवार' अ.

(दूहा)

ऊजेणी [1]अमरापुरी, अन्तर नहीं नरिंद ।
ऊजेणी पहुवच्छ [2]पहु, अमरावतीइ इंद ॥ २८१॥

इन्द्र-तणा आसण जिसिउ, मयमत्तउ मच्छराल ।
[3]सूदइ सोइ हत्थी हणिउ, [4]कज्जिहिं बंभणि-बाल ॥२८२॥

ते पेखवि [5]हरख्यु हईइ, कीयउ पुत्त-पसाउ ।
मुहत्तइ मंत जि [6]उद्दिसिउ, तिणि रोसाविउ राउ ॥२८३॥

सुद्द ति न रहिउ सांसही, राजा रोस बहुत्त ।
ऊजेणी [7]ऊजड करी, वीर विदेसि पहुत्त ॥२८४

चउकि चुहट्टइ जूवटइ, हूंतु वीर जूआर ।
नित नित मग्गणि मग्गीइ, [8]जिहिं मुंहि नहीं नक्कार ॥२८५॥

अम्ह सरीखा [9]अनेकि नर,-पाखलि पंखी बहुत्त ।
[10]ते सीदाता सदय-विण, ऊडी गया अनंत ! ॥२८६॥

[सदयवत्स-गुणप्रशंसा]

[11](छप्पय)

राय [12]कलां नल भूप, रूपिं कंदप्प-सरिच्छो ।
[13]वाचि जुधिष्ठिर राउ, साचि गांगेय परिच्छो ॥

प्राणि जिसिउ भड भीम, माणि बीजु दुज्जोहण ।
दानि कन्न अवतर्यउ, बाणि अज्जुण [14]वइरोहण ॥

---

१. 'अमरावती' अ. २. 'छइ' आ. ३. 'सूद्दि य् जि' अ. ४. 'बंभणि-केरी बाल' अ. ५. 'पुहुवच्छ पहु' अ. ६. 'आठविउ' आ. ७. 'उज्जेअ' अ. ८. 'नहु जपइ' अ. ९. 'तीणइ नयरि' आ. १०. 'सीदाइ' आ. ११. 'सटपद' अ. १२. 'कुलागम भूप' आ. १३ 'वचनि' आ. १४. 'रिड वीरत्ति' अ.

[1]खित्ति साहसि सुयसि, लीला अंगि अणुप्पमो।
इत्तिय गुणि पहुवच्छ-[2]सूनु, [3]न कोइ सुभट सूदा समो" ॥२८७

[धाराधिपति-प्रश्न]

(दूहा)

[4]रा पूछइ : "सुणि वंदीयण ! कुण दिसि कुमर पहुत्त ?"।

[वंदीजन वचन]

[5]"उत्तर ऊजेणहि- थिको, गिउ सामलि-संजुत्त" ॥२८८॥

(वस्तु)

भूप चिंतइ, भूप चिंतइ, निय मन-मांहि :।
"ए [6]कांई कारण शिव-तणू, सूदा प्रति जे राउ रूठउ।
[7]कामुककुल जगि जाणीइ, लीलावई[8] जि तूठउ।
वयणि विमासी चालीउ, राजा लोक-सिउ राउ।
उच्छव ईसर-अंगणइ, संपत्तउ समवाउ ॥२८९॥

(चउपई)

[9]लीला सूदउ सामलि संचरइ, वनिता सवे विमासण करइ।
[10]"कां जाई ? आठवइ उपाउ, तां राणी-सिउ [11]पुहुतउ राउ॥२९०
कोलाहल कीधउ कामिणी, बिइ वड़ वाहगि नद्धामणीः।

[सदयवत्स-वधामणी]

"अवसरि भलइं पधार्या आज, कुंअरि-तणां हिव सरियां काज२९१

---

१. 'कीरति साहस सिद्धि, जस लीला वयण' आ. २. 'तणु' अ. ३. 'कोइतेहं सुभट सूदा समउ' आ. ४. 'पहु पूछइ; कहि' अ. ५. 'का चालिउ ऊजेणी ! कथ जु' आ. ६. 'कांईअ परम लणउ सत्त, पुत्त पुहवच्छ रूसइ' अ. ७. 'कामिक लिगजु' अ. ८. 'लावइ तुठो' अ. ९. 'तां' अ. १०. 'जां कांई' आ. ११. 'आविउ' आ.

जस [1]काजि तप तप्पउ छमास, ते परमेसरि [2]पूरी आस ।
"स्वामी ! दिसि आणी अवधारि, [3]आ सूदउ नइ सामलि नारि२९२

[धारापति आगमन]

माहेसर प्रति करी प्रणाम, रा चंचलि चडी चमक्कयउ ताम ।
पूठउ-थिकउ [4]परि-थिउ सहू पूछिउ, [5]"सूदानइ जई सीकिइ मिल्यउ २९३

[बारहट्ट-वचन]

बारहट्ट बोलाविउ वीर : "सांभलि सूदा ! साहसधीर ! ।
ऊभउ रहउ, अवधारि सरूप, तूं भेटेवा आवइ छइ भूप" ॥२९४॥

बंदिण तउ बोलाविउ जाम, पय खंचीनइ [6]रहिउ ताम ।
तां राजा छांडी रेवंत, सांई [7]दीधू सामलि-कंत ॥२९५॥

[लीलावती-पिता स्नेह-वचन]

सावलिगि नइ नामइ सीस, 'पुत्रि'-भणी [8]बोलावइ पृहवीस ।
"माई महासति जे आगिली, ते तूं अ भगतिइ [9]दीसइ भली" ॥२९६॥

बारू वृक्ष एकनी छांह, [10]राउ सूदु बे बईठा तांह ।
ऊजेणी- अधिपतिनइं आधि, सदय-[11]भेटिइं हुई समाधि ॥२९७

[सदयवत्स विचित्र प्रश्न]

"ऊजेणी वसुधा विख्यात, सूदा नामि [12]अछइं सइं सात ।
मण-ओलखिइं म आदर करउ, वात विमासी बांहइ धरउ ॥२९८॥

ते किम [13]इम एकलउ भमइ ?, ते किम पालउ पंथि अवगमइ ? ।
तूं धारा-नयरी-नायक, हुं पाधरउ अछउं पायक !" ॥२९९॥

---

१. 'कामिनी जि तप नप्पु' आ. २. 'पूगी' आ. ३. 'आ' आ. ४. 'बहु परि थ्यु पछइ' आ. ५. 'सूदा-केडि जइनइ मिलइ' ६. 'जोइ' अ. ७. 'लीधु' अ. ८. 'ते दिइ आसीस' आ. ९. 'तइं तीठइं भावइ' आ. १०. 'राजा बेहू०' अ. ११. 'दीठइं' आ. १२. 'बसइं' आ. १३. 'एकलां वनमांहि' अ.

(दूहा)

बारहट्टि [1]इणिइ अवसरि, बंदियण बोलिउ इम्म : ।
"सूद! [2]ति सहू अम्हि संभलिउ, तू अ राउ रूठउ जिम्म ॥३००॥

ऊजेणी-अधिपत्ति तूं, आ धारा-[3]धरवीर ।
मेलउ माहेसरि कीउ, छंडि विमासण वीर !" ॥३०१॥

बंदिणि-केरइ बोलडे, वसिउ सूद संकेत ।
परण्या पाखइ न छूटीइ, ए सहूइ हर-हेत ! ॥३०२॥

[4]सिउण समत्थि म अवगणाइ, सूदइ सा महिलाउ ।
सावलिगि साथिइं सती, [5]तेह मुहु रक्खइ राउ ॥३०३॥

[लीलावती गुण-वर्णन]

(गाथा)

नर नारि सार परिवारे, पक्खलि [6]मिलिय नरिंद नर खंते ।
लीलावई लावण्य-वयणि, न वुली बोलीय बलिहार मज्झम्मि ॥३०४॥

अह लीलावई नामं, लीला-गई रायहंसस्स ।
उयरि बेणी पडिबिंबं, पुट्ठीय पडिबिंबिउ हारो ॥३०५॥

[7]शिव जोअ समे उपवासत्त, ये मज्झि-रयणि सर-मज्झे ।
जल-केलि-करणं मुक्कं, [8]नीरस तरूइं नील पंगुरणं ॥३०६॥

तह पंगुरण-प्रभावे पल्लवियउ, सुक्क तरूअर तिवारो ।
तिणि [9]पल्लवेण पुज्जिय शिव, वंच्छंति सदय भत्तारो ॥३०७॥

---

१. 'तेणइ' आ. २. 'तुम्हें सहू सांभलिउ' आ. ३. 'नयरी धरि' अ. ४. 'सूअण सवे मइ अवगण्या, सूदु अछइ सामइ' आ. ५. 'तेणइ' अ. ६. 'तेह मरां जेहिमि' अ. ७. 'शिव-योग उपवास समइ, पय-मझि' आ. ८. 'नी सस्य तरवि' आ. ९. तिणि पूजिसि, शिव-कञ्जि' आ.

[1]मउडद्धय मंडलीया, भूपाला सकल सूर सामंता ।
ते [2]अवगणिय आणग्रा, लीलावय लग्ग लग्न सुद्दे ॥३०८॥

[3]अधिपति अधिकारी सावि, सेणाहिव नारहट्ट बहु वंभो ।
पारणे पाणि-ग्रहणं किद्ध, सरिस सुदयवच्छस्स ॥३०९॥

[सदयवत्स लीलावती-पाणिग्रहण]

(वस्तु)

राउ [4]रिज्झउ, राउ रिज्झउ, सिद्ध स हि कज्ज ।
[5]सयल लोक आणंदीउ, वंदीजण सुयस तस बोलइ ।
विप्प वेद-झुणि ऊचरइ, हंसगमणि हरखंति बोलइ ।
ताडीय चउरा चंग तिहि, बिहु राजा रहि आवासि ।
अव-दल-सिउ अधिकारीउ, [6]मूंकिउ सूदा पासि ॥३१०॥

ताम [7]चलिउ, ताम चल्लिउ, मिलवि मनरंगि ।
[8]राजासिउ राणी सवे, कुमरि-माई घरवीर-घरणि ।
लीलावई-वर जोइवा, सावलिगि-सिउ भेट-करणि ॥
सदयवच्छि प्रमदा सविहू, कीधउ एक प्रणाम ।
सांई देई सामलि-तणा, [9]बोलइ बहु गुण-ग्राम ॥३११॥

[सामली रूप-वर्णन]

(षट्पद)

आगइ अहर रस-रत्त, अनइ अहर विलासीय ।
आगइ लोयण लोइ, अनइ कज्जलिहि कलासीय ॥

१. 'मडा था' आ. २. 'अवणीय आगप नथी' आ. ३. 'आं मां आ शब्द नथी. ४. 'रूठउ सिद्धि सह' आ. ५. 'दिइ महेसरि मणिउ, कंत जि लीलावतीय लघु तत्तखि तीण दिणि तुरित लगन लेउ दिल करण किद्धउ' अ. ६. 'मेल्हिउ' ७. 'वलीय' आ. ८. 'राजा एसिह' अ. ९. 'ते बोलइ गुणग्राम' अ.

आगइ थणहर थोर, अनइ हाराउलि भारीय ।
आगइ काम गायम धारि, अनइ झंझरि झमकारीय ॥
आगइ काम कीय कामिनी, अनइ वंस तन सि ऊजली ।
पहुवच्छ-तणाउ भमर रंगि रसि, इसी नारि सूदा मिली[1] ॥३१२॥

[सावलिगा-सत्कार]

(चउपई)

आसणि वईसणि आदर बहू, [2]सावलिंगि संतोसिउ सहू ।
बीडां आपइ आपण हाथि, जे घणि आवी धारणि साथि ॥३१३॥

साविलिंगि सनमानी राइ, राणी सवि रलीयाइति थाई ।
ऊठी अवला आयस मागि, संतोषी सामलि सोहागि ॥३१४॥

चाली चंद्रवदनि चमकंत, [3]किरि कंदर्प्प लीलावई कंत ।
राजकुमारि रूपिइ रति-जिसी, सावलिंगि सविहू-मनि वसी ॥३१५॥

[लग्न-निमित्त मिष्टान्न भोजन]

चडी कडाहि गमि बहु वहु, आदर-सिउ आरोगिउ सहू ।
लगनवार लीलावई-रेसि, सदयवत्स वर भरीइ सेसि ॥३१६॥

[वर-तुरग प्रशस्ति]

(राग : धउल धनासी)

आसण-तणाउ अणाविउ ए ।
नरवरिइं तरल तुरंग, ए सखी ! ।

साहणा-पति पल्हाणाविउ ए, [4]पलाणि पवंग ।
तीणइ वरराउ चडाविउ ए ॥३१७॥

---

१. 'ट्रंक ३१२ अमां' नथी. २. 'लीलवइ' आ. ३. 'काम जिस्यु' आ.
४. 'अति मानहर' आ.

(छंद चामर, त्रिताल)

चडंति खेवि जे जडंति, ते तुरंग आणीउ ।
जे [1]सुद्ध खित्त सालिहुत्त, लक्षणे वखाणिउ ॥
पायालि हुंति [2]कीअयउ, हो मदीय आसणे ।
सोहंति सदयवत्स वीर, ते तुरंग आसणे ॥३१८॥

[3](धउल)

चिहुं दिसि च्यारि चमर ढलइ ए-आ-आ ।
सिरवरि ए सोहइ छत्र, विप्र वेय-धुनि उच्चरइ ए-आ आ ॥
आगलि ए, नाचइ नानाविध पात्र ।
बह बंदिण कलरव करइ ए ॥३१९॥

(छंद चामर, त्रिताल)

करंति बंदिणा अणिक्क, मंगलिक्क मालयं ।
विचित्त त्रित्ति, पत्त पाउ, राग रंग तालयं ॥
चडी तुरंगि, चंगी अंगि, [4]सार सुंदरी रसे ।
ति चालवंति, नारि च्यारि, चामरं चिहु [5]दिसे ॥३२०॥

[वर-यात्रा धवलगीत-वर्णन]

[6](धउल)

वर आगलि-थिउ संचरइ ए-आ आ ।
राण ले ए सरिसउ राउ, पायदल पार न पामीइ ए-आ आ ॥

---

१. 'सिद्धि खित्ति' आ. २. 'पयाकिउ' आ. ३. 'मदीइ सासणे' आ. ४. 'संखिर सोहइ छत्र अलंब कि चिहुं दिसिच्यारि चमर ढ़लइ ए । बंदियण कलिरव करइं वहूत, कि अगलि यात्रा नाटक करइं' ॥ ५. 'तिवारि सारि सुंदरी,' आ. ६. 'दिसि किंनिरी' ॥ ७. 'वर आगलि थिउ चालइ ए राउ कि पयदल पार न पामीइ, ए । ततखिण वल्थु नीसाण जे धाउ, कि हिइ हीसइ गज सारसी ए ॥' अ.

वालीय जउ ए नीसाण जे घाउ ।
हय दीसइ गयराय सारसी ए-आ आ ॥३२१॥

(छंद चामर, त्रिताल)

[1]करंति सारसी गइंद, सूंडि-दंडि डंबरं ।
नीसाण [2]वाउ, ढक्क घाउ, ढोल वज्जइ अंबरं ॥
पवित्त वाउ, [3]दिन्न राउ, वेगि वावरइ करो ।
[4]प्रेमि सदयवच्छ वीर, संपत्त तोरणइ वरो ॥३२२॥

(धवल)

गय-गामिणि गुण वन्नवइ ए-आ आ ।
ससिमुखीय सुकोमल महमहइ ए ॥
करइ सिणगार, हार एकाउलि उरि ठवइ ए ।
कंकण कुंडल झलहलइ ए ॥३२३॥

(छंद चामर)

नरिन्द इंद मत्त लोय, लोय-मज्झि सोहिइ ।
पदिट्ठ दिट्ठ माणिणी, [5]मणंत रंगि मोहिइ ॥
भवानि-पत्ति-पाय-भत्ति, कंत लद्ध कामिनी ।
ति [6]सूद वीर, वन्नवंति, [7]गेलि गयंद-गामिणी ॥३२४॥

(धवल)

कंद्रप ए समउ कुमार, अहिणवउ इंद नरिंदवरो ए ।
सेसि भरंति कुमार, सदयवच्छो शृंगार करंति ॥
हरसिद्धि-भत्ति विप्र, वेदधुनि उच्चरइ ए ॥३२५॥

---

१. 'हय गय हीसइ सारसी कहि,' आ. २. 'ढोल ढक्का घाउ हूअ लाव अंबरं' अ. ३. 'दितिराउ' अ. ४. 'इणि परि सदयवध वीर, संपत्त घरिसी-तणो वरो' आ. ५. 'मन्न रंगि' अ. ६. 'ते सूद वीर' आ. ७. 'गेलिइ गायवर गामिनी' आ.

[1](मौक्तिकदाम छंद ततः कुंडलिउ)

पउमिणि हस्तिनि, चित्रिणि दारा, संखिणि सारइ किद्ध सिगारा।
रति-पति रंगि, मिलवि सहि रामा, पेखिवि सदयवत्स वरकामा ३२६

जे काम-नरिंद-तणइ दलि सारा, गमइ मत्त पयोहर-भारा।
जे हेलि सा गिहिलिल[2] चलइ चमकंति, ते सुद्द नरिंद स्यूं रंगि रमंति ३२७

जे नेय भय-दिट्ठ कि तद्द कुरंगि, [3]यत्त सरेह सुनेह सुरंगी।
जे चंपकि चंदनि अंगि गमंति, ते [4]सुद्द नरिंद-स्यूं रंगि रमंती ३२८

करइं नित मानिनी आणणि सोह, जे जाणि जुवाण तणइ मनि मोह।
जे पत्ति उरत्थलि नारि नमंति, ते सुद्द नरिंद स्यूं रंगि रमंति।३२६

[5]ठवइ उरि हार कि तारय-श्रेणि, ढलति नितंब प्रलंबित श्रोणि।
जे तारुणि आरुणि नित्त घुमंति, ते सुद्द नरिंद-स्यूं रंगि रमंति ३३०

[लीलावती सखी-विनोद]

(षट्पद)

"हे सही ! कहि कुण कज्जि, अज्ज उल्हास अंगि बहु ?।
[6]कुंकुमि कज्जलि कणय-कुसुमि, सिंगार किद्ध सहु॥
भरीय सेसि सीमंत, [7]कंत कंदर्प रायवरि।
गुडीउ साहण मयमत्त, नित्त सरि सज्ज कि [8]उपरि॥
माणिसि मयंक मधु-रति मधुप, [9]पहुवच्छ-तनय मुज्झ मनि वसिउ।
उल्हवण अनल[10]न कित्तु रयणि, सदयवच्छ सुखनिहि जिसिउ ३३१

अग्गइ [11]अहरा रत्त, अनइ वलि विलासीय,
अग्गइ लोयण लोइ, अनइ कज्जलिहिं कलासीय,

---

१. 'मौक्तिक कुंडलिउ' आ. २. 'वलइ' आ. ३. 'जेउप्व' आ. ४. 'ति सुदव वत्स सिउ रंगि रमंति' आ. ५. 'दिइ' आ. ६. जे तुरणी निच्छइ हरमंति' आ. ७. 'कुमरिति' आ. ८. 'कंत ठंक परिय' आ. ९. 'सपरि' मा. १०. 'पुहर मनि सनूक्कसु ११. 'न कितु रणभरि' आ.

अगइ [1]थणहर थोर, अनइ हाराउलि भारीय,
अगइ गय मंधारि, अनइ [2]नेउर झंकारीय,
अगइ कामुकीय कामिनी, अनइ [3]वसंत निसि उज्जली ।
पहुवच्छ-तणउ भमर रंगि रसि, [4]इसी नारि सूदा मिली॥३३२॥

[लीलावती वरप्राप्ति-धन्यता]

[दूहा]

लीलावई मनि चींतवइः "ईसरि किउ पसाउ ।
ऊजेणी-थिउ आणिउ, सदयवत्स पहु-जाउ ॥ ३३३[5]॥

जस कारणि मइं एकली, तप कियउ छः मासि ।
ते आशा [6]मुझ पूरवो, सामी लील-विलासि ॥३३४॥

हारि दोरि कंकणि-हिं, सयल शृंगार किद्ध ।
लीलावई मन रंगि [7]रसि, सदयवच्छ कर लिद्ध ॥३३५

[चतुर मंगल]

राय पखालइ पाय वर, सासू सेसि भरंति ।
विप्प अनइ वनिता सवे, मंगल चार करंति ॥३३६

(छंद पद्धडी)

मंगल चार करंति, हत्थ लेई [8]हत्थे लावउ,
अंतरपट उद्धरीय, किद्ध बिहु कर-मेलावउ ।
संझ सूर स जोई, नारि वर नयणि निहालइ,
करइ सुकवि कइवार, राय वर-पाय पखालइ ॥३३७॥

---

१. 'सिहण सुथोर' अ. २. 'झंझरि' आ. ३. 'वसंत-निसि' अ. ४. 'अनइ सवर सुदा मिली' अ ५ दूंक ३३३ 'आ' मां नथी. ६. 'पूरी हुई' आ. ७. 'पुहती वस्मंडपि तिहि' अ. ८ 'अथवालउ' आ. ।

(वस्तु)

नारि लद्धौ, नारि लद्धौ, नाह नव रंग ।
नारी लद्धी नवल, अमर वेगि[1]आ हस्ति पामीय ।
अध [2]संपत्ति अध रज्जस्यु, दिद्ध उदक सइहत्थि स्वामीय ॥
[3]वीर वली चिंता बहु, जिमजिम व्याहइ राति ।
हेम घणू हरसिद्धि भणइ, पुरिस [4]पुत्र प्रभाति ॥३३८॥

[विवाह-कुलाचार]

(चउपई)

[5]जउ मनरंगि विहाणी राति, दांतण करइ कुंअर परभाति ।
तां [6]साला सवि आव्या सार, पुण्यवंतना पुत्र अपार ॥३३९॥

[7]तीणइं ते ऊजेणी-धणी, बोला विउ 'बहिनेवी'-भणी ।
शिर नामी बईठा सुविचार, ऊगम लगइ[8] जिके जूआर ॥३४०॥

[द्यूत क्रीडा]

सदयबच्छ सविहूं दिइ मान, प्रीति-सरिसां आपइ पान ।
[9]तीणइ मेल्ही पूंजी पड मांहि, जूअ मागइं सवि सूदा-पाहिं ॥४४१॥

ते बोलइं: "सूदा ! सुणि वात, करी सूथ अम्ह-स्यूं रमि रात ।
भूइं आपणी भलउ सहु कोइ,[10] पडि पियारी दुहिली होइ ॥३४२॥

सदयवच्छ लहुडपण सीम, जू आव्या[11] तां भणिवा नीम ।
रमिवा-[12]मसि असिवर ऊडवइ, हस्या[13]वीर कलकलिया सवइ ।३४३

---

१. 'आहुत्ति' आ. २. 'संपतिसु तस जुगत्त उदक दिउ' आ. ३. 'वीरवर' अ. ४. 'पत्र' आ. ५. 'भलइ भावि जागीउ जूआर, दातण करवा काजि कुंआर' आ. ६.'साला स्यु' अ. ७'.उत्त हे ऊजेणीनु धणी' आ. ८. 'खेलुउ' अ. ९. 'जण मेली बईठउ' आ. १० 'पडह' आ. ११. 'लइ कहिवा' आ. १२. 'रसि' अ. १३. 'चींतिवउ खलीया' अ.

लिउ हथीआर हरावी सही, सूथ पाखइ [1]न रमाडइ सही।
गांठइ गरथ न हाटि निखेव, सूदउ वीर मनावउ सेव ॥३४४॥

[हरसिद्धि-दत्त-वर द्यूत-जय]

सदयवच्छि समरी हरसिद्धि, रामति-मिसि लूसी लिइ रिद्धि।
पाडिउ [3]पइत [4]पहिलइ दाणि, साला हासारथ नइ हाणि ॥३४५॥

लीधा लाख हरावी हेम, ए ऊखाणउ साचउ एम।
[5]ग्या अन्य काजि, अनेरू थाइ, ते घाठी कहि कहिवा जाइ? ॥३४६॥

सालाने वानइं ते वांठि, [6]वहिनेवी ते बांधीउ गांठि।
[7]ऊठ्या सवे ऊतारा भणी, अड पसरावी सूदा-तणी ॥३४७।

[सदयवत्सकृत द्यूतद्रव्य-दान]

राजा-नइ घरि जाणि जंग, मागणहार-तणइ मनि रंग।
सदयवच्छि वरि मांडिउ करण, हाथ ओडावी अढारइ वरण॥३४८॥

बारहट्ट पुरोहित पढीआर, [8]सूदा सामलि ? [9]भलाव्या सार।
तिह मन-शुद्धिइं दीधूं मान, जुगता-जुगति दिवारउ दान ॥३४९॥

छः दरसण पाखंड छन्नवइ, [10]दानि मानि मागण रंजवइ।
आपइ सविहूं काजि सुवर्ण, किरि अहिणवउ अवतरिउ कर्ण ॥३५०

[11]राज मानि माणस अति बहू, आपी अरथ संतोसिउ सहू।
सूदउ वीर पडावइ साद, [12]अढार वरण दिइं आसिर्वाद ॥३५१॥

पहिलूं [13]मोकलावी महेस, तउ ससरा प्रति-[14]गिउ नरेस।
आयस मागी ऊभउ रहइ, ससरउ सदयवच्छ-प्रति कहइ : ॥३५२॥

---

१. 'रमांडुं नहीं' आ. २. 'मनायु' आ. ३. 'जइत' अ. ४. 'चिहुं' आ. ५. 'गणि कांउ नइ' आ. ६. 'तु पूजी पूंजी बाधिउ गाँठि' आ. ७. 'लेई राजा' आ. ४. 'सूद वाल' अ. ९. 'तोडाव्या सुविचार' अ. १०. 'मानिइं मागण-मन' अ. ११. 'राज माहि' अ. १२ छः दरसण घरि आसि वदि' आ. १३. 'जई मोकलावइ ईस' आ. १४. 'नामइ सीस' आ.

[लीलावती पिता-धारापति वचन]

"ऊजेणी-अधिपति ! अवधारि, [1]पसाउ करी अम्ह नयरि पधारि ।
भोगवि अथ-संपति अथ राज, [2]मागि जि कांई जोईइ काज ॥३५३

दे ाउर बहु कीधु-देव !, तुम्ह जावा जुगतू' नहीं हेव ।
आगइ एक नारिनउ साथ, बीजी- सिउ' हिव वांध्यु हाथ" ॥३५४॥

[सूदा-वचन]

सूदु ससरा आगलि साच, वोलइ बोल ते ब्रह्मा-वाच : ।
"लीलावती नइ साथिइ' लेसु, सामलि पोहरि पुहुचाडिसु ॥३५५॥

करीय रहण पहिलू' परदेसि, तउ [3]आणिसु अवला विहु रेसि ।
जउ सासरइ रहू' सुख-भणी, तउ [4]लाजइ ऊजेणी-धणी ॥३५६॥"

[कवि-वचन]

जिणइ-तात तणइ अधवोल, छांडीउ राज करी तृण तोल ।
ते किम सूदउ सासरइ रहइ ?, सामलि-सरिसउ मारंगि वहइ॥३५७

[प्रयाण]

वूल्या परवत विसमा घाट, आगलि इंद्र-वाहण-नउ थाट ।
वाघ सिंघ वानर वनि मिलइ, देखी वीर सुभट खलभलइ ॥३५८॥

सुपुरिस नसीह नामइ सयर, ते-प्रति दीध हरसिद्धिनु वर ।
मधुरइ सादिइ' मोर कीगांइ', वावन-ना बंध ढीला थाइ' ॥३५९॥

[गाढ़ अरण्य-प्रवेश]

आगलि अनोपम अति कांतार, काठ-समुद्र न लाभइ पार ।
नवि जाणीय सवार असूर, वनमांहि पइसी न सकइ सूर ॥ ३६०॥

---

१. 'गया' आ. २. 'मागिन देव' आ. ३. 'आविहु अवला' आ.
४. 'जस जाइ' आ.

पुहुतु वीर ते वन-मझारि, गाढइ करि करि साही नारि।
"स्वामी! घोर अंधार अवधारि", विण वावी तिहां पाँचइ सालि३६१

संपत्त धान खडधान अपार, पंखि जाति नवि लाभइ पार।
सूडा नइ सालीही गहिगहइं, अढार भार वन देखी मन रहइं ।३६२

सजलि सरोवरि झीलइ हंस, परवत पाखिलि अति बहु वंस।
वंस घसाघस परवत जलइ, नई नीझरण गिरि-हिं ऊतरइ ।।३६३।।

तिणि नीरि उल्हाइ आगि, गज बे मंडलि जई लागी धागि।
केलि करमदा दाडिम द्राख, नालिकेरि लींबूइ-ना लाख ।।३६४।।

[चक्रवाकी प्रति-सार्वलिंगा-अन्योक्ति]

वासु वीर नीर-तटि रहिउ, सामलि सूडु बोलावीउ:।
"स्वामी! आ साविज अवधारि, कांठइ बईठां करइ पोकार ।।३६५

च्यारि पुहर चक्रवाक इम रडइ, जाणे पाटणि पुहरा पडइ।
विहस्यां कमल, विहाणी राति, प्रीति प्रीय पामिउ परभाति ।।३६६।।

सांसइ पडयाँ ते साहमूं जोइ, सार्वलिंगि मुख दीठउ रोइ।

(उपजाति)

विलोक्य बाला मुख चन्द्र-बिंबं। कंठे च मुक्ता-मणि-हार तारं।
पुर्नानिशा विभ्रम-भीति हेति। सूर्योदये रोदिति चक्रवाकी ।।३६७।।

(चउपइ)

मूंकिउ नयर सहीं निटोल, मूकिउ वन ते बोलइ बोल ।।३६८।।

[द्यूतकार-स्वरश्रवण]

जां अवगमइ पंथ अति घणउ, तां सुर सुणिउ जूआरी-तणउ।
हाथ-मांहिल्या हीरा सोइ, एक भणइ: "ए जीता जोईइ" ।।३६९।।

दह दिसि नयणइ निरखइ वाट, सुणिउ सुरंग मांहि गहिगाट ।
गिरिवर-तलि वन गहन मझारि, गुरुई शिला दीठी गुफा-बारि ॥३७०

[सपत्नीक सदयवत्स-गुफाद्वार-प्रवेश]

शिला ऊघाडी साहसधीर, पइठउ विवर-मांहि वड वीर ।
गरव करइं गहिला केतला, भला मांहि भड भेटइ भला ॥३७१॥

ते पाँचइ आलोचिउं ईम, "शिला ऊघाडी आविउ किम ? ।
नारी सरिसउ [1]नर वइरानि, एहू नर कोइ नहीं समानि ॥३७२ ॥

एक सूथ छइ नारी साथि, [2]बीजूं असिवर दीसइ हाथि ।
पांचे बईसारिउ पड-मांहि, रमि राउ [3]तूं जूउ रमिवा आंहि" ३७३॥

[सूदा-वचन]

सूदउ सइं हथि काढइ मूंठि, गरव-वचन तिहाँ वोलिउ गूढि : ।
"राउत ! ए पड न जाणि, शिर ओडी नइ रमूं सुजाण !" ॥३७४

[द्यूत-पट उपरि-सूदा-विजय]

वीर-वचनि [4]राउत-मनि रीस, समरी सकती ऊडवीउं सीस ।
पडु[5]पाडिउं पहिल्लइ दाणि, एक-तणूं शिर जीतूं जाणि ॥३७५॥

इणि परि ते जीतां शिर पंच, पांचे वीरे रचिउ प्रपंच ।
आपी [6]कुमर कटारी काढि, "स्वामी [7]सइ हथि माथां वाढि" ३७६

[सदयवत्स-वचन]

[8]"जे तम्ह-तणइ वासि वीसमिउ, जे [9]तम्ह-सिउ हूं रामति रमिउ ।
तिह शिर[10]वाढण किम कर वहइ?" सदयवच्छ[11]सविहूं प्रति कहइ ३७७

---

१. 'हींडइ रानि' आ. २. 'असिमर उभण' अ. ३. 'ते जउत' अ. ४. 'सूदा' आ. ५. 'पयता जे' अ. ६. 'करि' आ. ७. 'सि-हथि मस्तक' आ. ८. 'जे जे अह्म-तणइ' आ. ९. 'अह्म सरिसु' आ. १०. 'सारण' अ. ११. 'वीरह' आ.

तउ ते पाँचइ लागा पागि: "स्वामि ! जि कांई जाण ति मागि ।
[1]"सरव शिर ए माहरू सहू" :सूदु भणइ "सिउ बोल्यउ बहु"? ३७८

[2]सामलि-नइं सिर नामइ सवे, [3]सा अम्ह सेवक-भणी लेखवे ।
जां परि करइ परगणा तणी, तां ऊठिउ ऊजेणी-धणी ॥३७९॥

पीधूं वीर न पाणी पली, काढी कोडि-तणी कांचली ।
पोली-सिउ गाढी गोपवी, खेडा-तणइ बोलीइ ठवी ॥३८०॥

[द्यूतकार वृत्तांत-पृच्छा]

[4]सरधत एक बि लीधा साथि, पिरि सघली पूछी नरनाथि : ।
"नाम ठाम [5]कुल कारण कहउ, रानमांहि कुण कारणि रहु?"॥३८१

[6]ते बोलइ: "सूदा ! सुणि वात, घोर अंधारि घणां घर [7]घात ।
निशि [8]निरंतरि चोरी भमूं, सघलउ दीस [9]गुफामांहि रमूं"॥३८२॥

[चोर प्रति समभाव]

सूदइं सहू प्रीछिउ सरूप, 'भाई'-भणी रहावइ भूप ।
ग्रास न कांई देसि देव, [10]साथिइं थिका अम्हि करिसिउ सेव ॥३८३

रहाव्या पुरुष ते मोटइ प्राणि, सामीय ! [11]आ शिर ताहरां जाणि
'सेवक'-भणी अह्म करिजो सार, समरे संकटि वार किन्हार"॥३८४॥

रहिया वीर, राजा संचरिउ, साहसि जसि परवरिसि परवरिउ ।
चालइ सार्वलिगि नीचालि, तु देखइ परवत नइ पालि ॥३८५॥

---

१ "शिर सरवसु ताहरां सहू" सूदय भणइ: "मम बोलु बहू"? अ.
२. 'सार्वलिगि' आ. ३. 'माता पुत्र भणी' आ. ४. 'सरघता वि' आ. ५. 'कुण' आ. ६. 'अजउ अमउ सूली से बाल' अ. ७. 'काल' अ. ८. 'नयरंतरि' अ. ९. 'ईणि गुफि' अ. १०. 'साथि था तह्म' आ. ११. 'ए' अ.

[पर्वत-प्राकार प्रवेश]

परवत-शिरि पोढउ प्राकार, जस कमाड कोसीसां पार।
दीसइं हट्ट, धवलगृह श्रेणि, रा मंदिरि जई [1]रहिसु तेणि ॥३८६॥

[अनाथ स्त्री रुदन-श्रवण]

(दूहा)

राती रोअंती सांभली, नीधणीआई नारि।
सूदइ सा पूछी विगति, धणि [2]धावल-हर मझारि ॥३८७॥

पूछी तां प्रमदा कहइः "[3]सांभलि साहसधीर !।
हूं निधि नंद नरिंदनी, सूद ! विलसजे वीर" ॥३८८॥

[नंद नरेन्द्र-निधि दर्शन]

सार्वलिगि नवि संभलइ, नारी निद्रा लिद्ध।
सदयवच्छ [4]रवि ऊगमणि, पेखीय सयल [5]समृद्धि ॥३८९॥

घण मणि मुत्ताहल रयण, हीरा हेम अपार।
अवलोई सूद सहू, उरी दिद्ध [6]दूआर ॥३९०॥

[निर्लोभी सदयवत्स]

वलि वाकल पूजा पखइ, लच्छि न लीधी हत्थि।
दीठी अण-दीठि करी, [7]संपय मूकी समत्थि ॥३९१॥

[पुण्य-प्रशंसा]

(वस्तु)

पुण्य तूसइ, पुण्य तूसइ, सकति सुर सच्छि।
पुण्य प्राणि वनिता वरी, [8]पुण्य पुव्व पयरहण लब्भइ।

---

१. 'रहीआ' आ. २. 'धवल' आ. ३. 'सूणि हो' आ. ४. 'सूरि' आ. ५. 'संपद्धि' आ. ६. 'बार' अ. ७. 'मूंकी सूदइ' आ. ८. 'पवर-पुण्य' आ.

दान दिइ ते धन्य नर, [1]अदयवंत बीहइ न खब्भइ ।
पुण्य ज पुव्वय भव पखइ, [2]वंछित सुख न होइ ।
[3]पुण्यवंत पुण्य ज करउ, सुख संतोष सवि होइ ॥३९२॥

[नगरी-अवलोकन]

(चउपई)

[4]सविह परि गढ जोयउ फिरी, चालिउ [5]वीर मनि चिंता करी ।
परमेसर जउ करइ पसाउ, तउ ए रूडउ रहिवानउ ठाउ ॥३९३॥

दिवस च्यारि वनि [6]वहिउ नरेस, आगलि दीठउ वसतउ देस ।
[7]पुर प्रासाद नइ घट्ट निव्वाण, गामि गामि गिरूआं अहिठाण ।३९४

वारू लोक-तणा तिहां वास, [8]पेखी पथिक करइ उल्हास ।

[मार्गे भाट-मिलाप]

जां बि जाइं [9]वहतां वाट, तां सर-पालिइं भेटिउ भाट ॥३९५॥

[10]नर एकलउ अवारउ जाइ, पूठिइं प्रमदा पाली [11]पाइ ॥
भाटि बोलाविउः "सुणि हो शूर!, रहि राउत! [12]अति थिउ असूर" ५९६

भाट भोगवइ [13]गाम ति ग्रास, आदर-सिउं आणिउ आवासि ।
पेखी अंग-तणउ [14]आकार, ते आवर्जन करइ अपार ॥३९७॥

तेडाविउ वालंद तिवार, मर्दन देवा काजि कुमार ।
ऊतावली हुईय अंघोलि, भोजनि शालि दालि घृत घोलि ॥३९८॥

---

१. 'अडवडंत पण पुण्य थुब्भइ' अ. २. 'जि सुख शरीरि' आ. ३. 'पुण्यइं ए पामीय सहु संपइ सूदइ वीरि' अ. ४.'गाढां गुहरि' अ. ५.'चींत चींतवणी' अ. ६. 'वसिउ' आ. ७. 'पूरव' अ. ८. 'पेखीय हृदय' आ. ९. 'वसती' आ. १०. 'दीसइ नर एकलु जि' आ. ११.'काइं ? आ. १२. 'वड' आ. १३. गामनु आ. १४. 'अधिकार' अ.

"नवरंइ मंदिरि निद्रा ठाम, ऊठउ पथिक ! करउ विश्राम ।"
जां वे जण बईठा एकंति, तां कामिणि बोलावी कंति : ॥३९९

[सूदा-वचन]

"सुणि सामलि ! वोलिउं माहरूं, कोस पंच पीहर ताहरूं ।
दिवस पंच रहि [1]चंड-प्रदेशि, हूँ पूहचूं पहिठाण प्रदेसि ॥४००॥

प्रहि ऊगमि पेखूं पहिठाण, जई जूं-ठाणइ मारू ठाण ।
जे [2]सूरा समरथ जू-जाण, तीह-ऊपरि माइरूं मंडाण ॥४०१॥

लीलां लाछि हरावी [3]लिउं, तेहनउ अरथ दोसीनइं [4]दिउं ।
तूं पहिरेवा सरीखां सार, वुहरू वस्त्र विविध शृंगार ॥४०२॥

घाट-हडी नइ वस्त्र विहीण, इम जाती तूं दीसिसि दीण ॥
पहिरण पखइ पीहरि गमिसि, तउ माहरी माम नींगमिसि ॥४०३॥

[चारण-गृह-निवास सूचन]

वंदिण-तणइ बहिन क्षत्रिणी, क्षत्रिणी मानइ 'भाई' भणी ।
ए नातरूं नवूं नहीं आज, भाट-भुवनि रहितां[5]नहीं लाज ॥४०४॥

[6]जे भड मांहि भवाडइ भला, जीवणि मरणि नही एकला ।
[7]रूठारा मागी लिइं मंड, क्षामोदरि ! क्षत्री-गुरु चंड" ॥४०५॥

सामलि सूदानू सुणिउं वयण, नारी नीर भर्यां बे नयण ।
"पाणी बल जे पेखइ प्रदेसि, पंच दिवस प्रीय ! किमइं रहेसि?४०६

नारी 'देव'-भणी नर गिणइ, नरनइ नारी पय-लूंछणइ ।
इम करतां [8]नर न रहइ ठामि, ते नारी कांइ सिरजी स्वामि"?४०७

---

१. 'छंड' आ. २. 'सूथा' अ. ३. ल्योस' आ. ४. 'ओस' आ. ५. 'नवि' आ. ६. 'जे रणि चडया' आ ७. 'रूछरा' आ. ८. 'जे' आ.

[सूदा-वचन]

सूदउ भणइ: "सामलि ! सुणि वात, नर जाइ जोयण सइं सात ।
राति दिवस महिला मनमांहि, जिहां अवला तिहां आवइ ठाहि" ।४०८

[सामली-वचन]

"स्वामी ! ए उत्तर अवधारि, घरथी घणूं विसासइ नारि ।
नर नवनवइ भवनि रसि रमइ, सुकुलिणी दीह दूखि नीगमइ" ॥४०९

[1]कणय रयण मुत्ताहल हार, हीर-चीर सोव्रण शृंगार ।
ए [2]सहू समप्पइ अवला-हाथि, बीजा-सरिसउ आवइ बाथि" ॥४१०

तीणि उत्तरि ते अवला रही, वात एक [3]पुणि वरनइं कही ।
"सामीय ! कहिउं माहरू मानि, प्रीय ! पाटण ते नथी समानी ४११

[सदयवत्सवचन]

[4]सदयवच्छ प्रभ पूछइ इसिउं :"कहि कामिणि! ते पाटण किम्यूं ? ।"

[सावलिंगा वचन । नगर पाटण-वर्णन]

""[5]स्वामि ! सहारइ आपूं छेक, लागइ दव दीहाडउ एक ॥४१२।

जिणि पाटणि पोढा प्रासाद, मेरु-शिखर-सिउं [6]वहइ विवाद ।
[7]गरूउ गढ ऊंचा आवास, किरि अहिणव दीसइ कैलास ॥४१३॥

मांहि महेस विष्णु नइ ब्रह्म, सहू समाचरइ कुलोचित [8]धर्म ।
[9]दिनकर-भगति-तणउ अति भाव, अधिकउ परमेसरी प्रभाव ॥४१४

बावन वीर वसइं तिहां वासि, पूजइ जिनवर फलीइं आसि ।
जिन-शासन गाढउं गहगहइ, जीव-दया देखी मन रहइ ॥४१५॥

१.'भाणि माणिक'आ. २. 'सहूइं आपणइ' आ. ३.'नरवर नइं' आ. ४. 'लीटी' (४१२) 'आ' मां नथी' ५. 'सुदयवच्छ कहि आथू' आ. ६. 'मांडइ वाद' आ. ७. 'गढमढ गुख' आ. ८. 'कर्म' आ. ९. 'दिन करनी भगति प्रति भावि' आ.

जे जोगिणि चउसठिनूं [1]गाम, चउरासी चेटकनूं तिहि ठाम ।
[2]व्यंतर भूत पिशाच नइ प्रेत, साचउ साकिणि-तणउ संकेत ॥४१६॥

गणपति क्षेत्रपालनी ख्याति, दिवस पाहिइं रूडेरी राति ।
ठामि ठामि मंडल [3]मंडाइ, ठामि ठामि नित गुणीआ गाइ ॥४१७॥

ठामि ठामि ढोणां ढोईंइं, ठामि ठामि जोणां जोईइ ।
सातइ [4]वसण [5]सांवलीइ जोउ, माहि घणां छइं माणस तेउ ॥४१८

इकि लीलां लखिमी [6]लई जाइ, भोला भमहि सान वीकाइ ।
मणा न कामण मोहण-तणी, वरतइ धूरत-विद्या घणी ॥४१९॥

वसइ वासि छत्रीसइं कुली, मांहि [7]चुहु मुडधा नइ मंडली ।
चउरासी सूरा :सामंत, च्यारि महाधर मंत्रि अनंत ॥४२०॥

चउरासी चुहटांनी जुगति, वरणावरण-तणी बहु विगति ।
उत्तम मध्यम लोक अपार, भामा भला न लाभइ पार ॥४२१॥

करइ राज सालिवाहण राउ, [8]वइरी-तणउ विधंसइ ठाउ ।
अऊठ पीठ पहिलूं पहिठाण,सामीय आलि-तणूं अहिठाण" ॥४२२॥

[पंच दिवसावधि सदयवत्स-गमन]

भाट भलामण दीधी भली, कीधी कंति अवधि अेतली ।
"पंच दिवसि आविसु तुझ पासि,मृगलोअणी ! घणूं म विमासि॥४२३

[9]सदयवच्छि तां जोयूं जिसिउं, नारीय नयर वखाणिउ तिसिउं
राजा रंगि अंगि उल्हसिउं, हंसगमणि नइं बोलइ हसिउं ॥४२४॥

---

१. 'ठाम' आं. २.आ लीटी 'अ' मां नथी ३. 'मंडावइ'आ. ४.'विसन' आ. ५. 'संसालइं' अ. ६. 'हरी' आ. ७.'मोटी वहुत्तरी' अ. ८.'अरियण-सिरि दि डावउ पाउ' आ. ९. 'सदयवच्छ प्रतिति' आ.

[सार्वलिगा-वचन]

(वस्तु)

"कंत संभलि, कंत संभलि, कहइ [1]कमला लच्छि ।
जु मर्याद लुप्पइ मेरुहर, तेह न पालि पच्छउ करिज्जइ ? ।
सीह विछूडइ संकलह, ति किम देव ! दोरी धरिज्जइ ? ।
हत्थी अंकुस अवगणइ, किम साहीज्जइ कन्नि ? ।
तिम [2]तू प्रीय ! पधारतां, [3]मज्झ विमासण मन्नि" ॥४२५॥

(गाहा)

सुणि सदयवीर ! वयणं सच्चं" [जंपवइ सार्वलिगी ए ।]
पीय ! दिवस पंच पच्छइ, तिहि गमिस जिहि ![4]मुन पक्खेसि" ॥४२६

[सूदा-वचन]

तिणि वयणि सुद्द जंपइः "मणिधरि रोसो हसेवि मुहकमले ।
तिहूअणि ते को ठाणं, जिहि जुवई रहइ ? मह महिला ! ॥[5]४२७

वयण रासी नयण मई, हंसगई उरि [6]करिंद मग्गि ।
हीरा कणय पहाणं, अंगंगी जच्छ तया पक्खे जीवीयं मरणं ॥४२८

[सार्वलिगा-समाश्वासन]

•तीणि वयणि सुद्द वीरो, गहिबरिउ गलित चलितोमि ।
"गयगमणि ! म धरि[8]अंदोह, निवारि नयणं नीर[9]भरीयंमि"४२९

[सूदा-प्रयाण]

(अडयल्ल)

चलिउ रमणि रोअंती वारइ, लोयण लूही सकज्जल वारिइ ।
अबलि ! जु नावूं बोलिइं वारिहिं, जं[10]मनि होइ करइ तिणि वारहिं४३०

---

१. 'इम लच्छि' २. 'प्रीय ! तम्ह' अ. ३. 'सुक्क' अ. ४. 'न' अ.
५.'टूंक ४२७' 'आ' मां नथी. 'वरिद' आ. ७.'गलइं सवलं तोसि' अ.
८. 'दुहिलउ'' अ. 'भरियीइ'' अ. १०. 'पुणइ सुसं करे विवारि हिं ' अ.

[प्रतिष्ठान पुर-प्रवेश]

पामिउ पुर पहिठाण-प्रवेसह, नयणि निहालइ नयर-निवेसह।
तौं सरोवरि जल भरइं सुवेसह, चतुरि चतुर्विध नारि निवेसह॥४३१

[विरह-विलक्षित पुरुष प्रसंग]

आगइ विरहि [1]विलक्खो पाणी, लागी अंगि [2]तरस सपराणी।
कज्जल लग्ग दिट्ठ दुउ पाणि, पीधउं पुरुसि पशू जिम पाणी॥४३२

'नर नवरंग सही सवे जल, किणि कारणि पशू जिम पीइ जल?'।
नारि-[3]नयणि करि लग्गउ कज्जुल, तिणि [4]दीठइं नर भरइ न अंजल४३३

(दूहा)

ईणि नयरि जे [5]निद्धणह, तेह-तणी घर नारि।
बारू माणस जे [6]वसइ, तेह [7]नहु पाणीहारि॥४३४॥

पाणीहारिइं परखीउ, नर पीयंतउ नीर।
सदयवच्छ तं संभलि, चित्ति चमक्यउ वीर॥४३५॥

[अमंगल कबंध दर्शन]

पढमं पेखइ नयणि, पोलि प्रवेसि प्रवीण।
पुरुष एक पय-पाणि-विण, सरडु श्रवण-विहीण॥४३६॥

[गणपति मन्दिर प्रवेश]

तं पेखवि पाछउ वलिउ, गिउ गणपति-प्रासादि।
आणि असुउणि ज ईणि नयरि, पडीइ वडइ विवादि॥४३७॥

तिणि ठूंठइ ते ऊलखिउ, ए अम्ह पेखि वलंति।
आणि भलेरूं भेटणूं, देउल-[8]मज्झि मिलंति॥४३८॥

---

१. 'घल्यरवइ' आ. २. 'तिहां सप्पाणी' अ. ३. 'नर-करि' अ. ४. 'भीजजय-भय' अ. ५. 'निम्रच्छ' अ. ६. 'अछूइ' अ० ७. 'तनहु' अ. ८. 'माहि' आ.



(१) देखिये पृष्ठ ६२ कड़ी ४३२-३३
'पीघउ पुरुसि पशु जिम पाणी।'
और (२) पृष्ठ १७०-१७१ कड़ी ३२९
'पसूआं जिम पाणी पीयइ ।'

पूग-पत्र-फल फूल सिउं, आणी अमृत आहार।
लीलां लेतउ उलखिउ, जाणी किद्ध जुहार ॥४३९॥

[टूंठा-जन-कृत सूदा-वन्दन]

सउण भणी [1]ते वंदीयां, लीधां पूगी पान।
'भाई' भणी बोलाविउ, दिइ मनशुद्धिइं मान ॥४४०॥

[टूंठा जन आत्म-परिचय]

जूठाणइ जूय केतलूं ? [2]केतूं जाण जूआर ? ।
उडइ नइ उडिउं सहइ, ते अम्ह दाखि विचार ॥ ४४१॥

(वस्तु)

मित्र संभलि, मित्र संभलि, मुझह वीतक्क ।
हूँअ स्वामी सींघल-तणउ, कुंअर कोडि कंचण सहित्तउ ।
सइं गय हय सय पंच, लेइ ए पाटण पेखण पहुत्तउ ॥
ते हेलां रसि हारिउं, नाक पाग कर कन्न ।
ईणि जूठाणइ जूअ रमइं, बलीया भड बावन्न ॥४४२॥

(चउपई)

सूध न कांई देखूं स्वामि !, जूउ-दंड पडइ ईणि ठामि।
असिवर एक-मूंठि हारीइ, बीजा काजिइं बाजी सारीइ ॥४४३

[कामसेना गणिका जूठ-प्रसंग]

[3]वे जण पाटण-मज्झि पहुत्त, दीठउं देउलि लोक बहुत्त ।
"कहि भाई ! कोलाहल किसिउ ? ए अण-खाधइ पाणी-रिसउ ४४४

"कामसेना जे नाचिणि नाम, लिइ पंच सइं सोन्ना द्राम ।
सुहणइ सोमदत्त माणिउ, ते इहां ऊहडी नइ आणीउ ॥४४५॥

---

१. 'सहु वंदीउ' आ. २. 'केता रमइं जूआर' आ. ३. 'तं सुणि' आ.

[1]गणिकानी मा अतिहि रढील, विवहारीउ मनाविउ मिल ।
डोकरी मंडिउ गाढउ डोह, अर्ध आपतउ न छूटइ छोह" ॥४४६॥

[सदयवत्स-वचन]

[2]सदयवच्छ बोलइ : सुणि मित्र !, ए खोट्ट अति करइ अखत्र ।"

[ठूंठा-बचन]

"देव ! अनेरउ नथी अन्याउ, माती रांडइ वींटिउ वाउ ॥४४७॥
एक भाँडणिया ऊठी भाड, बीजउ महि मूकिउ साडी ।

त्रीजी राउल-वाई राँड, [3]इणि कारण टलीइ माँड " ॥४४८॥

ते जोवा पुहुतु प्रासादि, डोकरि दीठी वढ़ती वादि ।
"नर नवयौवन छइ नवरंगि, ए बोलिस्यइ अम्हारइ [4]अंगि" ॥४४९
एकदंति बोलइः "सुणि साह !, अम्हि परठ्या छइ राउत आह ।"
सेठि-कुमर ऊचरइ सुजाण, "आपण बिहु जण एह प्रमाण" ॥४५०
तव तीणइं बिहु कारण कही, राउति वात विमासी सही ।
सदयवच्छि विचि लीधा साद, तेह-नउ निरवाल्यु वाद ॥४५१॥

[सदयवत्स-कृत चतुर न्याय]

एक सेठि हकारिउ ताम, "आणि विच्छे दिइ दर्पण द्राम" ।
सेठिइ जे जण बोलाविउ, अरथ आरीसउ लेई आवीउ ॥४५२॥
धन रेडी ओडिउ आरीस, एकदंति तव दिइ आसीस ।
आघी थई लेवानइ अर्थ, "दरपणमांहि गिणी लिउ गर्थ ॥४५३॥"

[गणिका-कपट उपहास]

हाथि ताली देई हसिउ लोक : "रांडइ लीधा टंका रोक ! ।
अंतरि तेडावी डोकरी, काढी बाहरि बाँहि धरी ॥४५४॥

---

१. 'इतनी अति आडली रढील' २. 'सुदय भणइ सुणि ठूंठा मित्र' अः ३. 'ए मुंह' ध. ४. 'भंगि' आ.

इकि छांणिइ, इकि छांटइ छारि, इकि खीजवइं अनेरइ खारि।
एकदंति तव [1]ओपी इसी, राय राजा छवि राणी जिसी ! ॥४५५॥

तेह-तणइ छोकरि नहीं छेहूं, डोकरी देखी हरखी तेह।
वादिइं विवहारोइं हरावी, टंका ठीक रोक लेई घरि आवी ! ४५६।

[गणिकाप्रति कुलस्त्रीजन-घृणा]

आपापणा धवलहर धसी, अबला सवे आवी उद्धसी।
"कहउ, किसी-परि जीतउ वाद ?," बोली न सकइ बईठउ साद ॥४५७

जीणइ घणा घासव्या ति घाठी, कला बहुत्तरि-सिउं बुद्धि नाठी।
त्रिणि दिवस जि लांघणइ लांघी, घणे घावू ए कीधी घांघी ॥४५८

परख्या पाखइ पुरुष वीससी, नयर-मांहि नर सघलइ हसी।
"कांई रे छोडी ! पूछइ काज, हारिउ वाद [2]विगूती आज" ॥४५९॥

[सदयवत्स प्रति कामसेना-आकर्षण]

कामसेनि संभलिउं स्वरूप, ते राउत-नूं [3]जोईइ रूप।
तेडिउ सघलउ संपरदाउ चातुरि चतुर जोएवा जाउ ॥४६०॥

पुहती मंडपि [4]मूंधा दीती, वाजिउ [5]गजर सधुडिउं गीत।
वंशकारि सातइ सुर सारि, आलति कीधी आलतिकारि ॥४६१॥

उडीमान उडवीउ ताल, [6]झणझुण करइ मृदंग रसाल।
धुरी धूआनी धूरली आदि, रही रेख [7]रविनइ प्रासादि ॥४६२॥

नयण [8]वयण मन मस्तक नास, हावभाव [9]कटि-तणा कलास।
उर कर चरण लगइ वालवइ, इम जूजूआं अंग जालवइ ॥४६३॥

---

१. 'देखी' आ. २. 'विगोई' आ. ३. 'जोयुं' आ. ३. 'जोवा नइ तिहां' आ. ४ 'मधि आदित' आ. ५. 'गुहर सुद्ध सगीत' आ. ६. 'रणझिण' आ. ७. 'देवनइ' आ. ८ 'मयण' आ. ९. 'करइ' आ.

[कामसेना-विह्वलता]

उत्तर ऊजेणी-पति दिट्ठ, वईठउ मत्त बारणइ बलिट्ठ ।
कामसेनि [1] थई काम-विकाम, माणस कोइ न जाणइ माम ॥४६४॥

[2]तेउ चलावी भणी अवास, त्रूटी नाडि, न [3]सलकइ सास ।
नयर-[4]नरेसर बाहर करइ, इसिउं पात्र अण-खूटइ मरइ ॥४६५॥

[उपचार]

राजवैद जई जोई नाडि, एउ विकार नहीं अम्ह पाडि ।
देस-विदेसी वीजा बहू, राजा-[5]आयसि आविउं सहू ॥४६६॥

एकि भणइः "ऊतारउ [6]आंच," एकि सेक दिवरावइं पांच ।
एकि भणइः "आलस छांडीइ," एकि [7]भणइः "मंडल मांडीइ ' ॥४६७

एकि भणइः "अम्ह हलूउ हाथ," [8]एकि भणइः "दिइ कडूउ कवाथ" ।
आपापणी कला सवि कहइं, [9]गुणीया नइं वईद गहगहइं ॥४६८

[गूर्जर वैद्य-निदान । अनंग-रोग]

गूर्जर वैद्य तिह्वारइ हसिउ, जाणे धरणि-धनंतरि जिसिउ ।
दीठइं रूपि सरूप ओलखइ, वैद अनेरूं रा आगलि झंखइ : ॥४६९॥

"एहनइ अंगि अग्गलउ अनंग, नरवर ! को दीठउ नवरंग ।
महूरति एकि मूर्छा भाजसिइ, मिलिउ लोक देखी लाजसिइ"॥४७०

तास वचनि कालमुहा थाइ, वलिउं चेत. [10]वैद ऊटया जाइ ! ।
बाहरि वरतइ भीडाभीड, प्रमदा पंचबाणानी पीड ! ॥४७१॥

---

१. 'हूइ कामिनी काम' आ. २. 'लेई' आ. ३. 'लाभइ' आ. ४. 'नरेस न' आ. ५. 'इसि ते' अ. ६. 'लांच' अ. ७. 'कहइ' आ. ८. 'एक पाइ छत्रीमु काथ' आ. ९. 'गुणीआ नीकारकि' आ. १०. 'वेगि ऊठी' आ.

[राजपुत्र-आनयन-उपाय]

नाचिरिण [1]जस नायिकीदे नाम, ते तेडीनइ कहिउं काम।
"तूं [2]डाही डांखरी म जेडि, रवि-[3]मंदिरि जई राउत तेडि ॥४७२॥

उत्तरि बईठउ ऊंची पाटि, भड जे पाखलि वींटिउ भाटि।
केकि-कला सिरि झांटि झमाल, आगलि ऊडण अनइ करमाल ॥४७३

[वृद्धा एकदंति विरोध-दर्शन]

एकदंति तीरिण बोलिइं बली, [4]रीसिइं पुरुष एक ऊछली।
"जिरिण [5]हलूई कीधी आज, ते टींटउ तेडिइ [6]कुरण काज ? ॥४७४॥

राय राणा [7]भूतलि [8]जेतला, विवहारीया कहूँ केतला ?।
करइं साद कोडिसर केडि, केहा गुण तूं राउत तेडि ? ॥४७५॥

[गणिका-द्रव्यहरण-नैपुण्य]

पारखि-सिउं जउ कीजइ प्रेम, पाडी दिइ पीयारू हेम।
ओछी वानी तउ घणउ विराम, सारी लीइसूं [9]सारा द्राम ॥४७६॥

दोसी [10]कोर कापडा दियइ, लूगड-मांहि ति बिमणूं लीयइ।
काज सुरहीउ सारइ घणूं, आपइ सदा सुरहू धूपणू ॥४७७॥

सोनी काजि [11]किह्लारइं [12]वाहि, सूध चउथ लिइं सूना-मांहि।
पहिलूं घाट घडीनइ हाटि, घरि आवइ घडामण माटि ॥४७८॥

बांभण-सिउं बहु नेह म करइ, मास पक्ष पूठिइं परिहरइ।
भाट भलउ हुइ दोह बि च्यारि, जां जूवटइ न थालइ हारि ॥४७९॥

---

१. 'जे' आ. २. 'गाढी' आ. ३. 'मंडपि' आ. ४. 'दीसइ' आ. ५. 'हूं हालू' अ. ६. 'शूं' आ. ७. 'भूपति' अ. ८. 'जे भला' आ. ९. 'आला' अ. १०. 'कापड वारू' आ. ११. 'जिह्लारइं' आ. १२. 'पाहिं' अ.

तंबोलीनी थोडो तीम, जिहनइ पान पांचनी सीम ।
टींटा देखी टाले द्रंठि, साहमी जईनइ मनावे सेठि ॥४८०॥

माली आपइ [1]सुरहां फूल, जे वारू नइ अति बहुमूल ।
मोटा भोटा अनइ छड छेक, तेह-नइ दीजइ वहिलु छेक ॥४८१॥

फ़टरसी नइ [2]फरफट कूंच, हाथ किह्वारइं न मेल्हइ मूंछ ।
ते उलगू-नइ म देसि अडाउ, कूडी [3]करगर लाउ नसाउ ॥४८२॥

[धनवान परीक्षण]

नाणावटि नाणूं [4]निरखीइ, तिम आपणइ पुरुष परखीइ ।
[5]जिहां जिहां दीसइ द्रव्य जेतलउ, तिहां आदर कीजइ तेतलउ "४८३

[कामसेना-वचन]

कामसेना नइं चडिउ कोप, नायकदे प्रति दीध निरोप ।
"ए बूढी-तणा बोल म विमासि, राउत तेडी आणि आवासि" ॥४८४॥

गई रामा [6]रवि-मंडप भणी, कही व्याधि ते कामिणि-तणी ।

[सदयवत्स-प्रति वचन]

"सुणि सावज्जल साची वात, कामसेना तूं-राती रात ॥४८५॥

हूं पाठवी तीणइ तूंअ पासि, [7]पसाउ करी अम्ह आवि आवासि ।
अरथ अनेथि अछइ [8]अम्ह घणउ, ते वनिता [9]विक्रम तूंअ-तणउ ।४८६

वार म लाउ, वहिलउ थइ देव !, टाला-तणी [10]टली छइ टेव ।
मरइ अखूटइ मोटूं पात्र, तइं दीठइं दुःख फीटइ गात्र" ॥४८७॥

---

१. 'सरस्यू नेह मन' आ. २. 'फाफट' आ. ३. 'कद घस लाउ' आ. ४. 'परखीइ' आ ५. 'जेहनउ भाव दीसइ' अ. ६. 'रधि' आ.७. 'मया' आ. ८. 'अति' आ. ९. 'विभ्रम' आ. १०. 'म करिसिउ' आ.

[ठूंठा प्रति सूदा-वचन]

सुद्द भणइ:"सुणि ठूंठा मित्र !, इणि मांडिउं एवडूं चरित्र ।
[1]इम तेडइ [2]तिम कारण कहइ, एहू वात विमासण लहइ" ॥४८८॥

[ठूंठा-वचन]

ठूंठु भणइ : [3]"नवि जाणिउ भेद, खारि रांड-तणइ मनि खेद ।
[4]देहरा-मांहि दूहवी जेअ, डंस वीसरइ न डोकरि तेह ॥४८६॥

इणि वीसासी वाह्या वीर, इणि [5]खाइ पाड्या घर-धीर ।
[6]इणि वेसाइं विगोया भला, ईणि रोल्या राउत केतला ॥४६०

वेसा-तणउ म करि वीसास, वेसा-वयण ते मुहि गली पास ।
[7] मच्छ जेम मांस-नइ धरइ, जीव-तणउ जीवी अपहरइ ॥"४६१

[सूदा-वचन]

सूद्द भणइः "हूं अ जाणूं सहू, वेसा-तणो वात छइ बहू ।
जउ भाई ! भय कीजइ एह, छयल्लपणानउ आविउ छेह" ॥४६२

[ठूंठा-वचन]

"एह अनेरउ नहीं उपाउ, एहनइ विषय-तणउ विवसाउ ।
इहनइ मनि माटीनी आस, इहनइ लहइ विदेसी वास" ॥४६३

[परिचारिका निवेदन]

परिचारिकि जे [1]पूठिइं वही, तीणइ घरि जईनइ कारण कही ।
"ते धीरउ आवेवउं करइ, पणि ठूंठीउ [2]कूटाइ करइ ॥" ४६४॥

१.'तिम' अ २.'अति' आ. ३.'मइं'आ. ४.'हारिउ वाद विगोइ जेह, ए वीसरइ' आ. ५. 'थ्या छइ' अ. ६. 'ईणइ व्यास विगोया घणा' आ. ७. 'माणस जेम मछिनइ' आ. ८. 'वहसी' आ. ६. 'पूछी रही' आ.

तउ वीजी वोलावी वाल : "जई चालवि ठूंठउ चंडाल ।
मानी लांच लोभवि घणूं, कामिणि काज करे आपणूं" ॥४९५

[1]तउ तीणइ खिलकी-नइ खूंट, हूलावो वोलाविउ ठूंठ ।
लांच-तणउ देखाडिउ लोभ,कांइ ए क्षिञी-कारणि शोभ? ॥४९६॥

[ठूंठा ने लांचनुं प्रलोभन]

[2]लांच आंच नवि ठूंठउ सहइ, कांई कथन अपूरव कहइ ।

[ठूंठा-वचन]

"कामसेनि-लहुडी चित्रलेख, तेह ऊपरि माहरी अभिलेख ॥४९७॥

ते जउ रातिइं मइं-सिउं रमइ, तउ ए गेहि तम्हारइ गमइ ।
बीजूं [3]कांइ म बोलि आल, [4]ठूंठइ-सरिस न चालइ चाल ।४९८।

मनि आपणइ आलोचीय साच, वेशा ठूंठइ लीधी वाच ।
चतुरा राउ ऊठाडथउ तेहि,आणिउ गयगामिणि नइं गेहि" ॥४९९॥

[कामसेना आवासे सूदा-गमन]

नाचिणि नर आवंतउ देखि, आपणपूं संवरी सुवेखि ।
कणय-कलस भरि निर्मल नीर,दिइ आचमण विच्छे दिइं वीर ।५००

[सत्कार]

आदर-सिउं अवास मझारि,[5]आणी आवरजइ वर नारि ।
भोजन भगति युगति जूजूई, मिलियां राति सुरंगी हुई ॥५०१॥

वडइ भलकि जागिउ जूआर, दांतण करिवा काजि कूंआर ।
कामसेनि आयस उल्लासि, दांतण लेईनइ आवी दासि ॥५०२॥

"दांतण सारिइं, [6]ऊग्यू सूर, आविउ ठूंठः म करउ असूर ।"
बीहूं आपी बोलइ बोल, "राउत ! रखे करउ [7]विगोल ॥" ५०३॥

१.'हुपाई' अ. २.'वाटे करीनइ खलकी खूट' आ. ३. 'पेशा-वचन'आ.
४. 'बहु' आ. ५. 'इस्युं भणिइ ठूंठु चंडाल' आ. ६. 'ते आवर्जन करइ अपारि' आ. ७. 'समरइ' अ. ८. 'अति काल' अ.

कामिरिण [1]कपट न विमास्यूं चींति, खेडूं खडग विलायुं भींति।

[द्यूतस्थान-प्रति गमन]

आरति टली ऊतारा-तणी, भड चालिउ जूअ [3]ठाणा भणी ॥५०४

तां जूआर बईठा जूवटइ, जां लगइ अवर [4]कोइ ऊमटइ।
तां लगइ कूडी काढइ मूठि, [5]पडिय-सिउ बोलाव्या ठूंठि ॥५०५॥

तीणइ जाणिउ नवउ जूआर, ठिगि सघले [6]जई कीध जुहार।
पड चांपी बईठउ चउपट्ट, नहीं नर बीजा [7]मानि मरट्ट ॥५०६॥

तीणि थानकि सपराणा सही, एकइ पुरुषि परीक्षा लही।

[सूदा-द्यूतचातुर्य परीक्षा]

आघउं थईनइ बोलउ इसिउं, "सूदा ![8]सूध पूछीइ किसिउं ?॥५०७॥

राउत!रमतउ म करिसि कारिण इणि पडि जीपिसि ओडथा प्राणि।
लाख-लगइ हूं पूरिस हेम, [9]ओडि अरथ मनि आणे एम" ॥५०८॥

[प्रसिद्ध द्यूतकार उपस्थिति]

आविउ सूद्रक सकतिकुमार, आविउ वीरभद्र भेंकार।
आविउ कामसेन नइ कालूउ, आबिउ [10]रिणवंत रीसालूउ ॥५०९

आविउ वंकट नइ वाघलु, आविउ रीसट नइ रांघलु।
इम जूटवइ जूआरी मिल्या, वीरइ वीर बईसंता कल्या ॥५१०॥

---

१. 'कथन' अ. २. 'चमकिउ' आ. ३. 'वासा' आ. ४. 'को न' आ. ५. 'पुरुष एकसिउ' अ; 'वइ झूंटि' आ. ६. 'विचि दीधउ ठाहार' अ. ७. 'मुनि' आ. ८. 'सूथ' आ. ९. 'तिम ओडे जिम जाणइ तेम' आ. १०. 'रोषु' आ.

सदयवच्छ नइ सकतिकुमार, [1]वि जण रूडा रमइ जूआर ।
बावन वीर बहुत्तरि राण ऊपरि-थ्या भड भाखइं दाण ॥५११

हेला-मांहि हराविउ राउ, [2]जीतु सोवन लक्ख सवाउ ।
तीणइ बीजा ऊपरि उद्रक, रमतां थिउ साम्हउ सूद्रक ॥५१२॥

सूद्रक-सरसी समवडि जाइ, वीरिइं वीर न पाछउ थाइ ।
बिहु जण जमलूं दोसइ जयत, सूदइ पोढूं पाडिउं पहित ॥५१३॥

काल-पास शिव जोगिणि जेउ, जाणइ [3]जूअ-तणा भल भेउ ।
ते नर हारी ऊठ्या आथिः एक भणइ ! "ठिग ठूंठउ साथि"।५१४

धन ऊसरडी ढिगलु करइ, खोडउ बईठउ खोलउ भरइ ।
ऊठिउ कुमर ऊतारइ जाइ, धन वेचंतउ कुणिइं न रहाइ !॥५१५॥

[द्यूत द्रव्य-दान]

अण-मागंता ओडावइ हाथ, सूदा-जम जाणइ जगनाथ ।
[4]सूदउ सविहूं आपइ जीप, जूअ रमिवानूं एह जि कीप ॥५१६॥

[सार्वलिगा अर्थे वस्त्राभरण-विक्रय]

चउपट-मल्ल चुहटइ संचरइ, दोसी-हट्ट दीठइं संभरइ ।
[5]सार्वलिगिनइ सरखां सार, वुहुरइ नानाविध शृंगार ॥५१७॥

कस्तूरी केसर कप्पूर, [6]धूप धूपणां अनइ सींदूर ।
सार सुगंध वस्त [7]घण लिद्ध, ते बांधी दोसीनइ दिद्ध ॥५१८॥

---

१. 'ए वि' आ. २. 'सूदूर' अ. ३. 'जवटनु' आ. ४. 'आवइ सविहूं कारणि जीप, कूडे रमतां अछइ केही कीप ?' आ. . ५ 'पहिरवा पवित्र, म'वरि वुहुर्यां वस्त्र विचित्र' अ. ६. 'धुति वूपणइ सरिख' अ. ७. 'बहु' आ.

कामसेना-घरि जण जेतला, ते जोतां हींडइ तेतला ।
तां अढलक [1]आवइ आफणी, अणतेडिउ ऊतारा भणी ॥५१९॥

हंसगमणि-नइ आपिउं हेम, मांडइ लेखा अधिकू प्रेम ।
तीणइ [2]रंड-मनि फीटी रीस, एकदंति तव दिइ आसीस ॥५२०॥

भोग भगति आवर्जिउ इसिउ, च्यारि राति राउत तिहां वसिउ ।
दिन पंचमइ व्याहाणा वार, हुई हथीआर-तणी [3]मनि सार ॥५२१॥

[म्यान मध्यगत अमूल्य कांचली]

[4]असि ऊतारी जोइ जाम, अबला [5]ओढणी वलगी तांम ।
खेडउ झाटकतां खडखडी, सूकी खोली आगलि पडी ॥५२२॥

खोलि-मांहि अमूलिक जिसिउ, तेह सरीखूं कहीइ किसिउं ? ।
सवा कोडी-[6]तणी कांचली, चंद्रवदनि [7]देखीनइ चली ॥५२३॥

कामसेना [8]प्रभु लागी पागि, "स्वामी ! जि कांइ जाणत मागि" ।
मनि आपणइ सुणी महाराजि, अलविइ आपी अबला काजि ॥५२४

[9]हूउ चतुर बोलिवा सचींत, तव जूय-ठाणइ चमकिउ चींत ।
जां [10]आराधण आरति हुइ, तिहां लगइ जई आविउं तोइ ॥५२५॥

[कामसेना कंचुक परिधान]

कामसेनाइ पहिरी कांचली, रंगिइं राज-भुवनि [11]समवली ।
कीधउ सोहंतउ सिणगार, [12]उपरि एकाउलि मोती-हार ॥५२६॥

---

१. 'ऊतारा भणी, अणतेडयु आविउ आपणी' आ. २. 'वामइ' आ. ३.'संभाल' आ.४.'इसि' आ ५.'ओढणि दीधी' आ.६.'केरी' अ.७. 'तीणइ दीठइं' आ. ८. 'जई वलगी'आ. ९. 'हऊउ चतुर चालवा सचंति,तव जूठाणइ गिउ मन-भांति'आ.१०.'आरोगण' अ ११.'सांचरी'आ.१२.'उरि'अ.

पात्र राउ ईसी पालखी, [1]साथिइं संपरदाउ नइ सखी।
चतुरि चिहुदिसि घालइ द्रेठि, चहुटइ साम्हउ[2]मिलिउ सेठि ॥५२७

[श्रेष्ठीए कांचली जोई]

[3]सेठिइं सा बोलावी नारि, रंगिइं जाती राज-दूआरि।
रूडउ रतन-जडित कंचूउ, देखी नर निरखंतउ हूउ ॥५२८॥

[चोरी मां गयेली कांचली ओलखी]

निरखी उलखीयां अहिनाण, [4]तु हूउ युगति विमासइ जाण।
रा-मंदिरि मानीतुं पात्र, किम एहि-सिउं [5]पडावइ खात्र ? ॥५२९

[महाजन श्रेष्ठी पासे फरियाद]

पांच सात तेडी आवंत, मनि आपणइ विमासिउ मंत।
नुहि एकला जि पुरुष-प्रभाव, [6]मिली महाजनि कीजइ राव ॥५३०॥

[महाजन श्रेष्ठी नाम]

तेडिउ तेजपाल [7]तारसी, तेडिउ [8]धांधउ नइ धारसी।
वहिलउ थई नइ वीरम तेडि, [9]जेसल नइ करणउ करि केडि ॥५३१

[10]तेडिउ संतिग [11]सामल सार, आंबड, [12]बांहड अभयकुआर।
पाल्हउ [13]पासनाग जसनाग, माहव मोकल नइ वरणाग ॥५३२।

[14]धाईउ धीधु नइ जसराज, पेथु पूनुसाह महिराज।
[15]हादु हरपति अनइ हरराज, हांमु जागु नइ मकराज ॥५३३॥

१.'आगइ लि' आ. २.'जोई बोलइ' आ३. 'चुहटइ' आ.४.'एह' प्राय ५. 'खरावू' अ. ६. 'मेल्या सामंत' आ. ७.'तेजसी' अ. ८.'वाणिग' आ. ९. 'नहीं जुगति जे कीजइ नेडि' अ. १०. 'सोलउ' अ. ११. 'ना. साहारा' अ. १२. 'भोअउ' अ. १३. 'पासउ आसउ माल मांडण केहूउ' भाइत्र साहाल' आ. १४. १५.:'आ' लीटी 'अ' मां नथी.

[1]राजु भोजु नइ वलीकु जगु, नाइउ नीसल नरपति नगु।
धरणिग धारण ताहरूं काज, ऊठउ महाजन मिलीइ आज ॥५३४

[2]आसड पासड पूनसी सेठि, मिलिउं महाजन वडली-हेठि।
चमक्या सवि चुहटानी वाट, हूं हूं [3]करी संभेरइ हाट ॥५३५॥

['हाट-मांहि पाडी हडताल']

[4]हाट-मांहि पाडी हडताल, चाल्या [5]कामसेनाना काल।
माथूं धूणइ वुहरइं [5]माम, [6]गूंगलि करी बीहावइं गाम ॥५३६॥

दंतुसेठि मेलावउ करइ, [7]राउलि जई पोकारव करइ।
[8]रायंगणि जई ऊभा रहइ, [9]नामइं कांध, नवि कारण कहइ ॥५३७

[राजसभा-प्रवेश]

मान देई बोलिउ महाराज : "मिलिउं महाजन केहा काज ?"।

[श्रेष्ठी वचन]

तउ श्रीमुखि बोलाविउ सेठि, "तम्ह ऊपरि कुण [10]जोइ कुद्रेठि?"५३८
"स्वामि ! कुद्रेठि न जोइ कोइ, अम्हे वाणीए न वसिवूं होइ।

जे जोईइ [11]निर्भय नइ काजि, वारी हुइ ते ताहरइ राजि॥"५३९॥

[संदिग्ध वचने आशंकित राजा]

सालिवाहन समस्या लहइ, नंद-लोकनइं निश्चिइं कहइः।
"बीहता कांई म [12]करिसिउ माम, निर्भय [13]ध्या भाखउ नर-नाम"५४०

---

१. 'आ लीटी' अ मां नथी २.आ लीटी 'अ' मां नथी.३.'करइ' अ.
४. 'हाटि सवे' अ. ५. 'सान' आ. ६. 'गूगरि' आ. ७. 'हाहुलि साकुलि तं पोकरइ'अ. ८. 'राउ आगलि' आ.९. 'सिर नामइ' आ. १०' 'करइ' अ'. ११. 'वारिनइ काजि, पडइ देव ! ताहरइ' अ. १२. 'बोलु' आ.
१३. 'थई हवइ भाखउ नाम' आ.

"नरवर! नर तींह नाम न होइ, [1]कंद्रप-कटक कहइ सहू कोइ।
[2]तेह-तणाइ उर-मंडण अत्थि, सरव समोप्पइ हूं [3]तिहि हत्थि॥"५४१

[राजा शालिवाहन-वचन]

राइं सा बोलावी रमणि : "कहि, कांचली समोपी कवणि ?।
पूछ्या-तणउ [4]पडूत्तर नाप, तू सूली घाल्यां नहीं पाप ॥"५४२॥

[कामसेना-वचन]

तीणि[5]वचनि चमकी तइ चिंति, "स्वामी!सांभलि अम्ह घररीति।
उत्तम मध्यम लांमा भला, साध चोर कहीइं केतला ? ॥५४३॥

आठ पुहुर एकि आवइ जाइ, भोला भूपति! पूछइ कांइ ?।
वाट, वृक्ष-फल, नइनूं नीर, नयर-[6]सोहा सिरि-तणूं शरीर ॥५४४

[7]संतति सुपुरिस-केरी दानि, स्वामी! सविहूं सरीखा मानि।"

[अप्रसन्न राजा]

तीणि वचनि रीसाव्यउ राउ, कामसेनाइं कीधउ कुपसाउ ॥५४५।
रूडइ [8]बोलिइं नापइ रांड, मारी कूटी पूछउ मांड ।

[चोरी नुं आल]

राज-दूतइ रा-आयस लही, गयगामिणी चोर जिम ग्रही ॥५४६॥

निवड बंधि बांधी-नइ नारि, मारइ महिला विसमे मारि।

इम विनडी ती न कहइ वात, सूली-तणी पूछमु हुई सात ॥५४७॥

---

१. 'कूडूं कपट' आ. २. 'तेहनु उरि जे मंडण अछइ' आ. ३. 'ते पछइ' आ. ४. 'तू उत्तर' आ. ५. 'वातइं सा चमकी चींति' आ. ६. 'सालि' आ. ७. 'सुपूरिस दाता घणां छइ' अ. ८. 'पूछी कहइ' आ.

वाजि [1]काहल लोक घणा मिल्या, एकदंति-नइ कहिवा चल्या।

[एकत्रित गणिका-नाम]

एकदंति ऊठी उद्धसी, मिली [2]मेलि गणिका-नइ किसी ॥५४८॥

हीरू हांसलदे [3]हरखली नारी, सींगालदे सोमलदे सवि वारि।
कांऊं करणू नइ काह्लली, नागलदे नामलदे भली ॥५४९॥

साऊं [4]सहिजू नइ सहिवली, वाछू मीणलदे वरजली।
[5]नागू नायकदे नागिणी, मांजू माह्लणि [6]नइ कमिणी ॥५५०

राजू रतनादे रूपिणी, भाऊ भावलदे रखिमिणी।
लुहडी वडी [7]विलासिणी घणी, [8]राज-भुवनि आवी रणझूणी।५५१

[गणिका-समुदाय राजसभा-प्रवेश]

[9]रायनइं सवे दिइं आसीस, सुंदरि [10]गाढउ ढांकिउ सीस।
"राज! [11]रांड-परि सिउं रोस?, कामसेनाइ कुण कीधउ दोस?॥५५२
सूली भणी चलावी स्वामि !, ए आचार अछइ तम्ह गामि।"

[राजा-वचन]

राउ रीसाविउ बोलइ इसिउं, "कां रे [12]रांडु! पूछउ किसिउं?॥५५३॥

सांतउ चोर, नइ थाइ साध, अनइ वली पूछउ अपराध ?।
नयर-सेठि-केरी कांचली, घर [13]फाडिउं घरवा रत [14]फली ॥५५४

---

१. 'लागि' आ. २. 'श्रेणि' आ. ३. 'कामलि किसी, खेतू खीमिणी जाल्हणि जिसी' अ. ४. 'सूहवदे' अ. ५. 'नाकू' आ. ६. 'कारेमिणी' आ. ७. 'सुहासणि' आ. ८. 'रंगिइ राज भुवनि सवि वली' आ. ९ 'बूटी' आ. १०. 'मांझइ माढइ' आ. ११. 'काय किस्युं ए' आ. १२. 'काज कहिवउ' आ. १३. 'भाडूं' आ. १४. 'वली' आ.

पहिलूं सूली घालउं पात्र, पछइ [1]पूछूं सघलूं खात्र ।"

[गणिका-मन भय-संचार]

इस्यूं [2]सूणी तइं चमकी हीई, वेशा भणइः"न ऊभां रहीइ ॥५५५

चमकी चोंति, वसिउ संकेत : "ए ठूंठउ हूउ अम्ह केत ।
आगइ वादि विगूती जाणि, ऊपरि अधिकी हाणि कवाणि" ॥५५६

एकदंति बोलइ आकुली, "कांइ रे सवि मूं-पाखलि मिली ? ।
रोतां नवि छूटउ छोकरी, जोउ चोर चिहु चहुटइ फिरी ॥"५५७॥

[चोरनी शोधमां]

चउरासी चुहटा नइ ठाणि, पुर पइठाण-तणइ अहिठाणि ।
घरि चाचरि चुहटइ चउवटइ, इकि चाली जोवा जूवटइ ॥५५८॥

[द्यूतस्थाने सदयवत्स-मिलाप]

जां जूवटइ बहु रमइ जूआर, पाखलि प्रमदा मिली अपार ।
"राउत!ताहरी रामति बालि !, ए कांचलो हुई अम्ह कालि!॥५६५।

चोर-तणी परि बांधी बंधि, कामसेनि आहणिवा कंधि ।
सूली भणी चलावी सही !" सुणी वात न रहिउ सांसही ॥५६०॥

[वृतांत श्रवणजन्य आघात]

किरि हाकी ऊठिउ हनुमंत, किरि [3]कोपानलि चडिउ कृतंत ।
धडवडि चुहटउ चालिउ ईम, किरि आविउ भारथ-गुरु भीम ॥५६१॥

सूली हेठि [4]दिट्ठ सा नारी, लाजिउ मनि आपणा मझारि ।
वाढथा [5]"बंध, विछोडी वेस," [6]"रे आव्या उत्तर हूं देस" ॥५६२॥

---

१. 'सूंघूं' आ. २. 'भणिइं' आ. ३. 'कोपांजलि' आ.
४. 'दीठी नारी' आ. ५. 'बंधन छोडी' आ. ६. 'आवु सिबहूं' आ.

[तलार-सह सदयवत्स-युद्ध]

तं संभलि [1]तव चडिउ तलार, बोलाव्या ओलगू अपार।
चोटि धरीनइ बहु बाँधिउ बंधि, [2]असि लोह-सिउं आहणु कंधि ।५६३

चिहु दिसि चउरा पायक मिल्या, लउहड लाकड लेई वल्या।
एक-तणी ऊदाली डांग, सूदइ सविहूँ भागां आंग ॥५६४॥

'हणि ! हणि !' भणी, लिद्ध हथीआर, हाकइं ताकइं[3] धाइं अपार।
जे सुभड भला ते पाखलि[4] फिरइं, आघउ[5] थईनइ घाउ न करइं ।५६५

हठिइं चडिउ तलार हाकलइ, जे जीव राखी 'रहज्जो' कलइ।
झूंटि घरी मनाव्यउ झाक, कोटवालनूं वाढय्ूं नाक ॥५६६॥

"जा बापडा ! म बोलिसि बर्व, गाढा सविहूं ऊतारूं गर्व ।
आ ओलगू जि विहूँ वलउ लहइ, तिह मारता किम कर वहइ ? ॥५६७

मोकलि जे गाढा बलवंत, [6]मोकलि जे सूरा सामंत।
मोकलि राउत रणि वाउला, मोकलिजे अंगि ऊतावला" ॥५६८॥

[तलार-विमासण]

वली तलारि बिमासिउं इसिउं, "छेदिइं नाकिइं [7]छूटीइ किसिउं ?
जउ नरवर वीनवीइ आम, तउ मूं ठाकुर[8] फेडेसिइं ठाम ॥" ५६९॥

[राजा-प्रति निवेदन]

जण मोकली जणाविउः[9] "स्वामी!, [10]दैत्य कि दाणव आउ संग्रामि।
कामसेना-ना वाढया बंध, अम्ह-सिउं कीधी आलि[11] 'अणांध" ॥५७०॥

---

१. 'तुहि' अ. २. 'खडग' आ. ३. 'बीर' आ ४. 'भमइ' आ. ५. 'थई कोइ नवि आंगमइ' आ. ६. 'अंगि जे आउला' आ. ७. 'जीवइ' आ. ८. 'फोडसि' आ. ९. 'राउ' अ. १०. 'दैव' अ. ११. 'अनूंध' अ.

[शील-स्थाने संमिलन]

कोटवाल-नूं कारण सांभलिउं, चुहटुं चाली जोवा मिलिउं ।
तिहि साथिइं-थिउ आविउ सेठि, सूदउ दीठउ सूली हेठि ॥५७१॥

[सदयवत्स-उपस्थिति-जन्य श्रेष्ठी-वचन]

देखी सूदु सेठि टलवलिउं, मनि उपगार विमासी वलिउ ।
"[1]सुणि साहसिक पुरिस सुपवित्त, [2]ए कुण आल चडाव्युं मित्त?"॥५७२
सूदु भणइः "ए आल म मानि, मइं कीधूं नर-वहिस निदानि ।

[आत्म-गुह्यवृत्त-कथन]

"संभलि मित्र ! माहरूं गूझ, थोडइं कहिइं घणूं तूं बूझ ॥५७३॥
हाथि ताली देई जाऊं देखतां, किम [3]झूझूं आ ऊवेखतां ? ।
कामसेनि-नूं विणसइ काज, पुरुष अनेरा आवइ लाज ॥५७४॥
[4]चूकइ अवधि दिन पंच प्रभाति, महिला मरइ, नही मनि भ्रांति ।
भाट-गामि छइ मुझ भालवण, कागल जाइ तउ हुइ जाण ॥५७५॥

मुझ अहिनाण-तणइ आलापि, कागल लेई कागलीआ आपि ।
दोसी-तणूं [5]निरोपम नाम, जिहाँ थापिणि मूंक्या छइ द्राम ॥५७६
ते हूं मागीनइ मोकलावि, जे तू चींति [6]चहइ ति चलावि ।
उछउ अधिकउ [7]न बोलइ बोल, नर निरतउ मोकलइ निटोल ॥५७७

[आशंका-ग्रस्त श्रेष्ठी]

सेठि विमासी जोई वात, ए [8]को वारू वीर विख्यात ।
इणइ[9] अम्ह कीधउ उपकार, [10]हिव वलतउ वालूं विवहार ॥५७८॥

---

१. 'सुण सुण साहसीक सुपवित्त' आ. २. 'कुणहिइ आल विलायू' अ. ३. 'रूइ' अ ४. 'हूंकइ' अ. ५. 'निरोपिउ' आ. ६. 'वसइ' आ. ७. 'म' आ. ८. 'तां' आ. ९. 'मू' आ. १०. 'तां' आ.

[अर्थ- सदुपयोग]

जिणि अर्थिइं न भाजइ भीड़, जिणि न टलइ परनी पीड ।
मागण-मित्र काजि टालीइ, ते संपति सघली बालीइ !॥५७९॥

अरथिइं सघलां सीझइं काज, अरथि आपणि कीजइ राज ।
अरथिइं सविहिं ढांकीइ अखत्र,[1]देई अरथ विछोडि सुमित्र ॥५८०॥

[वणिक्-सहनशीलता]

मेलइ वाणिया विवसा जोडि, वेलां [2]लाधी वेचइ कोडि ।
जीव-तणउ जे जीवीय कहइं, तेहनउ वाढ वाणीउ सहइ ॥५८१॥

बांध्या राउ विछोडइ बंध, पडी कुवेलां ऊडइ कंध ।
ठाणि गाढिम नवि सीझइ अर्थ, तिणि वेलाँ वाणिउ समर्थ ॥५८२

[3]मरडी मूंछ सेठि संचरिउ, राउत वली विमासण-[4]भरिउ ।
"ईण विछोडया वेसिइं ग्राम,तउ माहरी पणि[5]भागी मांम "॥'५८३॥

[सदयवत्स साहस]

पाछउ तेडिउ भाई भणेः "एक वात संभलि अम्ह-तणी ।
मुझ छूटेवा-तणी अछइ आहि,काँइ वित्त वेचावूं तुम्ह पाहिं? ॥५८४॥

[6]मॉरु हंकारिउं न करइ किह्वार, तउ मोटु मानूं उपगार ।
[7]न्याय नीति नरेस संभालि, कामसेनि नइं [8]कंदल टालि ॥५८५॥

साध चोर आवइ इह बारि,चडिइं चोरि[9] कां विनडीइ नारि ? ।
ए एतलूं करीनइ काज, कागल कापड मोकलि आज ॥"५८६॥

---

१. 'वेची' प्रा. २. 'आवी' प्रा. ३. 'मोडी' अा. ४. 'पडिउ' प्रा. ५. 'जासइ नाम' प्र. ६. 'जु नु वारु करइ विचार' प्रा. ७. 'न्यायनी वात' प्रा. ८. 'कद घस' प्र. ९. 'कां नडीइ' प्रा.

(वस्तु)

राज-मंदिरि, राज-मंदिरि, सेठि संपत्त ।
तां राउ रोसिइं धडहडइं, कोटवाल कारणा परीछयउं ।
एक चोर [1]नवि अंगमइ, सइं हथि सेनाहिव हि होच्छयउ ॥
तीणि अवसरि पय लगि करि, पहु वीनविउ [2]राउ ।
चडीइ चोरि [3]स्त्रीय विनडीइ, एहु देव [4]अन्याउ ॥५८७॥

[सदयवत्स-वचन]

"अधिपति ! चोर एह नवि घटइ, ईणि कंचूउ जीतउ जूवटइ ।
[5]आणी चोर आपउं कालि,तो लगइ ईणइ थांनकि मूं भालि" ।.५८८

[प्रधान आलोचना]

पहु-परधानि आलोचिउं इसिउंः[6]"मूक्यउ चोर आवेसिइ किसिउं ?।
हणइ चोर सिउं आवइ हाथि ?,ए[7]उच्छंखल लीजइ हाथि" ॥५८९॥

"स्वामि ! किन्हारइं न आवइं एह, तउ हूं [8]अवधिअ धारउ छेह ।
पहिलूं सेठि खात्र[9]पुरसिइ,पछइ सवालाख[10]द्रम्म आपसिइ। ५९०

ईणि आव्यइं ऊसंकल थाइं, ईणि आव्यइं ऊठी घरि जाइ ।
करूअ वीनती पहु परधान, ए एतलूं दिउ मुझ मान" ॥ [11]५९१॥

---

१. 'नां गमई' अ. २. 'निघाउ' अ. ३.'स्त्री' अ. ४. 'आइ चाउ' अ. ५. 'जंपि आणी आपूं' आ. ६. 'काढिइ नारी' आ. ७. 'अछांछलु' आ. ८. 'अविधउ' आ. ९. 'पूर्यासि' आ. १०. 'वित्त छोस' आ. ११. आ टूंक 'आ' मां नथी.

दीधउं मान सेठिनइ सही, कामसेनि [1]कदर्थ न सवि रहइ ।

[सदयवत्स प्रति श्रेष्ठी भावना]

मित्र [2]तणइ मनि पूगउ रंग, साहसि कि ओडविउं अंग ॥५९२॥
"जा जा मित्र म आविसि पछइ, अर्थ[3] अनंतउ अम्ह घरि अछइ ॥"

[बारहट्ट-गृहे सावलिगा-परिस्थिति]

जां नयरि-थिउं [4]नावइ नाह, तां गयगामिणि मांडिउ गाह ॥५९३॥
भाई भणी "[5]बोलाव्यु भाट, वडी वार [6]लगी जोई वाट ।
[7]टली गोल तव त्रूटी आस, [8]करउं पर-तनउ पीहर वास" ॥५९४॥

[बारहट्ट-वचन]

"बाई ! बोल म बोलि इसिउ, पीहर-वासु पर-तनु किसिउ ? ।
[8]अति ऊतावलि हुइ असूर, एतां सही सुलक्षण सूर ॥ ५९५॥

[शूरजन-प्रशंसा]

सूरउ सूरिज गलीइ राहि, सूरउ अगनि उदकि उल्हाइ ।
सूरउ सीह अजाडी पडइ, सूरउ दैवत सूरा-नइ नडइ ॥५९६॥

मरवा-तणा मरम छइ कोडि, [9]इम मरतां तम्ह लागइ खोडि ।
जउ चूकिसिउं स्वामी-संघात, [10]तउ हत्यानउ मोडउ हाथ" ॥५९७॥

---

१. 'कटंब' अ. २. 'तणउ जइ पूरिउ' आ. ३. 'अनूपउ' अ. ४. 'आवइ' आ. ५. 'बोलावइ' अ. ६. 'लग' अ. ७. 'टली गो लतु छाँडी' आ ८. 'करु' आ. ९. 'अम्ह मरतां तम्ह आवइ' आ. १०. 'तुउ तुम्हे ओडउ हत्थ' आ.

[सावलिंगा-प्राणत्याग-निश्चय]

[1]गई समशानि सजाई करी, भाट-तणइ मनि पईठी [2]छरी ।
नीचु ऊंचुं चडइ अपार, करइ वेग नइ लाई वार ॥५९८॥

[सावलिगा अंतीम प्रार्थना]

देखी दिवस-तणी [3]गति खीण, करी सनान दान दिइ दीण ।
करइ साखि त्रिकम नइ तरणि, "जनमि जनमि [4]सूदा-पय-शरणि'।५९९

(दूहा-सोरठी)

सूद ! तम्हारी साथ, थिउ आंतरूं [5]अति ऊरतउ ।
हिव जोसि जगनाथ, साहसि सामलिआ-[6]धणी ! ॥६००॥

ऊले अंतरि एहि, तउ पहिलूं पामिउं नही ।
वाहण [7]विहि-वसि होइ, न रहइ नीजामा पखइ ॥६०१॥

नीसरि सूदा साथि, जीव ! मा हारी प्रीय-पखइ ।
ते जाणइ जगनाथ, नाह- विछोडयां माणसां ॥६०२॥

ऊभी आस करेहि, अबला आहेडी-तणी ।
वरि पईठउ वि मरेहि, केसरि नइं ए किम नीसरइ ? ॥६०३॥

नाह ! तम्हारा नेह, किम ओसींकल एक भवि ? ।
जइ दस वार हि देह, ए आपणउ ज होसीइ ! ॥६०४॥

माणिक मूठि [8]भरेही, पडइ तउ प्रापति न पामीइ ।
नाह [9]नावरइ देहि, दरसणि देखेवूं थिउं ॥६०५॥

---

१. 'जइ' आ. २. 'भरी' आ. ३. 'दिसि' आ. ४. 'मूं सूदा-शरणि' आ. ५. 'छइ अति घणू' आ ६. 'भणइ' अ. ६१० 'अ' मां टूक नथी. ७. 'विन्हिविहि लेहि' अ. ८. 'जलहि प्रापति विण नइ पामीइ' आ. ९. 'नावरे' अ.

आसा-लूधो एक, पीहरि मेल्ही [1]परणी नइ।
[2] आज [3]ऊचाट अनेकि, तिहनइ थाइ ऊतापला ॥६०६॥

सूदा ! सउकि सु राख, मनि माहरइ कांई नही।
सहि समोवड [4]लाख, कीधा आज [5]अणोसरा ॥६०७॥

जिणणी काजि दीह, आंक्या आवेवा तणा ।
तिह लिखी तां [6]लीह, करी [7]कुडेरू दाभिसिइ" ॥६०८॥

(चउपई)

जां सहस-[8]किरण-नइ करइ प्रणाम, जां 'नारायण' भाखइ नाम ।
तां धसमसतउ [9]धायउ धीर, आगलि दीठउ आविउ [10]वीर ॥६०९॥

[सदयवत्स-आगमन-आनन्द]

हुउ हरिख गहगहीउं गाम, वंदीजन [11]फीटउ बदनाम ।
थातउ हूंतउ थापणि मोस, ते अम्ह दैविइं टालिउ दोस ॥६१०॥

राज-वस्त्र नइ[12] रूडां ठाम, आणी अवल समोप्या ताम ।

[प्रतिज्ञा-पालनार्थं पुनर्गमन]

रहिउ राति निज नारी-ठाहि, चालिउ वली विहाणा-मांहि ॥६११॥

मूंक्यां हाटि अछइ हथीआर, तिहि लेतां [13]तउ लागइ वार ।
लागी वारइं विणसइ काज, ते लेई आवउं छउं आज ॥६१२॥

---

१. 'परह नइ' आ. २. 'तिह नइ आज अनेकि ऊचाटइ' प. ३. 'साथ' प. ४. 'साथ' आ. ५. 'अणोसरा' आ. ६. 'लही' आ. ७. 'कुमेरु' आ. ८. 'कर' अ. ९. 'आविउ' आ. १०. 'आविउ वीर' आ. ११. 'टलीउ बरदनाम' आ. १२. 'मूंडा' आ. १३. 'लेतां मू' आ.

वाचा अविचल वीर दयाल, [1]मांटीनउ मांटी मछराल ।
आवी ऊभउ सूली हेठि, [2]राउति ऊसरावण कीधउ सेठि ॥ १३।

[श्रेष्ठी- सभ्रता]

सेठिइं माँडिउ अति अंदोह, [3]आविउ छयल लगाडी छोह ।
जिम किम जाणत तिम नर वहत, लोक-माँहि पण-महत्त ज रहत
॥६१४॥

हाकइ हसइ करइ किलकिली, आव्यां मोटां माणस मिली ।
"ए कांचली-तणी कुण मात्र ?, मइं पाड्यां छइ मोटां खात्र" ।।६१५॥

[कंचू-चौर्य]

मानी चोरी हडहड हसिउ, राय-राणा-मनि विस्मय वसिउ ।
एहू वात विमासण जिसी, साचू जूठूं जोईइ कसी ॥६१६॥

कामसेनि [4]तेडावी ताम, [5]राय-मुहूतइं पूछी जाम : ।
"कांइ एहनूं छइ अहिनाण, जे पेखी [6]छीइ प्रमाण ?" ॥६१७॥

[करवालांकित सदयवत्स नाम]

कामसेनि आण्यउ करवाल, तं [6]देखी चमकिउ भूपाल ।
[7]वेगिइं अख्यर जोइ जाम, तां "श्रीसदयवत्स"-नूं नाम ! ॥ १८॥
[शालिवाहन-सदयवत्सपरिचय]

जाण्यउ खडग जमाई-तणू , राइं वयणि [8]विमासिउं घणूं ।
[9]आपोपइं थाइ असवार, आविउ उपरि करि गजभार ॥६१९।

---

१. 'मुणस अनइ' आ. २. 'सही ऊसीकल' आ. ३. 'आवी मोटा राडी मिली' आ. ४. 'बोलावी' आ. ५. 'रायमुहइं सिउं मूघइ माम? आ. ६. 'देखत मांडोइ मंडाण' आ. ७. 'वेगि' आ. ८. 'विणसइ' अ. ९. 'आपणपइ' आ

भाट-पांहि पूछावइ भूपः "कहि, खांडानूं किसिउ सरूप ? ।
मूं-सिउं जूटवइ रमिइ जूझार, खांडउं लेई वाल्यउ भार ॥६२०॥

ऊभाँ [1]करि न डाढ काढीइ, ऊभाँ सिंह [2]न नह वाढीइ ।
ऊभाँ साप न मणि मोडीइ, ऊभाँ सुद्द न खांडूं जोडीइ" ॥६२१॥

[चोर-धारण युक्ति]

पहु [3]पूछइः "साँभलि परधान !, तूं ताँ बहु गुण-बुद्धि-निधान ।
ते प्रपंच ते बुद्धि कराइ, जांणइ ए जीवतउ धराइ" ॥६२२॥

तउ मुहुतइ आठविउ मर्म, जे हाथीया सीखवीआ सर्म ।
[4]ते ते दोई नइ चाँपीइ, [5]सुंडाहलि सरिसउ झाँपीइ ॥६२३॥

तउ मयमत्ता मयगल गुडचा, जे [6]भड भला ते उपरि चडचा ।
आंकुसि हण्या न आघा थाई, [7]पसूअ-तणी परि नाठा जाई ॥६२४॥

सिंगी-[8]नाद तीणइं कोधुं ईम, जिम [9]हाथी छांडो ग्या सीम ।
हाथी-तणी जि हूंती हाम, तेहू [10]पोढी भागी माम ॥६२५॥

दलनायक [11]थ्यु रोसायकी, पाखलि थिउ बोलइ पायकी ।
'स्वामी ! [12]सइं हथि बीडूं आपि, [13]ऊभा-ऊभि लिउं शिर कापि
॥६२६॥

---

१. 'गज' मा. २. 'वाघ नमुहु' मा. ३. 'जपइ' मा. ४ 'ते जोई दोई नइ' मा. ५ 'सुडिइं-स्यु झाली' अ. ६ 'वोइं भला' आ. ७. 'ढोर तणी' मा. ८. 'तणी परि त्राडइ' आ. ९. 'मत्ता' आ. १०. 'मोटेरी' मा. ११. 'स' मा. १२. 'सव्हारइ' मा. १३. 'जिम हेलां' मा.

[चोर वचन]

बीडउं मागिइं बोलइ चोर: "हाक्या ऊभा आंगणि मोर।
जन्म लगइ जे खाधूं राज, हिव बीडूं लेई करसिइ काज" ॥६२७॥

बंभण बाल [1]अनइ स्त्री-पीड, संकटि समइ प्रजानी भीड।
बीडां वाट [2]जोइ तिणि वार, तिहि मुहि [3] आणी घालउ छार ॥६२८॥

तीणि बोलिइं दलनायक [4]बलिउ, परिगह असि ऊभा लेई चलिउ।

[युद्ध वर्णन]

[5]ढमढम विसमा वाजइ ढोल, उर कमकमइं ति कायर [6]निटोल ॥६२९॥

झब्ब झब्ब झबकइ भालोह, धसमसंत धसमसिया जोह।
[7]घूसण-तणां कसण कसकसइं, गाढइ गुणि सींगिणि त्रसत्रसइं ॥६३०॥

[8]सावलोह सिरि तोमर तीर, भाले-[10]सिउं भेदीइ शरीर।
[11]जे मच्छरि मुहि आवी चडइ, ते पायक पग आगलि पडइ ॥६३१॥

ऊदाली लीधां हथीयार, कोटवालना जीवन सार।
बे भडनउ [12] गाढउ भडिवाउ, तिहि टाली नवि [13]घातइ घाउ ॥६३२॥

दल-नायक बल बोली बहू, आघू थिउ आरोली सहू।
घोडे-स्यूं घोल्या असवार, अस्व पायक नवि लाभइ पार ॥६३३॥

---

१. 'धीयनो' अ. २. 'जि जोइ वार' आ. ३. 'छाणी' आ. ४. 'परथ-सिउ ऊमाली वल्यु' आ. ५. 'हमढम ढमक्यां' आ. ६. 'कोलहु' आ ७. 'जे दीठइ सहु पामइ मोह' आ. ८. 'आंग' आ. ९. 'सवे' आ. १०. 'नवि' आ. ११. 'आघे मा वधि जे मुहि' आ. १२. 'मोटउ' आ १३. 'घालइ' आ.

हडहड चोर हाकतां हसिउ, धुरि सेलहत सूली-[1]तलि धसिउ ।
[2]थोडइ वादिइं विगूतउ घणाउ,केवलउ एक कांचली-तणाउ ॥६३४॥
भागी माम भला भड-तणी, राउत सवि कीधा रेवणी ।
ऊलिउ माणस-मांहि तलार, [3]दल विदलिउ नमिउ गजभार ॥६३५॥

[बावन वीर सह युद्ध]

तां सविहूं-नुं ऊतारिउ नीर, [4]हवइ हकारउ बावन वीर ।
आव्या वीर सवे ऊपडी, झलकइं झांटि त्रिपा खीत्रडी ॥६३६॥

(वस्तु)

तीणि अवसरि, तीणि अवसरि, कलह-पीय तेणि ।
नारदि न्यानि परीछिउं, मृत्य-लोइ को करइ कंदल ।
एक गमइं [5]नर एकलउ, [6]मिलीयति बीजइं गमइं घण दल ॥
पंच वीर [7]पय भरि करीय, वली विलायउ वट्ट ।
केवु [8]तव कंचू-तणइ. संकटि पडिउ सुद्द ॥६३७॥

(चउपई)

नारद-वयण सुणी नर पंच, आपापणा करइ परपंच ।
नर निरतइ नीसरीआ विमर, [10]जिहनी आलि न सहीइ अमर ॥६३८॥

घर छांडी गयणंगणि गम्या, पुर पहिठाण ऊपरि भम्या ।
सघलूं सेन विमासइ इसिउं ,परवति-पाँख नीसरी कि सिउं ? ॥६३९॥

---

१. 'सिउ कसइ' आ. २. 'थोडु वाद विगोउ' आ. ३. 'दल वीनम्यु' अ. ४. 'तउ बोलाविया' आ. ५. 'कंतेणि' आ. ६. 'भड' आ. ७. 'बीजइं गमइ दल सहित नरवर' आ. ८. 'वीस लेई वर वल्यू' भा. ९. 'कांचू तह्य-तणउ' आ. १०. 'जेहनां प्राण रूप छइ अमर' आ.

जां सूदु नइ [1]सूद्रक जड्या, तां पांचइ आवी पगि पड्या ।
पायक छतां न झूझइ नाथ, हवि तूं जोइ अम्हारा हाथ ॥६४०॥

आगइ एकनइ धरिवा आहि, [2]अनइ पंच पुहुता पड-माँहि ।
अति ऊंचा नइ अंजन देह, किरि महि-मंडलि आव्या मेह ॥६४१॥

घोर अंधार अंधारूं करइ, दिनकर-[3]तणां किरण आवरइ ।
सेवा लीयउ [4]वरतावइ सीत, वइरी-तणाँ कंपावइ चीत ॥६४२॥

सूली-भंजण भंजइ अंग, जिणि दीठइं पायक हुइ पंग ।
अजउ अमउ वेहूं भड भला, [5]ऊडी तइ सिरि तोलइं शिला ॥६४३॥

इस्या वीर सूदानइं साथि, बावन-सरिसा आवइ वाथि ।
अणी धार नवि लागिइं अंगि, बीजूं झूझि न आवइ [6]रंगि
॥६४४॥

ऊभा भड झुंटि लिइं लोह, तीह आगलि कुण जीपइ जोह ? ।
राइं तइं हयवर हाथी बहू, [7]आघउ थिउ आरोली सहू ॥६४५॥

निवड निहाय धरणि धमधमइ, बूंबारव गयणांगणि गमइ ।
खेहा रवि नवि सूझइ सूर, रणि विसर्या वाजइं रण-तूर ॥६४६॥

मयमत्ता दंतूसल मोडि, [8]थानकि-थका ऊपाड्या कोडि ।
घोडे-सिउं घोल्या असवार, रथ पायक नवि लाभइ पार ॥६४७॥

---

१. 'साथिइं जडया' आ. २ 'पांचइ 'जण' आ, ३ 'तणु तेज संहरइ' आ. ४. 'चडावइ' आ. ५. 'ऊपरि-थ्या वे तोलइ' आ. ६. 'छंगि आ. ७.आ टूंक 'आ'मां न थी. ८. 'दीइ' घाउ कडयडइ' आ.

ऊभा वीर सवे ऊपडी, पहु परधान विमासरण पडी ।
"निश्चिइं नर ए रूपि इसिउं, पांडव-मांहि पुरुषोत्तम जिसिउ ॥६४८॥

प्राण विनाण सहु परिहरउ, [2]माम-माँहि ईणि सिउं सल करउ ।
जिणि गोरूं कीधा [3]गजमार, जिह्नी [4]झड न सहइं भूझार ॥६४६॥

बीजी "[5]वुद्धि न आवइ बंधि, बलीउ चोर तु कीजइ [6]संधि ।"
सुणीवात व्यापारी-तणी, चालिउ चोर-नइ मिलवा भणी ॥६५०॥

पंच [7]जणे-सिउं पालउ थाइ, आयुध [8]मेल्ही आविउ राइ ।
सदयवत्स चालीनइ वीर, साहमु पुहुतु साहस-धीर ॥६५१॥

सांई लेई लागउ पाइ, तां वांसइ अवली गम राइ ।
ते देखी हरख्युं नरनाह, साचइ सदयवत्स [9]हुइ आह ॥६५२॥

[युद्ध सदयवत्सवीर-परिचय]

जाणी अंग-तणउ आकार, खाँडइ सदयवत्स श्रीकार ।
तां ऊलखिउ उजेणी-स्वामि, तउ नरवरि बोलाविउ नामि ॥६५३॥

सूदु वयणि विमासइ ताम, नरवर बोलाविउ लेई नाम ।
हिव एह-सिउं उलवरण रही, सुधि-तणी वात पूछी सही ॥६५४॥

[सावलिंगा पिता-वचन]
"कहइ, कुमरि छइ केणइ ठामि ?,"
"तम्ह बेटी बंदीजणगामि" ।
[सूदा-वचन]
पंथ वीर थानिक पाठवइ, सूउ अवर बुद्धि आठवइ ॥६५५॥

---

१. 'राउ' आ. २. 'साहमा जईनइ सेवा करउ' आ. ३. 'मार' आ. ४. 'झट' आ. ५. 'वाह्र' आ. ६. 'कधि' आ. ७. 'बलइ-सिउ' आ. ८. 'मूठी' आ. ६. 'जे आ.

(छंद पद्धडी)

जं वयण पयासइ सदय सार,
तिणि सालि-राय साणंदकार ।
बोलाविउ सुत सकतिकुमार,
करि वच्छ! [2]सजाई म लाइ वार ॥६५६॥

[सार्वालिगा-आनयन आदेश]

छइ कुमरी [3]कविजन-तणइ आवासि,
[4]आणू करेवि [5]आणउ आवासि ।
सु तस ततक्षिण कुमरि किद्ध,
पालखी [6]परिथह सत्थि लिद्ध ॥६५७॥

[उत्सव]

हुई तलीया तोरण हट्ट वट्ट ।
संपत्ता [7]शकति-रूपिणि भट्ट ।
चउमासि जल-राशि जिम्म ।
किरि कमल नयरि पुहतु तिम्म ॥६५८।
पय लग्गवि बहिनर किउ प्रणाम ।
आसीस अखय भणि दिट्ठु ताम।
सिंघासणि संथप्पी सुवेस ।
बहु उत्सवि पट्टणि किउ [8]प्रवेस ॥६५९॥

(गाहा)

संपत्तो सदयवच्छो, ससुरालय सार्वालिगि-संजुतो ।
अदिणुण अणागए रवि, [9]चित्ति न चाहिज्ज ए वीरो ॥६६०॥

---

१ 'ता तणइ सुधि' आ. २. 'वेगि लाउ सि वार' आ. ३. 'वंकीजन' आ, ४. 'आणु करि' आ. ५. 'आणू तम्ह' आ, ६. 'सुखासण' आ. ७, 'परि दुआर, संपत्त भूयण सकतिकुमार' आ. ८. टूंक 'आ.' मां नथी. ९. 'वित्त आवधारा मां पच्छितह पूर ए अत्थो' आ.

कीय मित्त मण-गमंतय, विप्पो वणिक्क इक्क खित्तिउ ।
तिहि [1]परिसत्त-परिछुण, अवलोइ कम्म घण घोरं ॥६६१॥

जूवटइ वत्त विसुणीय, पंथी पासंमि [2]एक्क अप्पुवी ।
नित्त मडू नित धाह, विवहारी तणइ तं सुपुरो ॥६६२॥

[3]निच्छ निच्छ तवइ [4]नवे जणि, जा लिज्जइ चरणि च पिवि हेइ मज्झंमि ।
ताँ ते पुरिस पहिल्लो, पुहुच्चइ ए मंदिरे [5]मडउ ॥६६३॥

(दूहा)

[6]इम अवगमी अणेइ दिण, थिउ वाणोउ विलक्ख ।
जे परिजालइ [7]पिंड इह, तिहिं दिउं वित्त लक्ख ॥६६४॥

[शबदाह प्रसंग]

(चउपई)

सुणी वात किलकिलिउ वीर, सदय नरेसर साहस-धीर ।
मित्र-तणउ मेलावउ लेऊ, तीणइ नयरि [8]आव्या तेऊ ॥६६५॥

जां आवी ऊतारु किद्ध, राँधिणिनइ घरि [9]रांधण दिद्ध ।
तां नयरी डाँगरा-निनाद, साते सेरी तेह जि साद ॥६६६॥

---

१. 'पुहवत्ता' अ. २. 'एय' आ. ३. 'नित्त नित्त' आ. ४. 'नव जण जालय करइ चरण संपत्ति' आ. ५ 'मेरू' आ. ६. 'इम इम गमीय अणेग' आ. ७. 'पंडिग्रह' आ. ८. 'आविउ घइ' आ. ९. 'रांधवा' आ.

छइलिइ जई [1]छीतउ डाँगरउ, "कां रे [2]अति गाढा गाँगरउ ? ।
तउ आपे बापडा वि लाख, जउ ए दही देखाडउं राख" ॥६६७॥

[3]सेठि विदाधिउ बोलइ वयणः राउत [4]रक्त थयाँ बे नयण ।
"जउ लहुडा बालइं तूंह वाप, तउ अम्ह काँई अधिकूं आप"
॥६६८॥

"अधिक ऊछानी ए कुण बात ?, [5]एक-तणइ कुमरि दिउं रात ।
जे ए वडउ टालइ ऊचाट, तिहि-सिउं [6]भव सगपणनी वाट" ॥६६९

[शाकिनी-संतापित विप्र-कन्या]

करी सेठि-सरसी दृढ वात, चाल्या [7]तिहि ऊचलिवा तात ।
तां पुरोहित-घरि जागर पडइ, कुमरि कूंआरी शाकिनि नडइ
॥६७०॥

वरस दिवस लगइ वाजइं डाक, ऊपरि गुणीया हाको हाक
बापिइं बेटी छाँडी आस, टालइ दोस परणावूं तास ॥६७१॥

सदयवच्छि जई जोई द्रेठि, आवी पात्र बईठउ पग हेठि ।
"जास हाथि हरसिद्धि-हथीयार, तिह-सिउं अम्ह केहउ अहंकार?
॥६७२॥

नीरी करी [8]दइसई दीकिरी, साथिईं वि तिह कारणि वरी ।
आव्या सेठि-तणइ अहिठाणि, तां ते मइूं [9]पडचूं भंपाणि ॥६७३॥

---

१. 'लछोन' आ. २. तम्हे 'गाढइ' आ. ३. 'विदोगिई' आ. ४. 'रांति रगत थियाँ नयण' आ. ५ 'तेह नइ' आ. ६ 'भावह' आ. ७ 'च्यारिकुंबर विख्यात' आ. ८ 'घोस' आ. ९ 'जडिउं जंयणि' आ.

काढी कुकँई काँबलि बंधि, एकइं खोखूं कीधूं कंधि ।
सूकट लेई लाखिउ समसानि, महाजन भणइः "ए विस्मय मानि"
॥६७४॥

सेठि अणावि अगर नइ आगि, ऊठी काजि आपणइ लागि।
राति निचँतु निद्रा करे, बोल्या बोल सवे साँभरे ॥६७५॥

[सूदा वचन]

सूदउ भणइः "सुणउ अम्ह मित्र !, ए दीसइ छइ देव [2]चरित्र।
ईंणिइं कोई वसिउ वैताल, [3]आज लगइ इणि मंडिउ आल ॥६७६॥

[प्रथम प्रहर कार्य]

(छप्पय)

पुहुरि पहिल्लइ विप्प, राउ जागंतु जोइ ।
तां निसि भरि नारी, मसाहणि सूली-तलि रोइ ॥
"परिठवि पुठि दया, [4]पर दया मर पत्तउ ।"
कामिणि पूछीय कज्ज, कंधि धरि ऊभउ हुंतउ ॥
भोजन दियंत मिसि डाकणी, खाइ माँस मच्छरि चडीय ।
उत्तम तिवार असि वावरो, करिय चूडि त्रुट्टवि पडी ॥६७७॥

[द्वितीय प्रहर कार्य]

बीजइ पुहरि प्रधान-पुत्र, बलवंत बईट्ठउ ।
तां उल्हाणउ अगनि, तेज दूरिट्ठिय दिट्ठउ ।

---

१. 'खोखट' आ. २. 'दैव' आ ३. 'दाणव देत हसिई विकराल' आ.
४. 'परदई' आ.

पायक कज्जि पहुत, प्रेत परवरियउ पख्यलि ।
विचि खीचड कलकलइ, वद्ध बाबीस कुमर तलि ।
मुझ स्वामि होमसइ पंच नउ, एक्क गहीय बीजा गहिसि ।
घसि लिद्ध धगंतउ लक्कडूं, तीणि ऊडी ग्या सइं सहस ॥६७८॥

[तृतीय प्रहर कार्य]

खत्तीय त्रीजइ पुहुरि, दैत्य नयरी दिसि दिक्खइ ।
वितर [1]वंसइ वंधि, पूठि-थ्यु परिकम्म पेखइ ॥
सत [2]कमाड ऊघाडि, राय-सुति सूती लीधी ।
आणी आपण पासि, युवति जागंती कीधी ॥
"मुझवरि कइ समरि जीण [3]ऊगिरइ, षिहु त्रीजउ समरू सुभट
[4]पड छाँडि ऊभु [5]असिवर सरिसु, कीय कंकाल विखंड घट ॥६७९।

[चतुर्थ प्रहर कार्य]

चउथइ चतुर चकोर, वर वंसधर जग्गइ ।
तां [6]ऊट्ठवि मढ्ढं मुरेडिउ, जूअ-जीअ [7]उट्ठवि मग्गइ ।
मुद्द भणइः "तन सार, पट्ट [8]कवडी न कडंतह ।"
तीणि ततखिणि आण्यउ पाट, जिणि राय रमंतह ।
सिर-कमल हराविउं हेलि रसि, प्राण प्रेत-गृह टालिउ ।
त्रिहु मित्र [9]अजग्गिइ, एकलइ [10]तिह ति पिंड प्रजालिउ ॥६८०॥

१. 'वद्दसइं' आ २. 'कमाड' आ ३. 'ऊगरइ' आ. ४. 'पडछाँहि आ. ५. 'सूर झिसिउ' आ. ६. 'सिर मोडवि मढउ'' आ. ७. 'उडाग' आ. ८. 'कूडीय' आ. ९. 'अजग' आ. १०. 'तेणि मढ्ढं पर' आ.

(चौपई)

जाग्या मित्र पेखइ परोहडूं, तां तीणि बलइं बालिउ मडू ।
च्यारि पुहर सेविउ समसान, ऊठी कीधूं सविहूं सनान ॥६८१॥

[श्रेष्ठी-प्रति प्रतिज्ञा-पालन-कथन]

करी सनान बोलाविउ साह, "[1]आपि वित्त, नइ करि विवाह ।"
सेठि भणइः "तम्हि कूडूं किद्ध,अम्ह देखतां दाघ नवि दिद्ध" ॥६८२।

मिल्या रोस-भरि राउलि गिया, राइं रूडी परि पूछिया ।
विण संकेत न मानइ सेठि, "कांईं [2]उदाहरण दाखु द्रेठि" ॥६८३॥

[शबदहन-प्रमाण निदर्शन]

पहिलइ पुहरि जि जागिउ तांह, तीणिइ आणी आखी बाँह ।
वाढी [3]चोरि जि चूडा काजि, ते कूडूं मानिउ महाराजि ॥६८४॥

"ए राणी-नउ हुइ हाथ", सुणि वात सोधइ नरनाथ ।
दीसइ नही निशाचरि भमी, फिरि आकासि भणी ऊपमी ॥६८५॥

बीजे तउ बोलिउ तिणि वार, काँ रहीहि राजकुमार ? ।
सहवुं काजि सोधावइ सामि !,[4]देव न दीसइ कीणइ ठामि ॥६८६॥

नयर-नराहिव सोधइ कुमर, पर प्रासाद अनइ वर विमर ।
एकइ तां वीनविउ अधीस, [5]पउढया पोलि [6]बाहरि बावीस ॥६८७।

सुणी वात स पुहुत्त, दूत, सूतउ [7]ऊपाडिउ अपूत ।
जाणइ वितर विलग्यु वली, ऊठया कुमर सवे खलभली ! ॥६८८॥

---

१. 'मागि वित्त अनइ' आ. २ 'दारुण दीठु' आ. ३. 'दोरी चूडी-नइ' आ, ४. टूंक ६८५ 'अ'मां नथी ५. 'पडया' आ. ६. 'वीर' आ. ७. 'ऊगम्यु सूत' आ

[1]लेई आव्या आदीसर पासि, वईसार्या प्रभि आपरण पासि ।
तउ बेटा बोलइ "सुरिण तात !, ए संकट-नी विसमी वाट ॥६८९॥

[2]कुलदेव तिके कीधी सार, पूंठिइं पाठवीआ पढिआर ।
पाणीवल जउ आवइ पछइ, तउ ते [3]सवि संघार्या अछइ ॥६९०॥

[4]वांसइ वितर [5]करि करवाल, लीधू लाकड झांपी झाल ।
तीणइ भइरवि भडकाव्या भूत, [6]सवि ऊठी आकासि पहूत ॥६९१॥

एक एक-पाहिइं अति भला, अधिपति-तणा कुमर [7]एतला ।
सवि [8]ऊगार्या साहस धीरि, पोलि लगइ पहुचाड्या वीरि ॥६९२॥

तउ त्रीजा-प्रति पूछइ [9]पहू, कारण कहिसिइ कुमरी [10]सहू ।
सात कमाड तरिण करि सार, किम ऊघाड्यां विमर [11]द्वार ?
॥६९३॥

तीरिण वात वसिउ [12]विखवाद, कुमरी काजि करावइ साद ।
निद्रालूई नराहिव-वच्छि, पिता पासि ते पुहुती [13]लच्छि ॥६९४॥

[कुमारी-स्वानुभव कथन]

[वस्तु]

"तात ! संभलि, तात ! संभलि, वात ति जि वीत ।
हरी निशाचरि निशि समइ, निद्द-भरि निज सयरिण सुतीय ।

---

१. 'आव्या आघीसर आवासि, बइसारइ प्रभ' आ. २. 'कांई कुल देवी' आ. ३. 'सघला' आ. ४. 'वाह्या' आ. ५. 'सवि' आ. ६. 'तिम ऊठ्या जिम एक महंता' आ. ७. 'केतला' आ ८. 'ऊवाह्या' आ. ९. 'एहु' आ. १०. 'वहु' आ. ११ 'विचार' आ. १२ 'रा विखवाद' आ. १३ 'अच्छि' आ.

कांमिइं वरि कांई को समरि, [1]लेई विवरि खित्तिय ।

पडछाहि ऊभउ सुभट, ते मइं समरिउ स्वामि ! ।
तीणि ततखिणि दैत [2]दलि, एणइ पुहचाडी ठामि ॥६६५॥

[चउपई]

हणिउ दैत्य जोवा [3]जण घणा, अधिपति पाठविया अति घणा ।
विवर-मांहि ते पडिउ प्रचंड, दीठउ दाणव-देह विखंड ॥६६६॥

जस भुइं पुहरि पोलि दीजती, जस भुइं कोडि जतन कीजति ।
ते भय भव सुधि टालणहार, ए अ कुमरी करि अंगीकार ॥६६७॥

सदयवच्छ बईठउ ते सूर, जउ बोलइ तउ भावइ [4]भूर ।
श्रीजउ पुत्री जउ [5]जण लेउ, [6]सुणीय हुई मनि हरखिउ तेउ ॥६६८॥

चउथइ ठामि जि जागइ सुभट, ते नरवरि बोलाविउ निकट ।
"तम्हे तम्हारूं कारण कहउ, आणइ राजि धणी-थिया रहउ"
॥६६९॥

तउ सूदइं [7]मोकलावि मित्र, [8]अति डाहउ अधिकारी-पुत्र ।
कही अहिनाण अणाविउ पाट, सोनानउ श्रीकारिउ घाट ॥७००॥

पासा पाट सोगठां सार, देखी नरवर वसिउ विचार ।
"लिउं भंडार-तणी सुधि सहू, पछइ पूछउं कारण कहू ॥७०१॥

---

१. 'लिउ' आ. २. 'हणिउ तेण' आ. ३. 'रणझिण्या राइ' आ. ४. 'सूर' आ. ५. 'जल' आ. ६. 'भणी हुउ' आ. ७. 'मोकलिउ' आ. ८. 'उत्तम ठामि' आ.

ताला-नउ हर हालिउ नही, पासा पाट कढाणा किहीं ? ।
अति आदर-सिउं पूछइ राउ, "कहउ देव ! ए कवण उपाऊ ?"
॥७०२॥

[1]सूदइं प्रेत-पराक्रम [2]कहिउ, तीणि राजा [3]रोमांचिउ रहिउ ।
एह-सू खित्ति नही समानि, एक-एक-नइ विसमा मानि ॥७०३॥

(वस्तु)

तीणइं अवसरि, तीणइं अवसरि, [5]कहइ कर जोडि ।
[6]विनयग्गल विवहारीउ, महाराज प्रति मान मागइ ।
"ऊतारउ अम्ह घरि घटइ", सदयवच्छ पय-कमलि लागइ ॥

तिह पुरिसत्तण पेखि करि, मणि [7]आणंदिउ साह ।
लिउ देव ! सविसेस करि, वित्त अनइ वीवाह ॥७०४॥

[विवाह]

(चउपई)

विप्पि कीधउ कन्या-दान, सेठि-तणइ परणिउ परधान ।
राउत-नइ [8]राइं दीधी पुत्रि, हरखिउ सूद, मंडाणइ मित्रि ॥७०५॥

जे जे खांखर [9]अनइ खंखाल, अठ पुहर जे [10]सधाइ आल ।
इस्या भूख भडि पूरा कीध, ग्रास वास [11]मुहि माग्या दीध ॥७०६॥

[12]लीधां [13]हयवर नइ हथीआर, कीधा सुभट-तणा शणगार ।
कणय-कप्पड उलगू अनंत, लेई चालिउ लीलावई-कंथ ॥७०७॥

---

१. 'सूदउ' आ. २. 'कहूइ' आ. ३. 'रोमांच्यु रहइ' आ. ४. 'एकनी आधिकी मानि' आ. ५. 'कहईअ करजे' आ. ६. 'विनय लगइ' आ. ७. 'साणंदिउ' आ. ८. 'अवि मति नी' आ. ९. 'धज' आ. १०. 'सीधइ काल' आ ११. 'तुहि' आ. १२. 'कीधां' आ. १३. 'हवइ वरनइ' आ.

करी कटक संचरिउ सूर, वाज्यां रण-काहल [1]रण-तूर।
जिहां श्री [2]नर-इंद निवास, तिहां समहूरतइ मांडिउ वास ॥७०८॥

[3]वीरकोट [4]तिहां नगरी नाम, दीधूं देखी उत्तम ठाम।
नई नीझरण अनइ आराम, [5]वारू लोक तणा विश्राम ॥७०९॥

लोभ दिखाडी वास्या लोक, आपइं [6]सांथ समाहण रोक।
पुण्य-श्लोक प्रजा-प्रतिपाल, भू-मंडण भूसण भूपाल ॥७१०॥

आणी वास्या [7]वन्न अढार, तिणि पुरि उच्छव-[8]जयकार।
कर्म आपणउ सहूको करइ, राम-तणी परि राज [9]उद्धरइ ॥७११॥

[पुण्य महिमा]

[वस्तु]

पुण्य रूसइ, पुण्य रूसइ, सकति सूर सिद्ध ।
पुण्यइ प्राणि वनिता वरइ, पुण्यइ पवर पयरहण लब्भइ।
ठाण-भट्ठ निद्धंत नर अडवडंत, सुउण पुणि धुज्झइ ॥
पुव्वह भव-तणा पखइ, न सुख शरीरि ।
पुण्यइ एउ पामी सहू, संपति सूदइं [10]वीरि ॥७१२॥

[सार्वलिंगी लीलावती आनयन]

[चउपई]

सार्वलिंगि [11]लीला जिहां ठवी, ते [12]लेवा प्रधान पाठवी।
हुंती सुसरालइ जे बेउ, आणउ करी अणावी तेउ ॥७१३॥

राणी बिहुं [13]प्रति दीइ बहु मान, रंगि रमंतां [14]हूआं आधान।
क्रमि क्रमि जउ पुहता दस मास, [15]पुत्त-जनमि तउ पूगी आस ॥७१४॥

---

१. 'नइ' आ. २. 'नंद राय' अ. ३. 'वीर कोटि' आ. ४. 'तस' अ. ५. 'चारू' अ. ६. 'साघ' अ. ७. 'वर्ण' आ. ८. 'जय जय कार' अ' ९. 'हरइ' अ. १०. टूंक 'आ' मां नथी. ११. 'लीला वइ' आ. १२. 'तिहां' आ. १३. 'प्रतिइं अति' अ. १४. 'हवूं' अ. १५. 'पुत्ति-जन्मि' आ.

[उभय पुत्र-जन्म]

वीर विभाउ जि सामलि-तणउ, वरवीर लीलावई-तणउ ।
[1]बे डाहा बे लक्षणवंत, रोसि चडया आणइ अरि-अंत ॥७१५॥

[पुत्र शिक्षण]

[2]भणइ गुणइं [3]सवि विद्या सार, [4]वडइ वडावइ चडया कुमार ।
भणइं [5]दंडायुध नउ मर्म, वेउ [6]भालि उदयवंतु कर्म ॥७१६॥

सभाँ [7]बईठा सदय उछंगि, राजकुमर बोलावइ रंगि ।
बिहुं कुंअरनूं करइ वखाण, आवइ भाट कहइं 'कल्याण' ॥७१७॥

[उज्जयिनी भाट-आगमन]

करइ [8]वखाण पहुवच्छह-तणूं, [9]दान मान दीधूं अति घणूं ।
सुद्द भणइः "तुम्हि किहां निवास?" ते भणइः "अह्म ऊजेणीवास" ॥७१८

भाट प्रतिइं इम बोलइ भूप; "[10]कहि कांई ऊजेणि-सरूप ?"
"ऊजेणी अरि-कटकि आवरी, तउ अम्हि आव्या [11]आंहां नीसरी" ७१९

[शत्रु-आक्रांत उज्जयिनी-वृतांत । सदयवत्स प्रतिज्ञा-ग्रहण]

तं [12]जाणी राउ कोपिइं चडिउ, [13]जाणे अगनि-माँहि घृत ढलिउ ।
"बीजी वार तउ भोजन करूं, वइरी-तणुं सेन संहरूं ! ॥" ७२०॥

१· 'वेय छोटा नयू' आ. २. 'पढइं' अ. ३. 'सूत' आ. ४. 'चडइ चवड.वइ वर्यां कूंआर' अ. ५. 'डंड युद्ध' आ. ६. 'भाई' आ. ७. 'बइठो सूदा उछंगि, तू राजा पूछइ मन रंगि' ८. 'कल्याण' आ. ९. 'राजादान दिवारइ घणूं' अ. १०. 'कहु ऊजेणी किसू स्वरूप' आ. ११ 'ईह' आ. १२. 'संभलि' आ. १३. 'विश्वानरह जिम घड्हडिउ' अ.

[सदयवत्स-कुमार युद्धोद्योग]

वीर विभाउ अनइ वरवीर, बोलइ कुंअर बि साहस-धीरः।
"सभामांहि बीड़ूं लिइ वच्छ!, अम्हे ऊत्रेलउ रा पहुवच्छ" ॥७२१॥

[1]हयदल पयदल आपी सार, [2]बोलाव्या वारू भूझार ।
जि रहि जीण जीवरखीय लेउ, वारी [3]कटक संचरिया बेउ॥७२२॥

छडे पीयाणे ग्या ऊजेणि, ढोल नीसांण वजाव्यां तेणि ।
जे बईठा गढ पाखलि फिरी, ते [4]ऊडथा जिम ऊडइ खुरी ॥७२३॥

[राय प्रभुवत्स-चिंता]

राउ पहुवच्छ विमासण करइ, "गढ [5]पाखलि हय गय तरवरइ ।
जे दलि भागुं इह भडिवाइ,[6]सही [7]समरथ को मोटउ राइ॥"७२४॥

राय पहुवच्छि [8]मोकलिउ भाट, पेखइ [9]पयदल घोडां [10]घाट ।
[11]तेडी भाट भणइः "कुण तम्हे ?"

[सदयवत्स-कुमार उत्तर]

"सदयवच्छना नंदन अम्हे" ॥७२५॥

बंदीजण तउ करइ वखाण., [12]आपइ हेम करह केकाण ।
आयस मागी ग्या गढ़-मांहि,सदयवच्छ आविउ[13]तिणि ठाहि॥॥२६॥

[सदयवत्स-आगमन]

भाट भणइ : "तम्ह किरणाउली,"तिणि वयणि राउ हरखिउ वली।
प्रमदा-सिउं पुहुतउ सदयवच्छ. सूत-सिउं [14]प्रणम्यु राउ पहु-
वच्छ ॥७२७॥

---

१. 'गल' आ. २ 'चलाविया जिकि' त्रि. प्र. ३. 'विकट संख्यायां छेउ' आ. ४. 'सवि ऊडीग्या जिमछरी' आ. ५. 'पाखलिइं असणि.' प्र. ६. 'ए' प्र. ७. 'ए कोइ मोटेरो राय आ. ८. 'मोकलीय' आ. ९.'गयदल' आ. १०. 'घाट' अ. ११. 'भेटी' आ. १२. 'आप्या' आ. १३. 'तिउह' आ. १४. 'सुत-सूं पय प्रणमइ सुदयवच्छ' ।

[वस्तु]

[1]राउ हरखिउ, राउ हरखिउ, [2]सुत-ह संपत्त ।

तव नयरी आणंद हूय, पंचशब्द वाजित्र वज्जइ ।
माय ताय [3]जुहार कीय, गरूय वीर गंभीर गज्जइ ॥

अवसरि पय प्रणमीय, सदयवच्छि तिरिण वार ।
माडी [4]आसीसह दिइ, राउ सिरि समोप्यु भार ॥७२८॥

[स्वजन मिलन]

[चउपई]

कुंअर सवे आवीनइ मिल्या, मान-सहित गाढा जलहल्या ।
राज करइ राय-सिउं सवे, भणइ गुणइ उच्छव तिह घरे[5] ॥७२९॥

[वस्तु]

पुण्य तूसइ, पुण्य तूसइ, शांतिशर शच्छि ।

पुण्यइ प्राणि वनिता वरी, पुण्य-पवर पवर पयरहण ।
लब्भइ ठाण निद्धंतर नर, पुण्य-घोसि चडवडंत पण ॥

पुण्य जि पुव्वह भवतणां, परखइ न सुख शरीर ।
पुण्यहि ए सहू पामीयइं, संपत सुद्द वरवीर ॥७३०॥

इति श्री कविभीमविरचित श्री सदयवत्सवीर प्रबंधः
सम्पूर्णः ।

---

१. 'राय' आ. २. 'पुत' आ. ३. 'जोहार कीछ' आ. ४. 'करइउ परिणां राय समोप्यइ भार' आ. ५. टूंक ७२९ 'अ' मां नथी ।

अंतिम पृष्ठ । सदयवत्स वीरप्रबन्ध । लिपि संवत १५९० (देखिये ग्रंथ पृष्ठ १०५)

अंतिम पृष्ठ : सदयवत्स वीरप्रवन्ध : लिपि संवत १४८८ [पोथी असमग्र] (देखिये ग्रंथ पृष्ठ १०५)

'अ' प्रति की पुष्पिका ।

इति श्री सदयवत्स वीरचरित्रं समाप्तं ।

संवत १४८८ वर्षे फाल्गुन ...... भौमे श्री ... पत्तने लिखितं विद्वज्जन मनः प्रमेमोऽयं विनोदमात्रम् । [प्राच्य विद्यामंदिर । नं० ४२६२]

'आ' प्रति की पुष्पिका ।

इति श्री सदयवच्छ चुपइप्रबंध समाप्त । शुभम् भवतु ।
श्री सं. १५६० वर्षे मागशर वदि ५ रवौ (पं. श्रीचंद लिखितं) (जैन साहित्य भंडार, पालीताणा)

'इ' प्रति की पुष्पिका ।

इति श्री सदयवच्छ कथा समाप्ता । श्रीशं भवतु । कल्याणमस्तु । संवत १६६१वर्षे आसु सुदि १ दिने धनकनाम संवत्सरे । महाराजाधिराज महाराजा श्री रायसिंघजी विजयराज्ये, श्री खरतरगच्छे भट्टारक, श्री जिनचंद्रसूरि गणि पं. श्री २ श्री चारित्रमेरुगणि तत् शिष्य पं. श्री १ सीहा तत् शिष्य चेला हीरा लिखितं । श्री फलवधीमध्ये ।

[फलोधी जैन भंडार]



परिशिष्ट १

सदयवत्स सावलिंगी पाणिग्रहण चुपई

॥ दूहा ॥

सरसति सामिणि पाय नमी । मागुं एक पसाय ।
सदयवच्छ-गुण गायतां । सुभ मति देयो माय ॥१॥

मात मया मभनइ करे । आपे अविरल वाणि ।
तुझ प्रसादि गुण वर्णवुं । मूरख हुं अणजाण ॥२॥

जउ तुं माता मुखि वसइ । तु हूं करूं कवित्त ।
सदयवच्छ नरपति-तणउ । भविय ! सुणु इक चित्ति॥३॥

कवण नगरि ? ते किहां हूउ ? । किम तिणइ पामिउं राज ? ।
लघु वेसिइं ते किम फिरिउ ? । किम कीआं तिणि काज ? ॥४॥

॥ चुपई ॥

ऊजेणी नगरी सुविशाल । गढमढमंदिर पोलि पयार ।
वाडी वन अति रलीआमणां । वावि सरोवर तिहां छइ घणां ॥४॥

नवतेरी नगरी विस्तारि । वास-तणउ नवि लाभइ पार ।
गूख जालीआं मन्दिर घणां । पार न पामुं देउल-तणां ॥५॥

चुरासी चुहटां अति चग । नगरी जोतां अति आणंद ।
कलहट कोलाहल हुइ घणा । पूहुचइ कोड सहूको तणा ॥७॥

घरि घरि दान दीइ अति घणां । दालिद छेदइ दुखीआ-तणां ।
ब्राह्मण वेद करइ उच्चार । सहू राखइ आपणा आचार ॥८॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ॐ [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

तिम पृष्ठ । सदयवत्स सावलिंगा पाणिग्रहण चउपई । [लिपि संवत नहीं है ।] देखिये ग्रंथ पृष्ठ १३४। प्राच्य विद्या मंदिर, वड़ोदा

बावन सइं भइरव तिहां वसइ । चउसठि योगिणि हुड हुड हसइ।
सूली-भंजन नामी ओड । चोर खापरु संकल-मोड ॥९॥

पहुवच्छराय करइ तिहां राज । सकल लोकनां सारइ काज ।
न्याय रीति ते पालइ खरी । तस कीरति दहदिसि विस्तरी॥ १०॥

तास घरणि सुमंगला नारि । रूपिइं रंभा-नइ अवतारि ।
सतीशिरोमणि नारी तेह । राजा-सरिसु धरइ सनेह ॥११॥

तास उअरि हूउं आधान । मुक्ताफल जिम सीप समान ।
पूरे मासे सुत जनमीउ । सदयवच्छ तस नाम ज दीयु ॥१२॥

बीअ-तणउ जिम वाधइ चंद । सविकहिनि मनि अति आनंद ।
वाधइ दिनि दिनि तस घरि बाल । रूपवंत नइ अति मयाल ॥१३॥

राय तणइ घरि छइ परधान । पुष्पदंत नामि गुणग्यान ।
मदनसिह नाम सुत ज तणु । रूपगुणे ते रुलीआमणु ॥१४॥

राजकुमरनी सेवा करइ । मित्राचार सदा परिवरइ ।
वेश्या मदनसेना तिहां वसइ । पुष्पदंत वित्त तिहां उल्लसइ॥ १५॥

दिवस राति गणिका-सिउं रहइ । सदयवच्छ ते भेद नवि लहइ ।
एक वार ते गूखिइं चडी । राजकुमरनी दृष्टिइं पडी ॥१६॥

ते देखी कामातुर थयु । सदयवच्छ तस मंदिरि गयु ।
राजकुमर देखी हरख धरइ । मदनसेना बहू आदर करइ ॥१७॥

सदयवच्छ रयणी तिहां रहइ । पुष्पदंत हीयइ दुख वहइ ।
अहि ऊगमि निअ मंदिरि गयु । मंत्रिपुत्र हीयडइ दुख थयु ॥१८॥

पुष्पदंत देखी नवि सहइ । कूडकपट ते हीयडइ वहइ ।
'एहवु कांई करूं उपाय । ए कुंअर छंडावुं ठाय' ॥१९॥

राजकुंयर यौवन-वय हूउ । राजा पासि जुहारीणे गयु ।
कुंअर देखी हरखिउ भूपाल । यौवन-वेसि हुउ ए बाल ॥२०॥

राजामंत्री करइ विचार । "यौवन वेसि हुइ कुमार ।
ए सरखों तुम्हें कन्या जूउ । एता दिवस तुम्हें नवि कहिउ॥२१॥

सदयवच्छ मनि मानइ जेह । राजकुमरि निरखु हिवि तेह ।
देशविदेसि जोई मंत्रीस । पूरु कुंअर-तणा जगीस" ॥२२॥

राय-आदेसि मंत्रि सज्ज थयु । सदयवच्छ ते साथिइ लीउ ।
मंत्रीसर नइ राजकुमार । चाल्या रायनइ करी जुहार ॥२३॥

अनुक्रमि मेदपाटि ते गया । आहडि नगरि पुहुता थया ।
बिहू डाहा बिहू गुणवंत । ईश्वर-देहरइ जाई पुहुत्त ॥२४॥

शिव प्रणमीं तइं बइठा बारि । शिवपूजण आवइ नरनारि ।
सदयवच्छ निरखइ एक-चित्ति । कोइ न मानी आपणइ चित्ति॥२५॥

जितशत्रु रायतणी कुंअरी । रूप अनोपम जिसी अपछरी ।
शिव पूजनि ते आवी नारि । साथि सखी-तणइ परिवारि ॥२६॥

वसंतसिरि नामि कुंअरी । शिव पूजी पाछी संचरी ।
कहइ मंत्री, "मनि मानइ एह ?। गुणलक्षण नवि लाभइ छेह"॥२७॥

सदयवच्छि मुख मोडिउं ताम । "मंत्रीसर ! मूंकु ए ठाम" ।
तिहांथिकी मारुआडिइं गया । जेसलमेरि पुहुता थया ॥२८॥

देहरइ जई तइ बइठा तेह । तिहां नारी बेहु निरखेह ।
महीपाल पुत्री गुणमाल । सखी सहित तिहां आवी बाल॥२९॥

सदयवच्छ तस निरखइ रूप । ते देखी मुख मोडइ भूप ।
'मंत्रीसर ! मेहलु एह ठाण' । गूजर देसि गया गुण-भाण ॥३०॥

अंबावतीइ पुहुता छेह । देहरइ जई तइ बइठा तेह ।
वसंतसेन तिणि नयरि राय । मनमोहनी कुंअरी तस ठाय ॥३१॥

पूजा विष्णु-तणी ते करइ । दासी पांचसात-सिउं फिरइ ।
सदयवच्छ-नइ मंत्री कहइ । 'एहवी नारि अवर नहीं लहइ'॥३२॥

सदयवच्छ मनि मानइ नहीं । तिहांथिकी वली चाल्या सही ।
कुंकणदेसि पुहुता तेह । श्रीपुर नयर तणउ नही छेह ॥३३॥

कामसेन तिणि नयरि राय । निरखइ देहरइ बइठा जाइ ।
तिलकसुंदरी राजकुंअरी । देहरइ आवी सखी परवरी ॥३४॥

देवभवनि ते पूजा भणी । मलपती आवी गजगामिनी ।
निरखी सदयवच्छ तव रहइ । पुष्पदंत तइ वलतुं कहइ ॥३५॥

॥ दूहा ॥

"देशविदेशि वहू फिरिया । निरखी नारि अनेकि ।
अति सुन्दर गुणि आगली । जे लहइ सकल विवेक ॥३६॥

तुझ मनि एकइ नवि वसइ । तु किम सीझइ काज ?" ।
पुष्पदंत इम वीनवइ । 'चलउ अबंती-राजि' ॥ ३७ ॥

नगरि अवंती आवीआ । नरवर कीउ जुहार ।
पूछइ नरवर मंत्रि तइं । "कहु सुत-तणउ विचार" ॥३८॥

तव मंत्री वलतुं भणइ । "वात सुणउ, तुम्हे राय ।
कहुं चरित्र कुंअर तणउं । सुणतां अचरिज थाइ ॥३९॥

च्यारि खंड प्रथवी फिरचा । नारि-रूप नही पार ।
अति सुंदर गुणि आगली । कला - तणउ भंडार ॥४०॥

मोटा नरपति जे अछइ । तेहनी निरखी बाल ।
कुंअर-मन मानइ नही । किम किजइ भूपाल ?" ॥४१॥

इस्यां वचन नरपति सुणी । बोलइ वचन विरुद्ध ।
'कुंअर सुरकन्या वरइ । सावलिंगि वर सुद्ध' ॥४२॥

॥ चुपई ॥

तात-वचनि कुंअर चमकीउ । सावलिंगि ऊपरि चित धरिउ ।
'हवि हूं कामिनि एह जि वरुं । कइ प्रवेस अगनि मांहि करुं !'॥४३॥

मदनसिंघ नइं कहि कुमार । 'तात-वचन सालइ जिम साल' ।
सकल मरम मित्र प्रति कहइ । मदनसिंघ हीयडइ संग्रहइ ॥४४॥

तेहनु कांई करुं उपाय । सावलिंग जिम ठावी थाइ ।
मंत्री बुद्धि विमासण करइ । हवि ए काम किणी परि सरि ?॥४५॥

॥ दूहा ॥

हीग्रा मनोग्थ तं करइ । जे करवा असमत्थ ।
तरुअर स्वर्गिइं मुहुरीया । तिहां पसारइ हत्थ ! ॥४६॥

॥ चुपई ॥

शत्रूकार मंडाविउ राय । वाटघाट वली विसमइ ठाइ ।
देरासरना योगी यती । बांभण भाट अनइ बहूमती ॥४७॥

देइ अन्न नृप पूछइ भेद । इणी परिइ एहनु लहु विछेद ।
ततक्षण कुंअर सजाई करइ । अन्नपान सहूइ परवरइ ॥४८॥

दिवस केतला इणि जाइ । ब्राह्मण एक पुहुतु तिणि ठाइ ।
'कहु जोसी किणि थानकि रहु ?। सकल वात अम्ह आगलि कहु' ॥४९॥

तेह कहइ हवि पूछइ भेद । वलतु उत्तर दिइ विच्छेद ।
'सुणु बात, मंत्री नृप तुम्हे । सघलउ उत्तर देसिउ अम्हे ॥५०॥

दक्षिण देस विचक्षण नारि । तेहना गुण नवि लहीइ पार ।
मुंगीआपुर-पाटण पहिठाण । शालिवाहन राजा अहिठाण ॥५१॥

देवलोकनी उपम लहइ । देखी सुर नर मन गहगहइ ।
वास-तणु नवि लहीइ पार । नवतेरी नगरी विस्तार ॥५२॥

लीलावई राणी गुणवंत । सील शिरोमणि सहज खंत ।
तास कूखि जूअल अवतार । पुत्री पुत्र सकोमल सार ॥५३॥

शकतिकुमार बेटानुं नाम । शालामती बेटी अभिराम ।
रूपवंत नइ रुलीयामणी । विद्या सर्वकला अति घणी ॥५४॥

यौवनमइ ते कुंअरी हुई। तात पासि जई ऊभी रही।
पुत्री देखि पिता गहगहइ। वर-चिंता ते मनमांहि वहइ ॥५५॥

ए सरिखु वर अम्ह-नइ मिलइ। मनह मनोरथ सघलु फलइ।
कही वात ब्राह्मण संचरइ। मन्त्रीसर ते मनमांहि धरइ ॥५६॥

एह वात मनमांहि राखीइ। हुआ विना ते नवि भाखीइ।
काज सरइ अथवा नवि सरइ। लोकमांहि हासा विस्तरइ ॥५७॥

कुंअर कहइ, "मंत्री! तुम्ह सुणु। सारउ काज तुम्हे अम्ह तणउ।
तुम्हविण किम्हइ न सीझइ काज"। सदयवच्छ कहि छांडी लाज॥५८

सीघ्र थई तइ पुहुतु तिहां। मुगीपुरपाटण छइ जिहां।
पाणीपंथा घोडा लेय। पवनवेगि चालइ छइ जेय ॥५९॥

सवा कोटि दीधु वरवीर। जोईइनु वली लेयो धीर।
दाइं उपाइ करयो काम। वहिलु वलण करयो आम ॥६०॥

मदनसिंह चालिउ तिणि वारि। सदयवच्छ नइ करी जुहार।
"हेज म छंडु कुंअर! तुम्हे। निश्चिइ काज करवुं अम्हे" ॥६१॥

इम कही चालिउ मंत्रीस। वाटिइं वहइ राति नइ दीस।
अनुक्रमि पुहुतु पुर पहिठाणि। शालिवाहन राजा अहिठाण॥६२

देखी नगर-मंत्री गहिगहिउ। मदनसिंह हीअडइ हरखीउ।
नगरी जोतां दृष्टि पडी। कामसेना गणिका गुखि चडी॥६३॥

मोहिउ रूप देखी अपछरी। कुंअर वात सवे वीसरी।
तिणि मंदिरि ते पुहुतु जाम। वेशा आदर दीइ ताम ॥६४॥

मदनसिंह गणिका-सिउं रहइ। घणा दिवस इणिपरि निरवहइ।
सकल द्रव्य वेशा नइ दीउ। कुमर-तणउ काज नवि कीउ ॥६५॥

एक दिवस कुमरी-घर बारि। कामिनि गाइ मंगल च्यारि।
वाजइं पंच शबद वाजित्र। नाटिक नाचइ नव नव पात्र ॥६६॥

सुणी शवद मंत्री पूछे य । "ए उच्छव हुई कुण गेह ? ।
चउघडीआनी वेला नही" । सवे वात गणिकाइ कही ॥६७॥

"सार्वलिंगि नृपपुत्री-तणउ । लगन लीउ पंथी ! तुम्हे सुणउ ।
कामविणोय गछइ ठउ एह"। सुणी वयण दुख पामिउ देह ॥६८॥

पूछइ मंत्रीः"कवणह ठाम?" । कामसेना गणिका कहइ ताम ।
"रयणायरपुर नगर विसेसि । रत्नसारराजा तिणि देसि ॥६९॥

रत्नसेखर कुंअर तस तणउ"। हुसि वर, पंथी ! तुम्हे सुणउ ।
पन्नर दिनि होसिइ वीवाह । मंत्रीसर मनि पडीउ दाह ॥७०॥

मंत्रीसर तव चिंतइ इसिउं । "दैव ! सूत्र ए हूऊं किसिउं ? ।
मिं मूरखि ए कीधुं किसिउं ?। घरि जई मुह किम दाखसिउं?॥७१॥

नरपति-काज कांई नवि सरिउं । एता दिवस रही सिउं करिउं ? ।
हविऊं कांई करुं उपाय । जउ किम्हइ काज सिद्धइ थाइ ॥७२॥

चीठी तीम लखी मंत्रीस । नरपति ब्राह्मण नइ मंत्रीस ।
तेणइ नगरि ते चीठी लेय । तव परोहित-घरि आविउ तेय ॥७३॥

करी प्रणाम बइठउ परधान। तव परोहित दीइ बहुमान ।
"कहु कुंअर,किम आव्या इहां ? । कुणथानकि?क,मंदिर किहां"?॥७४

मदनसिंह बलतुं इम भणइ । एक चित्त थई परोहित सुणइ ।
"मालवदेस नयर ऊजेणि । पाय न छीपइ नासिं तेणि ॥ ५॥

पहुवच्छ राजा पालइ राज । लोक सवेनां सारइ काज ।
सुमंगला पटराणी तास । सदयवच्छ सुत लीलविलास ॥७६॥

यौवनवइं कुंअर देखीउ । राइ मंत्री बोलावीउ ।
कहइ, कुंअर-नइ गमती जेह । मंत्रीसर परणावुं तेह ॥७७॥

तु मंत्रीसर साथिइ लेय । मही सघली कन्या निरखेय ।
कुंअर मनि एकइ नवि गमइ । ऊजेणी वली आव्या तिमइ ॥७८॥

सुणी पिता रोस मनि धरइ। कहइ कुंअर देवकन्या वरइ।
सार्वलिंगि वरसिइं सही वारि। रंभ तिलोत्तम नइ अवतारि"॥७९॥

तात वचन श्रवणे सांभली। सार्वलिगि नामिं मनि रुली।
ते विण अवर न परणुं नारि। एह विण हुँ न रहुं संसारि"॥८०॥

तिणि कारणि अम्हे आव्या इहां। कहु पुरोहित! ते कन्या किहां?।
अम्ह परोहिति तुम्ह घरि मोकल्या। चीठी लेई तुम्ह भणी चल्या॥८१

पुरोहित चीठी दिं परधान। वांची लेख लहिउ अनुमान।
"तिम करयो जिम सीझइ काज। घणुं किसिउं? तुम्ह-नइ
छइ लाज"॥८२॥

पुरोहित कहइ, "तुम्हे सांभलु वात। हवइ किसिउं न चालइ रात।
मास दोइ पहिला आवता। मेलापक जोई थापता"॥८३॥

पुरोहित कुंअर मंत्रि-घरि गया। करि प्रणाम तिहां ऊभा रहिया।
"बुद्धिसागर मंत्री! तुम्हे सुणु। एह लेख वाचउ तुम्ह-तणु"॥८४॥

वांची लेख लहिउ सवि मरम। तव मंत्रीसर भाजइ भरम।
जिणि कारणि तुम्हे आव्या हेव। एह काज तुम्ह नु हुइ देव॥८५॥

अवर कहु तुम्हे जे बाल। रूपवंत कला गुणमाल।
छल बल करो देवारुं अम्हे। काज करीनइ जाउ तुम्हे"॥८६॥

मंत्री नृप मंदिरि लेई जाइ। राज-सभा जिहां बइठउ राय।
चीठी दीधी करी प्रणाम। नरपति लेख वंचावइ ताम॥८७॥

सुणी लेख नृप हरखिउ घणु। वलतु लेख लखिउ आपणु।
"जिणि कारणि पाठवीआ तुम्हे। सकल वात जाणी नृप अम्हे॥८८॥

कनकसेन राजानु पूत। जेहनी आण वहइ रजपूत।
सार्वलिगि-कुंअरी तेणइ वरो। एह वात तुम्हे मानउ खरी"॥८९॥

ए कुमरी जु बीजु वरइ । सदयवच्छ कुंअर सही मरइ ।
सुद्धि करुं कुंअर प्रति एह । जिम जाणइ तिम करसिइ तेह" ॥९०॥

तु कुंअर अवंती जाय । दिन आथिमतइ भेटिउ राय ।
देखी कुंअर हरख चिति धरइ । सदयवच्छ आलोचन करइ ॥९१॥

"जिणि कारणि मोकलीया तुम्हे । ते सवि वात सुणावुं अम्हे ।
सोह?सीअाल?कहु हवि वीर"। कुंअर कहइ"जबूक" धुरिधीर॥९२॥

सकल वात मंत्रीसर कहइ । सदयवच्छ अंतरि दुख वहइ ।
"विषम काम नइ थोडा दीह । हुइ काम जु थाउं सींह" ॥९३॥

मदनसिंह तइ कही तव वात । "तुम्हे आवु अम्हारइ साथि ।
सालिवाहन-कुंअरी हुं वरुं । नहीतरि अगनि-प्रवेस जि करुं"॥९४॥

सुणी वचन नयणां जल भरइ । "एहवां वचन कांइ उच्चरइ ?
जिहां तुम्ह जीव अम्हारु तिहां । एह बोल अम्हारुं इहां" ॥९५॥

करी मंत्रणुं दोइ सज्ज थया । अश्व रतन साथि दोइ लीआ ।
देवतणी गति चाल्या जाइ । सांझि पुहुता तेणइ ठाइ ॥९६॥

मुंगीआपुर पाटण छइ जिहां । शालिवाहन राजा छइ तिहां ।
नगर-मध्य जई ऊभा रह्या । देखी नगर हीअडइ गहगहिया ।९७॥

देखी लोक सहू करइ विचार । "किहांथी ए आव्या असवार ?
अमररूप ए आव्या इहां त्रिभुवन-मांहि नथी एहवा किहां॥९८॥

अश्वरत्न ए नही संसारि । भूपति सयल तणइ घरि बारि ।
मनुष्य रूप एहवां नवि होइ । नरनारी जंपइ सहू कोइ ॥९९॥

पूछीइ लोक "ऊतारु किहां ?" । "जे परदेसी आवइ इहां ।
चांदू मालिणि तइ घरि हेव । तुम्ह ऊतारा थानक देव !" ॥१००॥

चांदू मालिणि तइ घरि गया । दोइ कुंअर जई ऊभा रह्या ।
चांदू-नइ तव कहइ दासि । "ऊभा कुंअर दोइ आवासि" ॥१०१॥

सुणी वचन आवो घर बारि। तेतलइ कुंअरइ करिउं जुहार।
"अम्ह ऊतारा थानक कहु"। मालणि कहइ "इणि मंदिरि रहु"॥१०२

कुंअर कंठि मुगताफल हार। ते मालणि नइ दीयु ऊतारि।
"सुणु बहिनि, अम्हे ताहरा वीर। परदेशी पहिरावु चीर" ॥१०३॥

मालणि हीअडइ हरख न माइ। पलिग तलाई दिइ समुदाय।
पुष्पमाल आपइ तिणि वारि। जिमण सजाई करइ अधिकारि॥१०४

सत्तार भक्ष भोजन ते करइ। राजकुंअर जिमवा संचरइ।
सोवन थाल कचोलां सार। बेहू कुंअर बिठा तिणि वारि॥१०५॥

चांदू मालिणि प्रीसइ हाथि। बे कुंअर बइठा इक साथि।
निज करि करी पवन ते करइ। कुंअर-नइ मनि आनंद धरइ॥१०६

आरोगावी आप्यां पान। इणी परिइं दीइ सनमान।
चूआ चंदन अगर कपूर। कस्तूरी परिमलगुण भूर ॥१०७॥

सुख-सज्जाइं पुहुढया जाम। चांदू मालणि पुहुती ताम।
चांदू पूछइ मननी वात। "एणइ नगरि किम आव्या भ्रात?" ॥१०८॥

सवि संखेपिं ऊत्तर देय। कारण-तणु कहिउ सवि भेय।
सावलिंगि कुंअरी ए वरइ। कइ निश्चि अणखूटइ मरइ ॥१०९॥

सुणी वयण मालणि मुरकाइ। "निरास्वाद आव्या इणि ठाइ।
जिणि कारणि आव्या मझ वीर। सावलिंगि दीधी बडधीर॥११०॥

नेमु लगन लीउ तस तणु। [चांदू कहइ] कुंअर! तुम्हे सुणु"।
मदनसिह मालणि प्रति कहइ। "करु उपाय कुंअर जीवतु रहइ१११

एक अम्हारुं करु तुम्हे काज। सावलिंगि देखाडु आज"।
तिणि वयणे रीसिइ धडहडी। कुंअर-नइ कहि कोपिइ चडी॥११२॥

"तुम्ह कारणि मझ मरि ठाइ। अम्ह मंदिर वली लूसइ राइ।
एह वात अम्हि नवि थाइ। तुम्ह बाति मझ जीव ज जाइ!"॥११३॥

कुंअर हाथि अछइ मुंद्रडी। सवा कोटिनी हीरे जडी।
चांदूनइ वली दीधी तेह। "कहइ, तुम्हथी हुइ काम ज एह?"॥१११

मुद्रा देखि हीइ गहगही। "एह काम हवि होसि सही।
तु तुं माहरुं लेजे नाम। सार्वलिंगि आपउ एणइ ठामि"॥११५।

ततक्षण मालिणि करी सिणगार। जाई पुहुती राजदूआरि।
घरभीतरि + + + + + + + + + ॥
+ + + + + + + + +
+ + + + + + + + +ण जिमण करीसि इहाँ ॥१५४॥

अरहटि बइठउ गाइ गीत। तिणि राणीनुं मोहिउं चीत।
राणी तणउ चित्त तव चलिउ। मनमथ सैन्य अति खलभलिउं॥१५५

तु दीनवचन ते आगलि चवइ। वली वली राणी वीनवइ।
तीणइ वचनि ते पुरुष ज हसिउ। एक वार तइ कारण किसिउ॥१५६

निरास्वाद पापिइ छूडीइ। थोडइ केहबइ सत न छांडीइ।
जे माणस नवि लाभइ छेह। तिह सिउं किमइ न कीजइ नेह॥१५७

वलतुं राणी बोलइ इसिउ। जेहनुं मन जे साथिं वसिउ।
तेह तणउ नवि अ्रूटइ नेह। जाँ लगइ जीव हुइ इणि देह॥१५८॥

कहिउ अम्हारु तुम्हे करु। माहरइ साथि पंथि अणुसरु।
मारुं राजि एणइ काजि। पछइ होसिइ आपणुं राज॥१५९॥

द्रव्य आपणइ छइ अति घणउ। मनोरथ सारउ तुम्ह तणउ।
इसी वात ते सरसीं करी। जोज्यो हेज स्त्रीनु चित धरी॥१६०॥

इम करताँ राजा आवीउ। भोजन समुद सव ल्यावीउ।
राणी कहइ"सुणउ महाराज। वात एक मनि आवो आज॥१६१।

---

* प्रतिमां, एक पत्रनी त्रुटि होवाथी कडी, १२६ थी १५३-५४ अंक सुधी खंडित छे. —सम्पादक.

तुम्ह देही सुकोमल जाण । थया एकला करम बिनाणि ।
काम काज तुम्हे ढीलइ करु । माहरइ जीवनइ होइ छइ मरु ॥६२॥

नफर एक राखीजइ भलु । जि हुइ चीत सदा निरमलु ।
राजा कहि, "सुणि राणी वयण । एहवु पुरुष राखीजइ कवण ? ॥६३॥

आपणनइ तेहवु न मिलइ कोइ । माणस मेहली साधि होइ ।
निराधार एहवु कुण मिलि । राति दिवस जे साथि पलइ ?" ॥६४॥

राणी कहइ, "राजा सांभलु । आ पुरुष विदेसी छइ एकलु ।
मि सघलो एहनइ पूछी वात । एहनइ कोइ नथी संघात ॥६५॥

वीतक सुणीआं एहनां घणां । जिम वीतक हूआं आपणां ।
आपणी वात एणि सवि कहि । ते सांभली अचंभइ रही ॥६६॥

खित्रो एक अवंती वास । अछइ घरणी गंगा तास ।
गंगा-मात अवंती वसइ । आणु करवा आवी अछइ ॥६७॥

आणु नही करावु अम्हे । पाछा घरे पधारु तुम्हे ।
लोक कहइ आवी छइ माइ । ए किम ठाली पाछी जाइ ? ॥६८॥

गंगा-मात पीहरि संचरइ । केता दिवस तिहां निस्तरइ ।
तब कायथ नामि कल्याण । आणु करवा करइ प्रयाण ॥६९॥

वाटिइ वहितां हुई राति । तेह तणी हवि सुणयो वात ।
नगर अवंती उत्तम ठाण । चुसठि योगिणीनु अहिठाण ॥७०॥

बावन सइं भइरव कलकलइ । ठामि ठामि तिहां दीवा बलइ ।
सिद्ध-वडइ आविउ एकलु । रोती नारि शबद साँभलिउ ॥७१॥

[वस्तु]

तेणि अवस तेणि अवसरि गंधमसारिण ।
नारीरुदन ते हिं सांभिलिउ । करइ आक्रंद बहू परि ।
ते निसुणइ ऊभउ रहिउ । सुणी साद चींतवइ चित्त धरि ।
साहस धरी तिहां आवीउ । रुदन करइ जिहां नारि ।
इणि वेलां रोइ इहां । ते मझ कहइ विचार ॥७२॥

[दूहा]

बलतुं नारी इम भणइ । "सांभलि साहसधीर ।
कहुं वीतक जे माहरुं । तुं सांभलि धरधीर ॥७३॥

एणइ नगरि एक नर वसइ । तेह तणी हुं नारि ।
पतिंवरता पालुं सदा । आण बहू निरधार ॥७४॥

ते विण भोजन नवि करुं । न पीउं वारि लगार ।
त्रणि काल पग पूज करि । नाम जपुं भरतार ॥७५॥

चोरी-आल ज तेहनइ । सूली दीधु कंत ।
दिवस त्रणि इणिपरि हूआ । किम्ह न जाइ जंत ॥७६॥

अन्नपान मिं आणीउं । जाणिउ दिउं आहार ।
मुखि एहनइ पुहुचउ नही । किम करि दिउं आहार ? ॥७७॥

तिणि कारणि हुं टलवलुं । साँभलि साहस धीर" ।
वचन सुणी नारीतणाँ । दया ऊपनी वीर ॥७८॥

कंधि चडावी आपणइ । कहइ करि निश्चल चित्त ।
"भगति करे भरतारनी । किसी म राखसि भ्रंति" ॥७९॥

पुरुष कंधि नारी तव चडी। काती लेई मडां-नइ अडी।
माँस भखई तइ हउहउ हसइ। पुरुष तणइ मनि कुतिग वसइ ॥८०॥

आमिष खंड विछूटउ तिसिइ। पुरुष पुंठि त्ते लागु इसिइं।
तव ते ऊंचु जोइ जाम। आधुं मडुं भखो रहो ताम ॥८१॥

नारी तिहा अचोडी करी। नाह तउ जाइ ऊजेणी पुरी।
तव केडिइ ते नारी धसइ। नगर-पोलि देवराणी तिसइ ॥८२॥

पोलि तणी जे बारी अछइ। ते उघाडी दीठी पछइ।
एक पग तव भीतरि दीउ। बीजउ वाहिरि तिणि स्त्रीइ लीउ ॥८३॥

पग-विहूणउ आडु पडइ। तिणि वेदनि ते अति आरडइ।
पुन्य माटि लिउं प्रगटिउं इसिइं। खेडीदेवति आवी तिसिइं ॥८४॥

"अहो पुरुष, तुझ कुण दुख दहइ ?। संसतु धाई, मझनइ कहइ।
किणी परि खाधउ तुझ पाय। किणि परि नगरि पुहुतु आय ॥८५॥

कथा पाछिली सघली कहइ। देवि कहइ तु उभु रहइ"।
ततखिणि देवति वाचा हुई। नवपल्लव पग आविउ सही ॥८६॥

हरखिउ हीइ विमासइ इसिउं। नारी प्रणुं पुन्य इहाँ बसिउ।
करम- उदय आविउं माहरूं। नारी पुन्यि थयुं वर हुउ ॥८७॥

इम चींतवतु घर-अंगणि गयु। जाई बारणइ कान ज दीयु।
ऊभउ कुतिग जोइ जिसिं। संभलजो तिहां वात ज तिसिइ ॥८८॥

घरमांहि दीवु परजलइ। आमिष खंड करी करी गलइ।
बेटा प्रतिइ कहइ तव मात। ए आमिषनी कहइ मझ वात ॥८९॥

बरस साठि मझ हूआ इहां। अेहवु स्वाद न दीठउ किहीं।
साँभलि माता वात एह तणी। ए तु जांघ जमाई तणी ॥९०॥

बेटा बेटी तेहथी जोइ । जमाई वाहलु अति होइ ।
तिणि कारणि ए मीठउ घणु । कह बेटी माता तुम्हे सुणइ ॥१९१॥

बेटी नइ तव माता कहइ । "कुण थानकि ते वेदन सहइ ? ।
आपण बेहू जइई तिहां । ऊनाडी नइ आणीइ इहां ॥१९२॥

जउ प्रभात किमिइ थाइसि । आपणा हाथ थिकी जाइसि" ।
इस्यां वचन श्रवणे सांभली । तव तिहां-थउ नाहठउ खलभली ॥१९३॥

थयु प्रभात तइ घरि आवोउ । सर्व रिद्धि ते वांभण दीउ ।
मन वइराग धरी चालीउ । फिरतु फिरतु इहां आवीउ ॥१९४॥

वइरागिउ दिन रयणी रहइ । तिणि कारणि हरिना गुण ग्रहइ ।
माया मोह सवि छांडी कर्म । हवि ए चालइ तपसी धर्म ॥१९५॥

तेह-भणी साथिइ लिउ एह । जिम सुख हुइ आपणइ देह ।
तु तिहाँथी त्रणइ चालीआं । मथुरांइं अनुक्रमि आवीआं ॥१९६॥

यमुना नदी वहइ असराल । धरम तणी जिहां वरतइ चाल ।
नारीय भणइ "सामी सुणु । आदितवार अछइ अति भलु ॥१९७॥

ए तीरथ छइ निरमल नीर । पापरहित कीजइ शरीर ।
राय तणु चित निरमल जाण । पहिरी पोत नइ करइ सनान ॥१९८॥

राणीइं ठेलो नाखिउ तिसि । पूरमाँहि तव चालिउ तिसिइं ।
रायनइ छइ तरवा अभ्यास । चालिउ जाइ न सेहलइ साह्रास ॥१९९

वहितु गयु घणी भुंइ राइ । नगर तणाइ परसरि तव जाइ ।
चिंतइ नारी जोज्यो काज । जेह-नइ अरथि चूकु राज ॥२००॥

दुख धरतु नगरी-माँहि गयु । राजसभा जई ऊभु रहिउ ।
तिहाँ ते आदर पामिउ घणु । हवि राणीनी वात ज सुणु ॥२०१॥

पाप तणउ फल तेहनइ भयु । रूप हतुं ते कोढी थयु ।
पीप तणा ते रेला वहइ । तेहनी गंधि कोई नवि सहइ ॥२०२॥

कर उमाहि बईसारइ धरी। रूई तणां पुहुल ते करी।
देस देसाउर इणिपरि फिरइ। करंड लेई नइ माथइ धरई ॥३॥

गाइ गीत राग आलवई। तेणइ जननां मन रंजवई।
लोक सहू इम बोलइ वाणि। सती नही ए समवडि जाणि ॥४॥

देश विदेसि फिरतां रहइ। दान मान ते गीतथी लहइ।
इम करतां तिणि नयरि जाइ। आगिल-थी आवी जिहां राइ ॥५॥

राजसभामांहि लेई जाइ। सरलइ सादि आलवी गाइ।
तेणइ राजा-मन रंजीउ। घणउ गरथ अरथ तस दीउ ॥६॥

स्त्री-नइ राजा पूछइ वात। कहउ तुम्ह हुउ किम संघात ?।
रूप-तणु तुज नही छेह। एहवी किम तुझ स्यामी-देह ?" ॥७॥

"सात वरसनी हुई जाम। माबापि दीधी एहनइ ताम।
रूपि मदन समाणउ जोइ। करम-वसि हवि कुष्ठी होय ! ॥८॥

ओषध तणउ न लाभइ छेह। एहनु तुहिइ न वलिउ देह।
तीरथ-करवा-नइ नीसरी। भली एह राजनि चिंति धरी" ॥९॥

वलतु अजितसेन ऊचरइ। "कहु बात जउ सहू चित धरइ।
एहना सील-तणउ नही पार। यमुना-मांहि नाखिउ भरतार ॥१०॥

वात कही सघली आपणी। तव लज्जा गई नारी तणी।
जोउ सतीतणु सनेह। अरध आयु जिणइ आपिउ देह ॥११॥

जेहनइ मनि अस्त्री वीसास। जाते दीहे सही निरास।
अस्त्री कूडकपट-को भली। अस्त्री नुहइ कहिनइ भली" ॥१२॥

वात सुणंता तव लडथडी। मूरछा आवी धरती पडी।
नारी प्राण गया तिहां सही। सुणी सभा सहु अचिरज हुई ॥१३॥

ते नर मूरख हुइ समान। अस्त्री कारणि तजइ पराण।
सार्वलिगि ए वातज कही। राजा सरिखु मूरख सही ॥१४॥

सदयवच्छ तव बोलइ हसी । "एह वात तुम्हे कीधी किसी ? ।
सुपुरिस वाचा-लोप नवि करइ । सकल रिद्धि जन तेह परवरइ॥१५॥

सावलिंगि ! निसुणउ तुम्हे वाणि । तुम्ह कारणी आव्या इणि ठाणि ।
तात बचनि घर छांडी दूरि । तिम आविउ जिम-जल निधि पूरि ॥१६॥

तुम्हविण किम जईइ तिणि ठाणि? । लोक हासारथ अनइ बहू हाणि ।
मान तिजी जीवई नरनारि । निफल जनम तह संसारि" ! ॥१७॥

सावलिंगि कहइ, "मांसी सुणु । ए उपाय सघलु अम्ह तणउ ।
इणि वाति अम्ह आवइ लाज । पिता-तणउ सवि विणसइ काज १८

वर वरीउ किम थाई दूरि ? । ए दुख मोटु जलनइ पूरि ।
इहाँ साप इहाँ मृगराज । ते परि सकल थई अम्ह आज ॥१९॥

पिता-वचन किम परहु करु ? । किणीपरि हत्या आदरु ? ।
दया मया करी दीधी वाच । सदयवच्छ प्रति बोली साच ॥२०॥

लगन तणइ दिनि जायो तिहाँ । बंकदूआर अछइ अम्ह जिहाँ ।
सांझ समइ तुम्ह थई असवार । ऊभा जइ रहियो तिणि बारि ॥२१॥

तिणि वारि हुं आविसु सही । एह वातनु सांसु नही" ।
वाचा देई कुंअरि घरि जाइ । सदयवच्छ मनि हरख न माइ ॥२२॥

सावलिंगि-फूलहकाँ फिरइ । सदयवच्छ जोवा संचरइ ।
नयणि नयण मेलावु होइ । नेह-मरम नवि जाणइ कोइ ॥२३॥

लगन-तणइ दिनि आवी जान । तेहनइ दीजइ झाझाँ माँन ।
घणइ महोच्छवि कीउ प्रवेस । ऊतारा आपइ सविसेस ॥२४॥

जिमण तणी सजाई करइ । ततक्षिण जिमवा तेडां फिरइ ।
सवि राउत कीजइ एक ठामि । रहिउ वीसरिउ सो धावइ ताम २५

(दूहा)

सदयवच्छ तिणि अवसरि । अश्वि थयु असवार ।
मंत्री-सुत साथि करी । ऊभउ बंक दूआरि ॥२६॥

प्रच्छन्नगति जाई रह्या । कोई न जाणइ मर्म ।
अन्तराय फल भोगव्याँ । विना न छूटइ कर्म ॥२७॥

(चउपई)

तिणि थानकि जई ऊभा रहइ । तेहनु भरम कोइ नवि लहइ ।
भोजन-सार करइ नरराय । कोइ सुभट रखे वीसरी जाइ ॥२८॥

आदर देई आणउ इणि ठामि । अम्ह-सरसा आरोगइ ताम ।
गुंडु नापित तिहाँ फरइ । कुंवर देखि वहू आदर करइ ॥२९॥

सीघ्र थई पुहुचु धरि धीर । भोजन करवा तेडइ वीर ।
तुम्ह तणी सहू जोइ वाट । जु आवउ तु बइसइ ठाठ ॥३०॥

ऊतर करी बुलाविउ तेह । किम आवउ अम्हे नरपति-गेहि ? ।
अम्ह असबाब न राखइ कोइ । नापित रिदय विचारी जोइ ॥३१॥

नरपति-सिउं जई नापित कहइ । "दोइ सुभट एक ठामि रहइ ।
माहरा तेडया नावइ राय । तु नरपति आवइ तिणि ठाइ" ॥३२॥

नरवर वचन न लोपिउ जाइ । सदयवच्छ आविउ तिणि ठाइ ।
नापित हाथि अस्त्र तिणि दीया । अवर ज वस्तु समोपी गया ॥३३॥

नापित जाति हुइ सत-हीण । सकल सनाह पहिरिउ तंखीण ।
एक अश्व ऊपरि जई चढइ । वीजउ दोरी हाथिइ धरइ ॥३४॥

तिणि अवसरि आथमीउ सूर । जोवा मिलीउं माणसपूर ।
लगन तणी सामग्री करइ । सावलिंगि वाचा चिति धरइ ॥३५॥

लही अवसर चाली तिवार । आवी ऊभी बंक दूआरि ।
नापित-तणउ न जाणइ मरम । गुंडु तिहाँ न भाजइ भरम ॥३६॥

सार्वलिगि थई असवार । लेई चाली नगर-दूआरि ।
रयणि माँहि छाँडिउ निज देस । अवर देसि कीधउ परवेस ॥३७॥

रन्नादे-पति ऊगिउ जाम । तव कुमरीइ निरखिउं ताम ।
"फटि पापी ! कीधु कुणकाज ? । मनना गया मनोरथ भाजि ॥३८॥

अश्व तणउ अधिपति किहां रहिउ । कइ मारिउ कइ जीवतु धरिउ ।
गुं डु मरम कहइ तिणिवार ? "तें जीवंतु छइ गुणधार" ॥३९॥

सकल मरम तव नापित कहइ । सार्वलिगि हीअडइ संग्रहइ '
तेहनी हवइ किमी तुम्ह आस ? । अम्ह-सरिसिउं तुम्हे करु विलास ॥४०

फटि पापा ! निरगुण चंडाल । ताहरा जीवनु आविउ काल ।
अम्ह-सरिसु बंछइ संयोग । हुइ हाँणि तुझ आवइ रोग" ॥४१॥

वड-हेठली लीधु विसराम । नापित हूउ निद्रा-वसि ताम ।
छेदिउं नाक लेई नइ छुरी । इम सीखामण दीधी खरी ॥४२॥

कूकू करतु नासी गउ । पुरुष-बेस तिणि नारी लीयु ।
एक अश्व कुंअरी असवार । बीजउ हाथि कीउ तिणि वारि ॥४३॥

तिहां थिकी आघी संचरइ । नगर छोडि उद्यानि फिरइ ।
झूरइ कामिनि मन-ह-मझारि । सार्वलिगि दुख नावइ पार ॥४४॥

मनमांहि चिंतइ "किसी परि करुं ? । कुण थानकि जाई अणुसरुं ?"
सार्वलिगि तव करइ विलाप । "केहा भवनुं लागुं पाप ? ॥४५॥

बेहू पक्षथी दूरिइ टली । मन-आशा एकइ नवि फली ।
गयु कुमार, गयु भरतार । सदयवच्छ विण जीविउं धार ॥४६॥

दुख धरती आघी संचरइ । वडहेंठलि जई वासु रहइ ।
वृक्ष-डालि बांधिया बि तुरी । वड-हेठलि जागइ सुन्दरी ॥४७॥

गरुड पंख तिहां वासि रहइ । तेहनइ च्यारि पुत्र गहगहइ ।
चुणि काजि ते जूजूआ जाइ । राति आवी प्रणमइ पाइ ॥४८।

पूछइ पिताः "तुम्ह लागी वार । ते मुं आगलि कहु विचार" ।
आप-आपणा दाखइ मरम । सुणी बात अम्ह भांजउ भरम ॥४९॥

"दक्खण दिसि पाटण पहिठाण । सालिवाहन राजा अहिठाण ।
तस घरणि छइ लीलावती । सार्वलिंगि पुत्री गुणवती ॥५०॥

रतनपुरीनु राजा चलु । रतनसेखर नामि गुणनिलु ।
तेह-सरिसु मिलीउ वीवाह । आवी जान हूइ ऊछाह ॥५१॥

कुंअरीइ वाचा अवस-सिउं करी । लगन-वेलां बाहिरि संचरी ।
गुंडुं नापीतइ वसि पडी । राति समइ चालां चडवडी ॥५२॥

थयु प्रभात नइ सूर ऊगीयु । कुंअर-ठामि नावी निरखीउ ! ।
नावी पूछिउ वडइ विछेद । सदयवच्छ-नु कहिउ सवि भेद ॥५३॥

जेतलइ नावी नीद्र-वसि थयु । नाक कान तव वाढां लीउ ।
तिहां-थकी तव नासी करीं । नावी आविउ पाछल फिरी ॥५४॥

चिंतइ कुमर विदेसिं फिरुं । सार्वलिंगिनी शुद्धि ज करुं ।
जउ जोतां मझनइ नवि मिलइ । तु करवत मेहलाबुंगलइ ॥५५॥

मदनसिंह नइ कहिइ वात । घेरे तुम्हारइ पुहुचउ रात ।
ए देही तुम्ह-सरसी अछइ । तुम्ह-विण सिउं करवी छइ पछइ ? ॥५६॥

इसिउं कहीनइ ते नीसर्या । कासी तीरथ भणी संचर्या" ।
बीजा तणी वात सांभलु । रतनसेखर जे आविउ भलउ ॥५७॥

लगन तणउ अवसर वही गयु । मातु पिता-हीअडइ दुख थयु ।
सकल लोक वाणी विस्तरी । सार्वलिंगि कुंणइ अपहरी ? ॥५८॥

जान तणउं मेहली संघात । अवधूत वेसि चलि परभाति ।
करी प्रतन्या चालिउ तेह । निश्चि मरूं जउ न मिलइ एह" ॥५९॥

एहवी वात कही जेतलइ । बीजउ पंखी बोलिउ तेतलइ ।
"मालव देसि अवंती नामि । पहुवच्छ राज करइ तिणि ठामि ॥६०॥

सुमंगला पट्टराणी सुणउ। सदयवच्छ कुंअर तस तणउ।
बार वरसनु कुंअर थयु। तव ते नारी जोवा गयु ॥६१॥

जोतां कोइ चिति नवि वसइ। राइ कुअर बोलाविउ तिसि।
"जो को नारी चित नवि धरइ। तु निश्चि इंद्राणी वरइ ॥६२॥

सावलिंग कइ परणइ सही"। इसी बाल मुखि नरवइ कही।
पिता-वचन मन-माहिं राखीउ। तव कुंअर अदृष्टउ थयु ॥६३॥

तु तिहां सहू मनि दुख धरइ। घरि घरि शोक निरंतर करइ।
नगर-मांहि सवि उच्छव रह्या। ते जोई अम्हे आव्या अरहा" ॥६४॥

एवडी वात कही जेतलइ। त्रीजउ आवी कहइ तेतलइ।
"पूरव दिसि छइ उत्तम ठाम। चंद्रावती नगरीनुं नाम ॥६५॥

जितशत्रु राय राज तिहाँ करइ। सैन्य सहित आहेडु करइ।
बार वरसना बाली वेस। बत्रीस लक्षण अवधू-वेसि ॥६६॥

रायतणी ते नर्जरि पडथा। कंद्रप-रूप अभिनवा घडथा।
हठ करी राजा पूछइ तिहाँ। "अवधू-वेसिइ जाउ किहाँ ?" ॥६७॥

सदयवच्छ बलतु इम कहइ। "सावलिंगि अम्ह हीअडइ दहइ।
मझ-सरसी वाचा तिणि दीध। ते अस्त्री नइ कुणइ लीध ॥६८॥

जउ ने कामिनि हुं नवि लहु। तु शिर ऊपरि करवत वहुं"।
"अरे कुंअर तुं खरु अयाण। अस्त्री कारणि तिजइ पराण ! ॥६९॥

पुष्फावती कुंअरी अम्हतणी। ते कन्या करु तुम्ह तणी।
तुम्ह-नइ सुंपुं सघलु राज। घरे अम्हारइ आवु आज" ॥७०॥

सदयवच्छ वलतु इम भणइ। "राजतणी खप नहीं अम्ह तणइ।
सावलिंग ते वन-मांहि फिरइ। माय ताय तइ सुख परहरइ ॥७१॥

सोइ कारणि दुख देखइ सही। सुख भोगवुं हुँ किम रही ?।
समुद्र मर्जादा लोपइ किमइ। तुहि सत्य न चूकुं अम्हइ !" ॥७२॥

इसिउं कही कुअर चालिउ । [कहइ पंखी] हुँ इहाँ आविउ ।"
कामिनि वात सवे साँभली । चुथु पंखो बोलइ बली ॥७३॥

"कुंकरा देश शंखपुर गामि । नरसिंग राज करइ तिरिए ठामि ।
मतिसागर मंत्री तस तरगु । वात तेहनी तुम्हे सुरगु ।।७४॥

आँखि नवि देखइ परधान । कुष्ठी-राजा रूप निधान ।
अहनिसि अरति छइ अति घरणी । मंत्रीसर नइ राजा तरणी ॥७५॥

जे डाहा वेदन-ना जारण । ति सवि तेडाव्या तिरिए ठारिए ।
मंत्र तंत्र औषध उपचार । परिए ते कहिथी नही उपगार ॥७६॥

तव नरपति दीधउ आदेस । ढंढेरु फेरु कहु वसेस ।
'नृप मंत्रीनुं जे दुख हरइ । अरधराज्य नइ कन्या वरइ' ॥७७॥

वली मंत्रीस्वर कन्या देय । वित सारु उपगार करेय ।
ते निसुरगी हुँ आविउ इहाँ । राजा मंत्री दुखी तिहाँ ॥७८॥

आप तात जाराउ उपचार । अम्ह आगलि तुम्हे कुहुं विचार" ।
पंखराय वलतुं इम भरगइ । [सार्वलिंग चित देई सुराइ] ॥७९॥

"अम्ह विष्टानु संग्रह थाइ । जे लेई तिरिए नयरिं जाइ ।
सीतोदक-सिउं खरडइ देह । जाइ कुष्टं नही संदेह ॥८०॥

उष्णोदक-सिउं अंजन करइ । ततखिरग दृष्टि चिहु दिसि फिरइ ।
दीहिं तारा देखइ सही । एह वातनुं संसय नही" ॥८१॥

त्रीजइ पुहुनु पूछइ वात । अम्ह आगइ तुम्हे भाखु तात ।
सदयवच्छ सामलि तु कहु । मलवा वात सवे तुम्हे लहु" ॥८२॥

पंखराय वलतुं इम कहइ । सार्वलिगि सवे संग्रहइ ।
शंखपुरी मिलसि सहू कोइ । सूदु सामलिनु वर जाइ ॥८३॥

ए सविनु मिलिस्यइ संयोग । मानव भव सुर लहसि भोग ।
तिरिए अवसरि ऊगिउ ते सूर । नाठाँ तिमिर जिम जलहल पूर ॥८४॥

लेई विष्टा शंखपुरी जाइ । सीह-दूआरि पुहुती थाइ ।
तिणि अवसरि ढंढेरु फिरइ । सार्वलिगि जाई अणुसरइ ॥८५॥

छबी ढंढेरु चाली नारि। जण लेई आव्या राजदूआरि ।
नरपति-नइ जई करइ प्रणाम । तव आदर दीइ वहू ताम ॥८६॥

"वैद्यराय! किणि थानकि रहु ? । आज अम्हे धनवंतरि लहिउ ।
तुम्हे आवि अम्ह-सरीआ काज । पूरव पुन्यि प्रगटया आज ॥८७॥

एह व्याधि जिणि थाइ दूरि । ते उपचार करु जे सूर ।
पछइ कहण न पावइ कोइ । तेह भणी सहू निसुणउ लोइ ॥८८॥

सकल लोक कुमरी-प्रति कहइ । एह व्याधि तुम्हथी नही रहइ ।
जे जाणउ ते औषध करु । व्याधि एह तुम्हे दूरि हरु" ॥८९॥

आण्यउ मनि तब हरख अपार । जे जाणउ ते करु उपचार"।
नरपति अंगि लेप तव करइ। खिणि खिणि रायतणउं दुख हरइ ।९०।

तिणि औषधि तव गई व्याधि । राजा-सयरि हूई समाधि ।
मंत्रीसर कर जोडी कहइ । "अति धणउ नयणाँ अम्हनइ दहइ ॥९१॥

मि उपचार करथा अतिघणा । निःफल हूआ सविकहइ-तणा ।
पूरव पुन्यि मिल्या तुम्हे आज। निश्चिइ सरसि अम्हारूं काज" ॥९२

"तु उष्णोदक सिउं अंजन करइ । तिमिर नयण तणाँ दुख हरइ" ।
दिवस सात-मइं नाठा व्याधि । नरपति मंत्री हुई समाधि ॥९३॥

वैद्यराय प्रति आदर करइ । सार वस्तु ते आगलि धरइ ।
धनवंतरी परतखि आवीउ । नृप मंत्री दुख दूरि कीउ ॥९४॥

विनय कर नरपति इम भणइ । "पुत्री एक अछइ अम्ह-तणइ ।
वनमाला नामिं गुणवंत । सील शिरोमणि सहिजि संत ॥९५॥

कृपा करु अम्ह ऊपरि आज । ते कुंअरी परणउ गुणराज ।
तु अम्ह वाचा निश्चि पलइ । दुख-दालिद्र सवि दूरि टलइ ॥९६॥

मंत्रीसर निज कन्या देय । मदन-मंजरी नामि जेह ।
मया करी अम्ह मोटा करु । अम्ह कुंअरी तुम्हे निश्चि वरु ।।९७।।

उच्छव लगन लीउ तिणि वारि । नगरी वरतिउ जय-जय-कार ।
वैद्यराय दोइ कुमरी वरइ । मुखि नरपति मंत्री उच्चरइ ।।९८।।

गाई कामिनि मंगल च्यारि । नृपमंत्री मनि हरख अपार ।
अरधराज आपइ नरपाल । मंत्रीपद दोई सुविशाल ।।९९।।

हय गय रथ पायक परिवार । रिद्धि तणउ नवि लहीइ पार ।
सोवन थाल कचोलां जेह । पलिंग तलाई आपइ तेह ।।३००।।

एक मंदिर दीइ नरराय । दंपति कारणि रहिवा ठाय ।
वर परणी चालिउ निज गेहि । निज मंदिरि जई पुहुता तेह ।।३०१।।

अष्ट भोग कुमरी परिहरइ । तजी सेजि संथारु करइ ।
तेहनु मरम न जाणइ कोइ । इणि परि दिन ते नीगमइ सोइ ।।२।।

तव कामिनि मनि विसमय थाय । अहनिस शोक वहइ ए कांइ ? ।
सकल भोग ते दूरि करइ । तपसीनी परि ते रहइ ।।३।।

एक वार ते पूछइ मरम । सावलिंगि ते भाजइ भरम ।
"भोग तणउ मि कीधु नीम । मित्र न पामुं तां मझ सीम ।।४।।

दाण-मांडवी अछइ जिहां । निज सेवक मोकलीआ तिहां ।
कुमरी सीख दीइ अति घणी । सदयवच्छ-मेलापक तणी ।।५।।

जे जडीआ योगी अवधूत । तपसी लिंगायती नइ भूत ।
रूपे परावृत फेरी फरइ । एहवा वाटिइ जे संचरइ ।।६।।

विण समझि मेहलउ कोइ । एहवइ वेसि जे जे होइ ।
छलबल करी करी आणेयो इहां । रखे कोइ चाली जाइ किहां ।।७।।

केता दिवस इणीपरि जाइ । वरिउ कंत आविउ तिणि ठाइ ।
अवधू-रूपि दीठउ तेह । विरहि करीनइ सोसिउ देह ।।८।।

दाण-मांडवी आगलि जाइ। अवधू-वेसि आणिउ तिणि ठाइ।
नव-यौवन देखी सुकमाल। पूछइ, "किम मेहलिउ जंजाल ?" ॥९॥

निज मन तणी वात ते कहइ। "सार्वलिंगि कुमरी चिति दहइ।
तिणि विरहि लीधु ए वेस। हींडु तेणइ देश परदेस ॥१०॥

लहीअ मरम तव नेपुं करइ। घरभीतरि ते लेई धरइ।
सुखि समाधि रहइ तिणि ठाइ। जे जोईइ ते देई पठाइ ॥११॥

सदयवच्छ आघु नीसरिउ। दाण-मांडवीआ तेणे धरिउ।
"कहु योगी, चाल्या कुण देसि ?। किम तुम्हे छांडउ सयल
कलेस ?" ॥१२॥

सदयवच्छ बलतु इम भणइ। "कामिनी-विरहु छइ अम्ह तणइ"।
संखेपि करी ऊतर देय। जाणी मरम चलाविउ तेय ॥१३॥

सार्वलिंगि आगलि लेई जाइ। देखी कंत हीइ चमकाय।
सार्वलिंगि पूछइ तव भेद। "अवधू ! ऊतर दिउ विछेद ॥१४॥

सालिवाहन नृप-कुंवरी जेह। सार्वलिंगि नामि छइ तेह।
मालणि मंदिरि वाचा करी। ते सुंदरि कहनइ घरि हरी ! ॥१५॥

तिणि कारणि अम्हे लीधु योग। छांडिया विषय तणा सवि भोग।
तिणि कारणि अम्हे लीधु नीम। न मिलइ कामिनि तां छइ सीम" ॥१६

सार्वलिंगि कुमरी इम कहइ। "नारी काजि कवण दुख सहइ ?।
सवि मूरख-मांहि तुझ रेह। विण-हरणि दुख दाखइ देह" ॥१७॥

सदयवच्छ तव बोलइ वाणि। "ए संसार असारि ज जाणि।
वाचा सार एणइ संसारि। ते वाचा दीधी तेणीइं नारि ॥१८॥

सार्वलिंगि जउ जीवइ नारि। वाचा-लोप नही करइ संसारि।
ति विण अवर नारि नवि वरूं। जइ गंगा करवत अणुसरू ॥१९॥

जीभ खंडि करि तजुं पराण। इणि वाति सांसु म म जाणि।
'जनमि-जनमि मझ नारि तेह'। इम करवत वाहिसु देह" ॥२०॥

सुणी वयण तव सामलि हसी । कनक-तणी परि जोयु कसी ।
कंत-तणउ नवि लाधु छेह । मझ कारणि दुख दाखइ देह ॥२१॥

"अरे कुंअर ! तुं म करि अकाज । सार्वलिंगि तुझ मेलिसु आज ।"
तिणि वयणि हीअडइ हरखीयु । ऊतारा थानक तव दीयु ॥२२॥

प्रथम कंत बोलावइ तेह । 'तजो शोक तुम्हे जाउ गेहि ।
सार्वलिंगि तुम्हनि नही मिलइ' । सुणी वयण हीअडइ दव बलइ॥२३॥

तेहथी रूपि अधिक आगली । राजकुमरि परणावुं बली ।
गुणमाला-नरपति कुंअरी । परणावी मोकलीउ पुरी ॥२४॥

हरख वदन तव नयरीइ जाइं । मात पिता नइं लागु पाय ।
अति आनंद हूउ तस घरी । सयल कुटुंबनइ सारी पुरी ॥२५॥

मदनमंजरी मंत्रि-कुंआरि । मदनसिंह परणाविउ नारि ।
तिहां सहूनइ हरख ज करिउ । सावलिंगि सदयवच्छ वरिउ ॥२६॥

सदयवच्छ नइ सामलि कहइ । "इणि थानकि रहिवुं नवि लहइ ।
जउ नरपति ए लहसि मरम । सकल वातनु भागइ भरम" ॥२७॥

सकल सैन्य-सिउं चाल्यो राय । सालिवाहन नृप-केरइ ठाइ ।
मात पिता मनि दुख अति घणु । करतां होसि मुं बेटी-तणुं ॥२८॥

नारि-वचनि चालिउ वरवीर । सदयवच्छ मनि साहस धीर ।
नयरि पासि जब पुहुता जाण । वागां जांगी ढोल नीसाण ॥२९॥

निसुणिउं दूत-वचनि तिहां राय । तव बेटी-नइ साहमुं जाइ ।
पहुवच्छराय-तणउ सुत जेह । सावलिंगि वर परणिउ तेह" ॥३०॥

इसिउं सुणी मनि हरख न माइ । सार्वलिंगि तइ मिलवा जाइ ।
सालिवाहन नृप पालु पलइ । सदयवच्छ साहमु आवी मिलइ ॥३१॥

सार्वलिंगि तव प्रणमइ पाय । मात पिता मनि हरख न माइ ।
"कहु कुंअरी! तुम्ह-तणउं चरित्र । तु अम्ह काया हुइ पवित्र ॥३२॥

कीधां करम न छूटइ कोइ । राजा ग्दिय विचारी जोइ ।
अम्ह चरित्र नवि लाभइ पार । कुमरीइ कहिउ सवि सुणीउ
विचार ॥३३॥

लगन जोई कीजइ वीवाह । तु हुई हरख, नइ भाजइ दाह ।
तु हवि अम्ह मनोरथ फलइ । पुत्री-विरह दुख दूरिइ टलइ" ॥३४॥

सालिवाहन नृप मांडिउ जंग । नरपति धरिउ छव बहूरंग ।
दान मांन दीजइ अतिघणां । हुइ उछव वीवाहा तणा ॥३५॥

वर घोडइ हुउ असवार । गायइ कामिनि मंगल-च्यारि ।
लूण ऊतारइ वर कामिनी । वद्धावइ वारु भामिनी ॥३६॥

नर नारी तिहां बोलइ घणां । जोयो फल ए पुन्यह-तणां ।
सदयवच्छ नइ सामलि नारि । सरिखु योग मिलिउ संसारि ॥३७

वर-राजा तोरणि आविउ । इंद्र सरीखु सोहावीउ ।
वर पूंखो आणिउ मांह्यरइ । सिंहासनि जई आसन करइ ॥३८॥

विप्र समय वरतावइ जामि । कर-मेलापक हूउ ताम ।
सोवन-चउरो करइ नरेस । तिणि थानाक कीधउ परवेस ॥३९॥

वर-कामिनि तिहां फेरा फरइ । ब्राह्मण बईठा वेद ऊचरइ ।
करे भाट तिहा जय-जय-कार । विनइ करी दिइ दान अपार ॥४०॥

कर-मेहलामणि नृप दिइ दान । हय गय रथ परघु बहूमान ।
पाय लागी नृप दि आसीस । "दंपती जीवयो कोडि वरीस !" ॥४१॥

वर लाडी परणी घरि जाइ । हीअडइ अति आनंद न माइ ।
सदयवच्छ सामलि वर नारि । विलसइ सुरक न लाभइ पार ॥४२॥

सालिवाहन लीलावई तणी । मननी इच्छा पुहुती घणी ।
सदयवच्छ सामलि-सिउं रहइ । राति दिवस अतर नवि लहइ ॥४३॥

केता-दिवस इणि परि जाय । सदयवच्छ चितइ मन-मांहि ।
मात पिता दुख होसि घणउ । करतां होसि अंदोह अम्ह-तणु ॥४४॥

सार्वलिंगि नइ कहइ वात । "दुख धरतु होसि मझ तात ।
विरहि करी निज छंडइ प्राण । तु हवि जईइ पुर पहिठाणि ॥४५॥

इहां रहिवा-नुं युगतुं नही । सुदा रहीइ विचारु सही ।
सासरडइ रहितां हुइ लाज । पिता-पक्षनुं विणसइ काज ॥४६॥

[दूहा]

स्त्री पीहरि नर सासरइ । संयमीआं सहि वास ।
मांन-रहित निश्चिइ हुइ । जु मांडइ थिर वास ॥४७॥

जं जं घोवत मिठडुं । सज्जन तांह विदेश ।
अंब घरंगणि मुहुरीउ । करूअत्तण पामेसि ॥४८॥

[चउपई]

इम चिंती चालिउ तिणि बारि । ससरानइ जई करिउ जुहार ।
"कृपा करु, अम्ह दिउ आदेस । नयरि ऊजेणी करुं प्रवेस ॥४९॥

पिता अम्हारु बहू दुख धरइ । अहनिसि माता शोक ज करइ ।
सवि सुख छांडयां तेणे दूरि । ते दुख-सागरि पडीआं भूरि ॥५०॥

तुम्ह प्रसादि अम्ह पुहुती आस । परणिउ कुमरी लीलविलास ।
आज अम्हारी वाचा पली । मन-वंछित कामिनि अम्ह मिली" ॥५१॥

वलतु राजा एहवु कहइ । "तु रूडुं जउ इहां रहइ ।
पुन्य-प्रभावि अम्हनइ मिलिउ । कलप-वृक्ष अम्ह अंगणि फलिउ ॥५२॥

इम कांइ तुम्हे दावु छेह ? । खिण एक मांहि छांडु नेह" ।
कर जोडी नइ करइ प्रणाम । देई आलिंगन चालिउ ताम ॥५३॥

सार्वलिंगि मोकलावा जाइ । माता पिता-ना प्रणमइ पाइ ।
सीख लेई-नइ चालो साथि । सदयवच्छ स्वामी नरनाथ ॥५४॥

सालिवाहन वुलावा भणी । आवि तेतलइ सीम आपणी ।
करी जुहार नइ पाछउ वलइ । पुत्री-विरहि मीन जिम मिलइ ॥५५॥

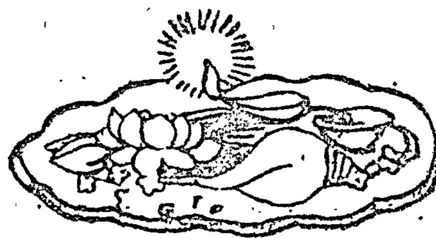
नयरि ऊजेणी पुहुतु वीर। सदयवच्छ नृप साहस धीर।
मात-पिता-ना प्रणमी पाय। आलिगन दिइ आघु थाइ ॥५६॥

सावलिंगि सासू-पाए पडइ। आलिगन देती अडवडइ।
सविकहिंनि मनि हूउ आणंद। जिम चकोर खग देखी चंद ॥५७॥

निज कुटंब-मेलापक हूयु। ए अधिकार हूउ छइ जूयु।
सुमंगला मनि पुहुती आस। सुख भोगवइ तिहां लील विलास ॥५८॥

मनगमता पाम्या संयोग। पांच प्रकारिइं विलसइ भोग।
ए पहिलु हूउ अधिकार। कवि कहि जोई चरित्र आधार ॥३५॥

॥ इति श्री सदयवच्छ सावलिगि पाणिग्रहण चुपई ॥
॥ समाप्तमिति भद्रम् ॥



परिशिष्ट २

मुनि केशव (कीर्तिवर्धन) रचित

सदयवच्छ सावलिंगा चउपई

[दूहा]

स्वस्ति श्री सोहग सुजस, वंछित लील विलास ।
दायक जिण-नायक नमुं, पूरण आस उल्हास ॥१॥

[1]सरस वचन द्यो सरसती, सकल कला दातार ।
सुप्रसन्न प्रणमुं सदा, वरदाई सुविचार ॥२॥

जे क्युं जगि दीसइ अछइ, आसति मति गुण ग्यान ।
सो प्रसाद सदगुरु तणो, धुरि धरू तस ध्यान ॥३॥

रस नव ही अति सरस हुई, अपणी अपणी ठांमि ।
उतपति सवि श्रृंगार की, सहु जन-कूं अभिरांम ॥४॥

रसियां विण श्रृंगार रस, शोभ न पामइ [2]युद्ध ।
कामिणी विण कामी पुरुष, दीसइ वृद्ध [3]विब्रुद्ध ॥५॥

तिण रस को कारण [4]त्रिया, वली नायक सु प्रधांन ।
कवियण तिणि कारणि कहइ, रसिक-हेतु धार ग्यांन ॥६॥

रस बंछइ जिको रसिक, सज्जण सगुण सुहाउ ।
सदयवच्छ की वारता, सुणु रसिक सिरराउ ॥६॥

[चुपई—राग मारु]

पूरब दिसि सोहग सु प्रकास । कूंकण विजयपुर विविध विलास ।
मनरमणी पदमणी गुणवंत । योगीजण जिहां सुख विलसंत ॥८॥

---

१. 'सरस वचन कपिगुण सुमति' २. 'मुद्द' ३. 'विशुद्द' ४. 'त्रिया'

[1]महोपाल पालइ तिहां राज। राज करइ जाण कि सुरराज।
ख्यात त्याग निकलंक [2]नरेश। सोहग वास विलास [3]विशेष ॥९॥

तस कुल-मंडण साहस धीर। निरमल गुण गंगा नुं नीर।
सदयवच्छ तस सुत सुविचार। जांणिक हरिकुल मदनकुमार ॥१०॥

[दूहा]

गुण-रागी त्यागी गुहरि, सोभागी सकलाप।
सदयवच्छ सोभानिलो, [4]पल पल चढ़त प्रताप ॥११॥

तन-सुख मन-सुख नयण-सुख, सुख वयणे ही सार।
सुख [5]क्रमि-क्रमि महाराज-सुत, सहु जण-नइ सुखकार ॥१२॥

बीजोही बालक सदा, दीठां जावइ दाई।
राजकुंमर रलियांमणों, कहो किणने न सुहाइ? ॥१३॥

[चौपई]

तो राजा नइ बुद्धि-भंडार। सोम नाम मंत्री सुविचार।
सावलिंगा नांमइ तस जांणि। पुत्री जीव-पराण-समान ॥१४॥

[दूहा]

मधुर चालि लोचन मधुर, मधुर रूप मति मांण।
मधुर बोल बोलइ मधुर, रीझइ रांणो रांण ॥१५॥

हिव इक दिन प्रह सम हुवइ, सुंदर सदयकुमार।
पिता-पाइं प्रणमइ जई, जुडियो जहां दरबार ॥१६॥

[चौपई]

देखी नयणे सुत दिदार। महाराज मनि थयो बिचार।
पुत्र भणावीं करूं सुजांण। विद्या विण नर पशू-समांण ॥१७॥

---

१. 'शालिवाहन करइ तिहां राज' २. 'निसंक' ३. 'ससक'
४. 'दिनदिन' ५. 'माणइ'

(श्लोक)

[1] प्रथमे वयसि ना धीतं, द्वितीये नार्जितं धनं ।
तृतीये नार्जितो धर्मः, चतुर्थे किं करिष्यति ? ॥१८॥

(दूहा)

सूरवीर अति साहसी, रूपवंत दातार ।
विद्या विण विलखइ वदन, जिम प्रिय [2]मन विण नारि ॥१६॥

सहु सज्जण सहु आपणा, सगलइ ही सनमान ।
[3]एकाणि विद्या-तणइ वसि, धरम धरा धन ध्यांन ॥२०॥

(उक्तं च)

[4]विद्या धेणू जिहा नरां, किस्यो अणूरो त्यांह ? ।
[5]खिण दूझइ खिण दूझसी, विमूकसो मूआंह ॥२१॥

(चोपई)

इम जांणि महाराज ति वार, ओझो तेडाव्यो मतिसार ।
भणिवा घाल्यो तिण लेसाल, सीखइ कला सकल सुकमाल ॥२२॥

हिव इक दिन मंत्रीसर सोम, देखि सुना उल्लहसीयो रोम ।
ए गति मति रूप तोहि ज सार, जो जांणइ कंपु सास्त्र विचार ॥२३॥

रूपवंत नइ गावइ गीत, इक वल्लभ नइ हुवइ सुविनीत ।
इक विद्यानइ न करइ मांन, चतुर अनइ मांनइ राजांन ॥२४॥

---

१ माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः ।
सभा मध्ये न शोभिन्ते हंस मध्ये बको यथा ॥

२. 'ज्यूं त्रिय विण भरतार' ३. 'अकेण विद्या वाहिरा' 'नरदी से जिय स्वान ।'

४. 'विद्याहीणा' ५. 'मुकहीन विसूकसि; जो दीसइ मबरांह'

अेक सोनूं नइ वलि होई सुगंध, सींह अनइ पाखर संवंध ।
अेक सुता नइ सास्त्र-सुजांण, तो वाधइ अधिको विन्नाण ॥२५॥

इम जांणो [1]ओझो मतिसार, तेडाव्यो मुंहतइ तिण वार ।
आसण वेसण आपि उदार, वचन कहइ करि निज आचार ॥२६॥

(दूहा)

कर जोडी मुंहतो कहइ : "सुणि, ओझा ! सुविचार ।
एह भणावो अम्ह तणी, पुत्री रति अणुहार ॥२७॥

भणइ घणा लेसालीया, ओझा तुम्ह लेसाल ।
तिहां-थी ए मुक्त राखवी, गुपतपणइ ए बाल" ॥२८॥

हरखइ हाकारो भणइ, ओझो धरि अधिकार ।
जिम आखो तिम पाठवुं, रंगइ राजकुमारि ॥२९॥

(चोपई)

हिव सुभ लगन मुहूरति घरी, भणिवा घाती सा कुंअरी ।
छांनइ तिणि ओझा नइ पासि, दिन प्रति करइ कला-अभ्यास ॥३०॥

तिणि ओझानइ अति अभिरांम, गृह पासइ इक छइ आरांम ।
वृक्ष अनेक अछइ जेहमइं, जिण दीठां दिन सुख मां गमइ ॥३१॥

जाई जूही मुचकुंद सकुंद, पुहकरणी-जल-मइं अरविंद ।
बोलसिरी पसरी चहुं ओर, मदोन्मत्त नाचइ जिहां मोर ॥३२॥

मालती तरु महकइ [2]महुकार, [3]गूं गूं सबद करइ गुंजार ।
खिण बईसइ, खिण ऊडी जाइ, [4]रति वांछिक जिम आतुर थाय ॥३४

नालिकेरी जंमीरी द्राख, [5]लूषांलूंवि रही जिहां साख ।
कोईल टहुकइ अंब संयोग, [6]जिम-नव-त्रीय करइ प्रथम संयोग ।

---

१. 'छेडो' २ ,'सहकार'३, 'खटपद गुंगुं करइ गुंजार' ४. 'रीति वंछति' ५, 'लूंपि रहिया जिहां साख' ६. 'जिम कामणी करइ प्रथम संभोग' ।

शालि-खेत्र तिण बाग-मझारि, [1]ओझा आरोगइ सुविचार ।
शालि तणी रखवाली भणी, वारो माँडी [2]जण-जण तणी ॥३५॥

(दूहा)

लेसाल्याँ-सिरि [3]वड थयो, [4]भणतइ राजकुमार ।
पाटी देई अवराँ प्रति, सगलो कहइ विचार ॥३६॥

हिव यौवन-वय आवीयो, सदयवच्छ सुविचार ।
अंग अंग अति उल्लहसइ, [5]कज्ज दरसण दिनकार ॥३७॥

अवरहिं गति मति पिण अवर, अवर रूप गुण ओर ।
आबी वय यौवन अवर, [6]जाणि कि छइ सवि ठोर ॥३८॥

माँन दान महीयल महत, गरूंअ वाँन गुण ग्यान ।
आया जोवनि आवताँ, ए पाँचे परधाँन ॥३९॥

वय जोवन अरू निपुण-पण, घरि धण विनय अथाह ।
ए च्यारे तउ पामीयइ, जउ तूसइ जगनाह ॥४०॥

[7]गति मति छति गुण-गण निपुण, राव तणइ परभाव ।
ओझो पणि अधिकउ गिणइ, दिन दिन दोठो दाब ॥४१॥

(चोपई)

इक दिन पूछइ ओझा भणी, कुंबर वात तिणि कुंवरी तणी ।
"लेसाल्या सहु बाहरि भणइ, माँहि भणइ कहु तुम्ह तणइ" ॥४२॥

कहइ ओझोः "सुणि सदयकुमार, जे छइ माहरइ गेह-मझारि ।
अे पुत्री साम मंत्रीस्वर तणो, सार्वलिगा सँज्यम तिणि भणी ॥४३॥

राजकुंमर देखइ नही तिणइ, ते छइ अंधी, माँहि ज भणइ ।"
इम कहिनइ भाग्यो सहु मर्म्म, वीजो क्युंही न भाख्यो मर्म ॥४४॥

---

१. 'ओझा आरोगण सुख सार' २. 'चेलातणी' ३. 'वट' ४. 'भणतो' ५. 'मदन महा मसरांल' ६. 'जाणिकि सेस न ठारे' ७. 'धरि धव विज्जू अथाह' कडी ४२ केटलीक प्रति० माँ नथी ।

कुमरी मनि पणि अलजो थयो, सदयकुमर-नइ देखण तणो ।
गुरुजी-नइ पूछइ सा इमइ, "कुमर कहु नावइ इहाँ किमइ ? ॥४५॥

ओझो कहइः "सांमलि कुंवरी, कोढी कुंवर देही अति बूरी ।
कुंवरी न देखइ कोढी मुख, बाहरि तस राखुं तहु दुख" ॥४६॥

हिव इक दिन ओझो मतिसार, जात्रा लागो नयर मझारि ।
जातइ आख्यो सूदा भणी, सहुनइ दई पाटी आपणी ॥४७॥

पणि मत खोलउ ए ओरडी, आंधो-नइ रहिवा दीज्यो ऊंडी ।
तह त्ति कुंमर ओझा-नइ भणइ, पुरि पुहुतो ओझो तिणि खिणइ ।

(दूहा)

तिणि अवसरि सूदा तिहाँ, सावलिगा-रो साद ।
सुणि भणतां, बोल्यो सदय, अधिक धरि उनमाद ॥४८॥

"हे अंधी ! खोटउं भणइ, खरउं न भाखइ काइ ? ।
फूटी चखि तुझ वारीली, तिम ही ज गहीजे माहि" ॥५०॥

कहइ कुमरीः "सुणि कोढीया !, खोटउं न भणुं क्युं हि ! ।
पाटी-मइं लिखीउं अछइ, वाचूं छूं हूं त्युं हि" ॥५१॥

सुणि सूदो सँकित थयो, [2] "आखइ बात स्युं एह ? ।
अंधी कहु, किम वाचसी, [3]लिखीउं छइ जे लेह ?" ॥५२॥

[4]इम चिंतवि आकुल अधिक, करि करि ऊंचो वास ।
दीठाँ निज चखि कुंवरनाँ, काँति वयण सुविलास ॥५३॥

---

१. 'खरो भणावो कोढ़िया, लिख्यो छइ जिममांहि' २. 'आखइ' ३. अक्षर लखिया गेह'

४- "इम चितवी खोली ओरडी, देखी कुयरी रूप ।
कुमरी देखइ कुमर नइ, अन्यो अन्य देखे स्वरूप ॥"

[1]हा हा रूप सुख, चखि हसइ, विकसित सुगति विलास ।
सदयकुमर संसय पडयउ, ईषत अधिक उल्हास ॥५४॥

[2]जे नर रूपइं आगला, ते नर निगुण न होई ।
केसर केरी पंखडी, सहि सुरंगी जोई ॥५५॥

(चोपई)

दीठी अपछर नइं अणुहार, सदयवच्छ कुंमरि तिणिवार ।
चित्र-लिखी जाँणइ पूतली, रंग चंग चंपक-नी कली ॥५६॥

कइ रंभा इन्द्राणी जाँणि, [3]कइ गोरी आई धरि माँणि ।
कइ रतिपति-रामा रति रूप, चितइ मनि ए किस्यूं सरूप? ॥५७॥

(दूहा)

सर वीणा, पद-तल कमल, वयण अभी विस्तार ।
चरितालां लोचन चतुर, नयण न खंडइ धार ॥५८॥

तनु सरली, पूरण रली, सकल रूप सुकमाल ।
कलप-बेलि कहीयइ तिको, एहि ज रूप रसाल ॥५९॥

इण सम संसारि त्रिया, कीनी नबि करतार ।
चिगताला वयणइ वदइ, अमीय वयण सुविचार ॥६०॥

(चोपई)

अति सुंदर सोहइ आकार, अद्भुत तनु सुकुमाल उदार ।
सकुलीणी वाली सुविचार, कामवेलि कवली अणुहार ॥६१॥

फूल तूल मखतूल असूल, कोमल स्याँमल केस ससूल ।
चिहुर-[4]मूल बंध्यो चाँदलो, सेस सीस मणिमय बिंदलो ॥६२॥

१-'हा हा रूप मुखचंद्र हंमे, विकसित युगत रिलास । आहा रूप अवों अछइ'

२- केःलीक प्रति मा० नथी । ३. 'कइ गोरी अरधंग वखाणि' ४: (दृढ़)

ओपइ भाल बिशाल अनूप, नभ-दीपक टीली ससि रूप ।
भ्रूहि पुहपअनु करि सुभवास, मधुकर आइ करइ आवास ॥६३॥

शंकित चकित थकित मृगबाल, लोचन परि लोचन सुविशाल ।
निरमल नीकी जस नासिका, जाँणि अखंडित दीपक शिखा ॥६४॥

माखण मुखमल परि सुकमाल, कंचण वरण सरीसा गाल ।
गुरु प्रिय वयण वयण सुसार, अमृत पूरण करण उदार ॥६५॥

चिहुं दिसि चलकइ कुंडल नूर, जाणि कि [1]सेवइ ससि नइ सूर ।
मधुर अधर वर चंग सुरंग, हिंगलू नइ परवाली रंग ॥६६॥

दंत-पंति दीपइ ऊजली, कइ मोती कइ दाडिम कली ।
नह केसरि आँगुलि पाँखुरी, कर बे नालि सु वाहाँ खरी ॥६७॥

उरबर जोवन राजइ आप, पूरण परिघल तेज प्रताप ।
कुच दुंदभि जोडि वाँजंति, कंचुकी दल-वादल छाजंति ॥६८॥

केसरि-लंक नितंब विशाल, केलि-गरभ जघा सूकमाल ।
रकत कमल पल्लव परि पाइ, अति कोमल सुचि रंग सुहाइ ॥६९॥

[3]मयमत्ती उनमत गज गेलि, चालि हरावइ हंसाँ ढेलि ।
ठमकि ठमकि रिमझिम पय ठवइ, वेखी तस बसि कुंण नवि हवइ ?७०

(दूहा)

मानिनी मोहन-वेलडी, मुखि मलकइ महकार ।
दंतश्रेणी दीपइ तिमइ, चपला-को चमकार ॥७१॥

गिरुआ गुण-गण तिणि निपुण, संकेतइ संचारि ।
चतुराई धरि चूंपस्यूं, कीधी ए किरतार ; ॥७२॥

(दूहा-सोरठीया)

रमणी सा संसारि, जस त्रिहुं भुवन ओपम नहीं ।
अवला अवरि विचारि, कहीयइ निच्चइ कवीयण ॥७३॥

---

१. 'वमइ' २. 'करकज' ३. 'मयमती हाथिणीनी चालि, हालि'

(चोपई)

अद्भुत रूप अनुपम गात, इणिस्युं सुख बोलइ दिन राति ।
देखिदेखि तस रूप विलास, कुंमरो पणि फिर देखइ तास ॥७४॥

(दूहा)

नयण-वांण नारी तणे, सदयवच्छ सुकुमाल ।
वींध्यो अति व्याकुल अधिक, तेह थयो असराल ॥७५॥

गाहा-रस कवियण वयण, मधुर बाल संलाव ।
हाव भाव हरिणांखीयां, क्युं न हरइ मन-भाव ? ॥७६॥

उर लागा अति आकरा, नयण वांण अणीयाल ।
नयण निमेख लीये नहीं, मगन थयो महिपाल ॥७७॥

तां लज्जा तां सूरपण, तां विद्या तां माम ।
नयण-बाण नारी तणां, हीयइ न लग्गां जाम ॥७८॥

सज्जण दुज्जण सुधिकरण, प्रथम उपावण प्रीत ।
सुखकारण संसार सहु, नयण-ह केरी रीति ॥७९॥

(दूहा-गाहा)

अण जांणीयाण संगो, नयण कुव्वंति धरंति बहु पिम्मो ।
लग्गा कह विन फुहइ, अलख गई परम सा भणीया ॥८०॥

पुव्वि करेइ पिम्मं, पच्छा पुण गिन्ह ।ए मणो तस्स ।
सज्जण जण सुहजणणं, चक्ख परम वसीगरणं ॥८१॥

(दूहा)

नयण पदारथ नयन रस, नयणे नयण मिलंत ।
अणजाण्यां-स्यूं प्रीतडी, पहिलां नयण करंत ॥८२॥

नयणां सोइ सराहीये, जिण नयण-में लाज ।
बड़े भये अरु विख भरे, कही सजन, किण काज ? ॥८३॥

सयरा ठगारे ठगी गई, दे गइ चोट अचूक ।
वहोत भाँति ओखद कीए, मिले न दोउ टूक ॥८४॥

नयन नयन पैं जात हे, नयन नयन-की हेत ।
नयन नयन की बात हे, नयन नयन कह देत ॥८५॥

नेनाँ कह्यो नेनाँ सुएयों, उत्तर दीयो नेन ।
नयन नयन सूं मिल गरा, कहे कोसूं वयरा ? ॥८६॥

ऊतावला न अलूभीइ, सनैः सनैः सव होय ।
सदेव वाडी-रूखडाँ, सफल फलंताँ जोय ॥८७॥

नयणाँ केरी प्रीतडी, बूझे वीरला कोई ।
जे सुख नयणे पाईंइ, ते सुख सेज न होई ॥८८॥

सज्जन दुर्जन सज्जन करर्ण, प्रथम उपजावरा प्रीति ।
सुखकाररा संसार सहू, नयणाँ केरी नीति ॥८९॥

नयरा मिलंताँ मन मिले, मन मिले वयण मेलंत ।
वयण मिलंताँ कर मिले, इम काया-गढ भेलंत ॥९०॥

जोर रखवाला पंच जरा, समदाँ जेहा सयरा ।
कायागढ़ तोहि मिले, जां भेदे समये नयण ॥९१॥

नयरा समो वेरी नीको, प्रत्यक्ष लागे ध्याय ।
आग पराइआँ तरणी, आप अंग लगाय ॥९२॥

नयरा वारा जिराकुं लगें, ओखद-मूल न ताँह ।
ससक ससक मरी मरी जीवे, उद्धत कराह कराह ॥९३॥

नयरा बारा जिराकुं लगे, कीधो ओखद ताँह ।
कुच टको पर पेटी भुज, अधर-पान पग वाँह ।९४॥

नयण मिलंतइ मन मिलइ, मन मिलि वयण मिलंति ।
वयण मिल्यइ सहु सँपजइ, कारिज सिद्धि चढ़ंति ॥९५॥

(चोपई)

कुंमर कहइ : "इम वरीय उमेद,इतरा दिन नवि लाधो भेद ।
जोवन विण योवन सुविलास,आज सफल मुझ थया सु प्रकाश ॥९६॥

(दूहा)

अतरा दिन ओझो मुझइ, भोल्यो भोलइ भाव ।
हिय में तुझ बोलण तणी, ढोल पलक न खमाय ॥९७॥

धन माँणस तेही ज धरा, सहुकवि दइन सु-साखि ।
चाहि करइ तिण-सुं चतुर, हिसि बोलइ हित दाखि ॥९८॥

हास रास भासा सुपरि, सयणाँ-तणो सभाव ।
बोलण हसण धुन छज्जही, जाँणे मूरिख राव ॥९९॥

तन-विलसण मन-उल्हसण, वयण सयण सम व्राणि ।
चख-निरखण धन विद्रवण, मानव-भव सुप्रमाँणि ॥१००॥

सयण सरूप सोहामणो, मेला विण किणि ज्ञान ? ।
काथइ विण भेलइ कियइ, जाँणे चोली पाँन ॥१०१॥

हास भास नही जास मुखि, गयो जंम्मारो त्याँह ।
जाँण कि महकी मालती, सूना जंगल-माँहि ! ॥१०२॥

विरस-स्यूं नहो जस विरस, चाहक-स्यूं नहीं चाहि ।
गहिलो योबन-नी परि, गयो जंम्मारा त्याँह ॥१०३॥

पालइ नितु प्रति प्रेम रस, आंखि वयण प्रवीण ।
अवसरि मेलो अप्पही, ते साचा सुकुलीण" ॥१०४॥

वयण नयण सयणह तणे, इंगित नइ आकारि ।
कुंमरी ज्यांण्यउ कुंवरनउ, चित थयु सुविकारो ॥१०५॥

(चोपई)

वार-वार मन कुंवर विचार, कुमरी जाँण्यो एस विकार ।
कुमर चित्त आवइ जेतलइ, सांम्हो तन कुमरी मोकलइ ॥१०६॥

(दूहा)

'आउ' नहीं आदर नहीं, नेह-हीण निरखंत ।
तिण दिसि कदे न जाईये, जो कंचण वरखंत ॥१०७॥

आउ कहे आदर दीये, आसण वेसण सार ।
उठि मिले मन मेलिनइं, तिहाँ जाईये सो वार ॥१०८॥

नयण नयण मिलिया नि हसि, पूठे मन परधाँन ।
नयण नयण मन मिल्याँ, सयण थया सुविहाँण ॥१०९॥

(चोपई)

निरख्यो कुंअर कुंअरी नयण, मोहाणा मनि जाग्यो मयण ।
पल पल देखइ नयन पसारि, खिण विहसइ खिण बिलखी नारि ॥११०॥

आलस मोडइ भाँजइ अंग, मरट धरइ लेवा मन द्रंग ।
खिण नीसास करे ऊससे, काँमदेव जागत कसमसे ॥१११॥

वाँम चरण अंगूठा नखे, खिणि नीचो जोइ भूमि लिखे ।
कुमर-नि जरि साम्हो ते देखि, संभालइ निज चीर विशेषि ॥११२॥

प्रेम प्रकास करइ मनि रली, कुमरी तस विरहइ आकुली ।
कुमरइ दीठो तस आकारि, धनि धनि ए नारी संसारि ॥११३॥

आतुर हुवइ बोलइ अकुलाइ, कुंअर-वतइ खिणि नवि रहिवाइ ।
प्रीति नीति मन धरि आपणी, गाहा रस बोलइ ते गुणी ॥११४॥

(गाहा)

विण दीहे अह भणायं, बिण महुरे होइ अमीय सारिच्छं ।
रे कव्व-रेण-सहियं, अह चुंबु मो सही देहि ॥११५॥

[सार्वलिगा वाक्यं] (दूहा)

अमीय-निवासो अहरि सुणि, गुण आस्सव सम जास ।
चख-मिभल मन विहलपण, तिण जगि हुवइ परगास ॥११६॥

[सदयवच्छ वाक्यं]

पत्थर विणाण घसीयं, विण गंधेण सीतलं होइ ।
कान्हा मात्र सहितं, सखी मो चंदनं देहि ॥११७॥

[सावलिगा वाक्यं]

चंदन चतुर विचारि लइ, चतुरंगाँ चतुरंग ।
चंदा विण चंदण दीयुं, पडहो वजाडइ ढ्रंग ॥११८॥

(चोपई)

इस बोलइ खोलइ मन बात, हसि धसि रसि जब बोलइ गात ।
आलिगन चुंबन जब करइ, श्रोझो आवइ तिणि अवसरइ ॥११९॥

कुंवरइं गुरू दीठो आवंत, मत जांणइ आँणइ मन भ्रांति ।
हलफल करि आवइ घर-बार, मूंकत मनवि लहइ लगार ॥१२०॥

(दूहा)

भाण-खडहड खग्ग-झड, वाल्हां-तणा विछोह ।
एतां वानां जे सहइ, तिण-रा हियडा लोह ॥१२१॥

रेहा नेहा मन-तणा, प्रिय तिय नयण सुहाउ ।
ए छूटंतां दोहिला, जइ सिरि जाइ तो जाउ ॥१२२॥

(चोपई)

सदयवच्छ व्याकुल अति घणूं, हिव वरण फिरीयउ मुख तणउ।
तिण अवसरि ओझइ मतिसार, दीठा कुमर तणा आकार ॥१२३॥

ओझे ते दीठी कुंअरी, सदयवच्छ विरह करि भरी।
चास भास दीठो तस चैत, ओझइ जांण्यउ विणठो वेत ॥१२४॥

यतः

आकारैरिंगितैर्गत्या, चेष्टया भाषरोन च।
नेत्र वक्त्र-विकारेण, ज्ञायतेऽन्तर्गतं मनः ॥१२५॥

(दोहा)

ओझइ सगलो अटकल्यो, मनमां विहुं-रो मेल।
मुहि क्युं ही भाख्यो नहीं, एह विधाता खेल ॥१२६॥

गिरूआ सहजइ गुण करइ, जो अवगुण लख होइ।
खांगो वांको ही लखइ, मरम न छेदइ तोहि ॥१२७॥

(चोपई)

ओझे मरम बिहुनो लह्यो, तो परिण मुखि क्युं ही नवि कह्यो।
सावलिंग नो थयो वियोग, सदयवच्छ[1] मन हूवइ शोग ॥१२८॥

आसरण वेसरण पांन फूलेल, मूक्यां काम-कतूहल केलि।
न करइ क्युं ही बीजूं कांम, जप-माला फेरइ तस नाम ॥१२९॥

(दूहा)

खातां पीतां खेलतां, क्युं ही तृपति न थाइ।
सदयवच्छ सावलिंगा-तणो, खिण विरहो न खमाइ ॥१३०॥

---

१. 'मवया सवि भंग'

भरणण गुणरण भोजन भगति, हास भास हित होंम ।
सदयवच्छ नवि संभरइ, इक निस-दिन तस नांम ॥१३१॥

सोंक तणो संगम सुणी, नींद पुरातन नारि ।
निमख लगइ ही निस भरइ, भींटइ नहीं भरतार ॥१३२॥

यत:

एक द्रव्याभिभाषित्वं, परमं वैरि-कारणं ।
विशेषेण सपत्जीनाँ, भाषायां सरलता कुतः ?॥१३३॥

(चोपई)

घटा जिके भणता चट शालि, एकेकणि रखवाली शालि ।
ओझइ कुमरी-नइ दीयो आदेस, राखण तिण वनि कीयो प्रवेश १३४

ओझो भाखइ सूदा भणी, "कुमर ! आज वारी तुम्ह-तणी" ।
मान्यो कुमरइ वचन ज तेह, अंतरगति थयो अंदेह ॥१३५॥

(दूहा)

आज किहिनइ स्युं हतो, रखवाला नो हेत ।
करताँ एम विचारताँ, काँइ धरइ नहीं चेत ॥१३६॥

हूं उणिरों उवाँ माहरो, साद सुणंता सार ।
इतरो हो सुख अम्ह-तणो, साँख्यो नहीं करतार ॥१३७॥

नयण रहो, मन ही रहो, रहो सुवयण विचारि ।
सयण रहइ जिण दिसि तिका, काँइ खोस्यइ करतार ?॥१३८॥

(चोपई)

मन दृढ़ करि पुहुतो मतिमंत. तिरा वनि तिहाँ सुरिगज्यो विरतंत ।
तिरिग खिरिग तिहाँ जाइ ऊभो रहइ, तिरिगखिरिग वयरगसयरग सर दहइ ॥१३६॥

(दूहा)

कइ कोइल कुहका करइ, कइ वंशी वीरगानाद ।
सुरिग सूदो संकित थयो, अनि चित-माँ उन्माद ॥१४०॥

(चोपई)

चतुर चूंप पेखइ चिहु ओर, चातक जिम पेखइ घनघोर ।
तिहाँ-थी ते आघो सँचरइ, सा दीठी चंपक-आँतरइ ॥१४१॥

(दूहा)

न्याँनी नयनाँ सारिखो, नहीं कोई संसारि ।
विकसइ प्रिय-जन देखिनइ, सो वरसे ही सार ॥१४२॥

विह आँरगइ विह मेलवइ, विह मंडइ उपचार ।
अलगो ही नैडो करइ, ए विधि-तरगउ विचार ॥१४३॥

तन मन जीवन दिन सफल, आज कीया करतार ।
वीछडीया साजरग मिल्या, पुंहुतइ पुन्य प्रकार ॥१४४॥

(चोपई)

कुंमरी पिरग चिंता थी घरगी, हुँती निज प्रिया मिलिवा तरगा ।
ते आँरगी मेल्यो जगदीस, गई आरति, पूगी सुजगीस ॥१४५॥

प्रिय दिट्ठो भर प्रेम प्रकास, अंगि अंगि बाध्यो उल्हास ।
रूंकट कंचु अति उल्हसइ, प्रिय संगति हुई तिरण हसइं ॥१४६॥

(गाहा)

पुर पट्टणे निवासं, पंडिय पासं च निश्चला रिद्धि ।
तरुणी नयण विलासं, पामिज्जइ पुन्न-रेहांइ ॥१४७॥

(दूहा)

जोराबरि लीधो हुंतो, विरह मदन निवास ।
फिर मदनइ पते पुरलीयो, ए विधि-नो सुविलास ॥१४८॥

वेउ मन मिलिया बहसि, साँई आई दीध ।
घरण दिवसो विरहो हुंतो, नयणे तृपति न कीध ॥१४९॥

(चोपई)

अति सुंदर मंदिर आराम, निपुण नाह वामा अभिराम ।
देखि देखि एकंतइ ठाम, कहु किणनो नवि जागइ काम ? ॥१५०॥

यतः

दृढ़-कच्छा कर-वरसणा, बोलंता मूंह मिट्ठ ।
रण-सूरा जगि वल्लहा, ते मइं विरला दिट्ठ ! ॥१५१॥

(चोपई)

बिरह-चिंत हुंती ते गई, कामिनी परिण कांम-वसि थई ।
वंक नयरण मुखि वंका नयरण, इरिण अहिनांणि [1]जाँरिण मयण ॥१५२॥

१, 'जागे'

कुंमरइ तब तिणि कुंमरी तणो, कर पकड्यो मनि ऊलट घणो।
हीण मधुर वालां दाखवइ, मुखि सोहग अमृत रस स्रवइ ॥१५३॥

मन आकर्षि कीयो वसि आप, थयो अंगि उनमाद अमाप ।
स्परशालिंगन चुंबन सार, वहि-रति सात करइ तिणवार ॥१५४॥

(दूहा)

"सावलिंगा !" सूदो कहइ, "एह वयण अवधारि।
ए अवसर आराम ए, सफल करो सुविचार ॥१५५॥

(गाहा)

जच्छ विजलं न छाया; छाया जलं न सीतलं होई ।
छाया जल-संजुता, ए संजोगो दुल्लहा होई" ॥१५६॥

[सावलिंगा वाक्यं]

नयण चमक्कयो वयण रस, सगुणां एम सुहाइ ।
'नाउं अज्जाणाँ-ह-स्यूं', चम्मो चम्म घसाँइ ॥१५७॥

[सदयवच्छ वाक्यं]

अंब पक्के बहु भाँति, कि टूक इक खाइये ।
बाडी वन-फल होइ, तो तोडि चखाइये ।

गागर पाँणी होइ, तो पंथी पाईये ।
परिहाँ, रख्या कहि कहो होइ, भरेई जाईये ॥१५८॥

१: 'मूरख-हुंदि प्रीतडी चाम्यो चाम घसाइ'

सो जोवन सु-पसाउलो, सो तन धन गुण-ग्राम ।
पर-काजे पूरा करे, प्रीन तणो तस नाँम" ॥१५६॥

[कुमरी वाक्यं]

"लूखो सूखो खाई-नइ, आधी काढइ ऊख ।
काची कली न तोडीयइ, जो लागइ लख भूख" ॥१६०॥

तिणि खिणि वायु-तणइ वसइ, ऊड़्यो कुमरी-चीर ।
सूदओ तस तन देखिनइ, आतुर थयो अधीर ॥१६१॥

वाये ऊडइ पंगुरण, कुंमर चलीयो चित्त ।
प्रथम राति वाचा तिणइं, सदयवच्छ-स्यूं दत्त ॥१६२॥

(चौपई)

शीतल जल चंपक-सुवास । छाया सेज कुसुम सुविलास ।
पोढ़या बेउं प्रेम पियास । उर मेली अधिको उल्हास ॥१६३

ओझे चटडा मेल्हया चारि । लेवा तिहाँ बेऊंनी सार ।
जोई तिहां खिण इक नवि रहइ । पाछा आइ ओझा-नइं कहइ ॥१६४

(बेसालीया वाक्यं)

"गुरुजी ! उइ सूओ उवा सूई । कुसुम सेज पाथरे सूइ ।
प्रहरे प्रहर बिलंबीया । सागरे खालि खनि सूईय ॥१६५॥

(दूहा)

सांझ समइ जाग्या सही, अंतरगति एकलास ।
बोछडतां बोलइ वयण, सावलिग सु-विलास ॥१६६॥

'सूदा !' [सावलिगा कहइ], 'एह' ज अधिक सनेह ।
राखो भाखो मत किहां, दाखो कदहि न छेह ॥१६७॥

ए चंपक आराम ए, बलि मन-मेलो एह ।
जिहाँ तिहां चीत धारिनइ, धरिज्यो अधिक सनेह ।१६८॥

(चौपई)

स सनेही आया चटसाल । ओझो चित संकयो ततकाल ।
पूछइ ओझो कुमरी प्रतइ । ऊरी मइं आपुण-रे मनइ ॥१६९॥

(श्लोक)

पद्म-पत्री विसालाक्षी, कर्णो सोभंति कुंडला ।
येन कार्ये वने गता, सकाम सफलं कृतं ? ॥१७०॥

[सार्वलिगा वाक्यं]

"अजेस कुंमर अयांणो, कर ग्रहि लीडंति छंडिया सांमा ।
त्रिया एह सभायो, ना ना करतां वाधए प्रेमो ॥१७१॥

(चौपई)

सांझ समइ आया निज गेह । विहुआं विरह त्रियाकुल देह ।
सार्वलिगा भोजाई पासि । बईठी अबर सखी सुखी वास ॥१७२॥

निज भत्रीजो लेई उछंग । खेलावइ अधिकइ मनरंगि ।
खिणमइं लावइ अधर पियास । भिडइ कांम जणावइ तास ॥१७३॥

आंचल मुखि आपइ उलहसइ । मुख-स्यूं मुख मेलीनइ हसइ ।
नणंद प्रति भोजाई कहइ । "लाज सहु तुम्ह अलगी रहइ ॥१७४॥

(गाहा)

बाला मुख म लाइस बालं, अपजस वज्जसी नयर सम्फालं ।
बालो लहसी अवर सवांद, ते बालो तजसी खीर-सवादं ॥१७५॥

(चौपई)

"किस्यूं करो ? रहो सांसतां, दूरि करो बालक-मुख हूं तां ।
पूरण लख्यण थयां तुम्ह-तणां, वयण कहइ कुमरी आंपणां ॥१७६॥

(चौपई)

[सार्वलिगा वाक्यं]

(दूहा)

धरण जोवरण भींभ्रल छिले, विरह अंगि न समाइ ।
सखी सलज्जी गोठडी, कहतां किणहि न जाइ ॥१७७॥

सखी सलल्जी गोठडी, नीलज नयण निहीर ।
तुम्ह ज्यूं अम्ह पयोहरां, कदे वहेसी खीर ?" ॥१७८॥

(चौपई)

तिण अवसर तस बंधव सार । सिंह आवइ तिण महल मझारि ।
सार्वलिगा जाइ अलगी रहइ । तव भाभी सहु वारता कहइ ॥१७९॥

"सुणि पीतम ! बाई तुम्ह तणी । कामवंती मनि इच्छा घणी ।
जोवन विरहइ अे व्याकुली । परणावो पूरो मन रली ।" ॥१८०॥

सिंह सुणि मनि थयो विचार । ब्राह्मण इक तेडयो तिण वार ।
सात दिने साहो थापीयो । पुहपावती पुरि कागल दीयो ॥१८१॥

सार्वलिगा परणावण काजि । सिंहइ सगला कीया समाज ।
उच्छव मंडया अधिक ऊछाह । निस दिन कुमर निहालइ राह ॥१८२

खातां पीतां भोग विलास । रलीयाली तरुणी रंग रासि ।
हय गय रथ सोहग परिवार । राय न करइ सूदो तिण वार ॥१८३॥

(दूहा)

रजवट घट हय गय तणा, नव परणी वर-नारि ।
सूदो सार्वलिगा विना, क्युं नवि मानइ सार ॥१८४॥

सगलइ गज लाभइ सदा, खांन पान सनमांन ।
पिण रेवा तिण हेवा नहीं, तिम तसु कुमर निदांन ॥१८५॥

मन वंको मन वावलो, चंचल चपल सुचार ।
केसव मन जिहां रथ करइ, ते गति अलख अपार ॥१८६॥

सो घर सो पुर नगर सो, ज्यासूं सयरणा चार ।
जिरण-सूं मन लागो रहइ, सो कोईक संसारि ॥१८७॥

सारीखो राचइ सदा, सारीसि सद भाई ।
सारीसा संगम विना, फल कच्चइ मन जाई ॥१८८॥

महीयल जरण वहुला मिलइ, अद्‌भुत रूप उदार ।
मनगमतां मांरणस विना, सूनो सहु संसार ॥१८९॥

आवइ दिन-प्रति सदय नृप, लुवध थको लेसाल ।
विरण कुमरी व्यापइ विषम, विरहानल असराल ॥१९०

जिम चातक जलहर सदा, चाहइ चंद्र चकोर ।
कुंवर सुकुमरि न देखतो, ईषइ च्यारों ओर ॥१९१॥

ना घरि, नां पुर नारिस्युं, नवि नेसालइ नेह ।
विरण तिरिण खिर वेवइ नहीं, सूदो सुख-ची रेह ॥१९२॥

दीठो सुदय दयामरणो, इक दिन ओभइ आप ।
मिसि करि सुदय दयामरणो, एहवो करइ अलाप ॥१९३॥

[ओभा वचन]

"आज कालि नावइ इहां, सावलिगा पढ़वाह ।
सात दिवसमां तेहनो, मंडाणो वीवाह ॥१९४॥

(चोपाई)

सुरिण सूदो इम वयरण विचार । आतुर मिलिवा थयो अपार ।
तिहां थी आयो वेस्या तरणइ । धन आपि मांनइ अति घरणइ ॥१९५॥

राजपुत्र आयो इम जांरिण । आपइ आदर करइ प्रमोरण ।
सवि शृंगार विछावइ सेज । हाव भाव-सूं मंडइ हेज ॥१९६॥

ततखिण बोलइ सुदय नरेस। "काम नही रतिनो, सुणि वेस!।
अवर काजि आया अम्ह आजि"। कहइ वेस्या: "फुरमावो राजि"।१९७

अरथ किस्यू आवेस्यइ पछइ, वात जणावो पुण ते अछइं।
राजि तणि नवि आवइ कांमि, जलि जावो गुण ते सुणि सांमि॥१९८

(दूहा)

ओ वाल्हो निय सयणो, ओ बंधव अभिरांम।
लाखीणो अवसर लहइ, आवइ आपुण कांम॥१९९॥

यतः

अपसर चुक्कइ रस गयइ, आदर करइ अयांण।
जे रिण गुण-विण वाहीयां, ते किम लग्गइ बांण॥२००॥

(चौपई)

"तेह तणो मंड्यो वीवाह। हुँ जाई न सकूं तिण राह।
जनम जीव मुझ तो परमांणं। देखूं जो ए कुमरि सुजांण"॥२०१॥

वेस्या कहई हीयडो उल्हस्यो। "एह वातनो दोहिलो किस्यो?।
[ति कहइ] वयण हीयइ निज धरो"। कुंमर कहइ, "ढील
सी करो?"॥२०२॥

"कुंमर! वेश करो स्त्री-तणो। आवइ तसू ऊलट घणो।
बेस्या बे सार्वलिगा पासि। आवे बोलइ बचन विलास॥२०३॥

(गाहा)

पावस रूद्रा रयणी, पिय परदेस विम्महा पंथी।
पर पुरुषाँणइ नेहं, पामिज्जइ पुन्न-रेहाइं॥२०४॥

(चोपई)

सार्वलिगा सुणीयो तस वयण। फिरि बोली वंकी करि नयण।
मनि भावइ पणि नवि जाणवइ। तेहवो वयण कहइ ते हवइ॥२०५॥

(गाहा)

पिय-मिलणी कुल-छलणी, अपजस-पडहो, वज्जसी नयरे ।
सरसव-पमाण सुखं, दुखं तह होइ मेरू-सारिच्छं ॥२०६॥

(चोपई)

सुह णारी वेस्या नइ तिणइ । पाछी फिर आई तिण खिणइ ।
फिरतो बोल्यो सदयकुमार । हरखि निरखि ससनेही नारि ॥२०७॥

[सदयवच्छ वाक्यं]

(गाहा)

नव सत्ता ससीवयणी । हार आहार वाहणा नयणी ।
जलचर मग्गा गमणी । सा सुंदरि कच्छ पामेसि ? ॥२०८॥

(दूहा)

जाण्यो ए तो वल्लहो, जिणि-सूं कीधो बोल ।
निरखि मुल कि कहइ माननी, एक ज वयण अमोल ॥२०९॥

नगर मज्झे सालूरं, सगति रूप पाडिया विवं ।
[........ ....] ॥२१०॥

[सावलिंगावचन]

(दूहा)

"देहरू नगरी-मंही अछइ, जस सालूरह नाम ।
सगति-रूप देवी जिहां, तिहां पामिसि ते ठाम" ॥२११॥

सुणि वांणी हरखित थयो, करि संकेत सुकत्थ ।
वेस देई वेस्या तणो, आयो निज घरि जत्थ ॥२१२॥

मोरां जिम मेहां तणी, ईषइ वाट उछाह ।
राह तिमइ जोवत रहइ, कदि आवइ दिन ताह ॥२१३॥

(चोपई)

दिन जाणी आणी उल्हास । आज हुस्यइ कुमरी मुझ पासि ।
आवइ ठाँमि इक चूंप घणी । करइ सझाइ अमलां तणी ॥२१४॥

(दूहा)

माफ विजयादिक अमल, चूरण करि चखचोल ।
सदयकुमर बैठो जई, देवल अधिकइ लोल ॥२१५॥

(चोपई)

लगन दिवस आइ तस जोन । सावलिगा परणी सुभ वांन ।
सयण भुवण ति नारी नइ नाह । आया अंगि अधिक उछाह ॥२१६॥

चूवा चंदन मृगमद घनसार । सूंघा पहिरया तन सुखकार ।
सखरो सीसा अधिक सुचंग । परिमल कुसुम सुवास पलिंग ॥२१७॥

तिण उपरि बैठो जई आप । मदनराय फेरी सिर छाप ।
जाग्यो मयण दीठी त्रिय नयण । कहइ, "अरहां इम आवो इथ अरण" २१८

(दूहा)

नाहइ तिण नारी-तणइ, कर करीयो उरसार ।
सावलिगा तिण अवसरइं, संको चित्त मझारि ॥२१९॥

[सावलिगा स्वगत वचन]

"बालपणइ बोल्यो हुतो, वयण सुदयन्नूं सार ।
ते जो निर्वहूं नहीं, तो मुझ नइ धिक्कार ! ॥२२०॥

सुंदर निपुण सरूप सुभ, नितु मव नेह निधाँन ।
निज वाचा पालइ नहीं, ते माँणस के हइ ग्याँन ॥२२१॥

जावो धन धरणी धरस, गुण गाढिम सति प्रेम ।
सति आ सति जावो सहू, पिण वाच म जाज्यो तेम ॥२२२॥

मुझ वाचा साची करूं, संगति सदयकुमार ।"
इम चींतवि प्रीतम प्रतइ, वाचइ वचन विचार ॥२२३॥

(चंद्रायणा)

"अंब पका बहु भाँति, मरूंगी डालीयाँ ।
मेरे हीयडे हाथ न घालि, कि द्यूंगी गालीयाँ ।
गहिला मूढ अबूझ, अयाण कि वावला ।
परिहां, हुं मालणि रखवाल, कि आँबा रावला ! ॥२२४॥

सुणि बोल्यो सारथ सुतन, एहो वयण म आखि ।
अम्ह अमोलिक अंब ए, लीधा जांणइ लाख" ॥२२५॥

(चंद्रायणा)

रहु मूध ! अयाण, वात न अखीयें ।
एणि समइ रस-रीति, कि प्रीति सु रक्खीयें ।
वात न अखइ कोइ, किसा खासहू जणा ? ॥
परिहाँ, कुण रावल रखवाल, कि आंबो अम्ह तणा ?" ॥२२६॥

कहइ सावलिगा कांमिणी, "आई युंही ज इण हीय ।
मैं आप्यो तिण वचननो, सुणि परमारथ प्रीय ॥२२७॥

(चोपई)

बालापणे हुं रमती बाल । सगति-पूज करती प्रहकाल ।
देवी तूठी प्रेम प्रकार । "सुंदर वर पाँमिसि सुविचार ॥२२८॥

सुणि कुंमरी ! तूं रति-अवसरइ । पहिली जात्र अम्हारी करे ।
जात्र विना जो करसि संभोग । पति मरिस्यइ पडिस्यइ घर सोग २२९

आखूं हूं तिणि एहवी वात । सगति-तणी मुझ करिवी जात्त ।
सेवक महइः "वेगा हुवइ । रंगरली रयणी बालिवइ" ॥२३०॥

कुमरी कहइः "हिव डांस्यो कांम। प्रह जाई करिस्यूं प्रणांम।
"नो हिवणाँ जावो" कहइ नाह। सावलिगा ओठि लीधउ राह॥२३१

(दूहा)

निज मंदिर सुंदर निपुण, नाह व्याह उच्छाह ।
तजि तृण जिम ए सहु सुरत, पाली बोल प्रवाह ॥२३२॥

आसा करि यूं ही रहइ, वहसि न पालइ बोल ।
पुहवी ते पापी प्रथम, माँणस कवड्डी-मोल ॥२३३॥

बोलइ थोडा बोल, बिहचइ निरवाहइ घणा ।
ते माँणस-रो मोल, लाखेही लाभइ नही ॥२३४॥

(चोपई)

ऊमगि मगि चालइ मयमंत्ति। राति अंधारी अतिभय भ्रंति।
चोर खापरो नइ कोडीयो। देखि कुंमर साह मनि कीयो॥२३५॥

बोली तिण अवसरि सा बाल। करि करि ऊंचा सगति विसाल।
हाकाँ करि मुखि बोलइ हसइ, धूंकल करि कूदइ धसमसइ॥२३६॥

'माँगि, माँगि तूठी हूँ माय।' तिण खिण बे प्रणमइ तस पाय।
"जो माँग्यो तूं आपइ दान। जीमण आपि मलीदो दांन॥२३७॥

(दूहा)

नक-मोती दीधो नवो, देवी रूपइ दाखि ।
भोजन करिज्यो भगतिसूं, मोल इयैं-रो लाख ॥२३८॥

अरधो कज्जल सावलो, अरधो कुंकुंम-वन्न ।
चोरे ले पाछो दीयो, ए चिर मी नर-तन्न ॥२३९॥

हाहा जोज्यो गुण निपुण, चढीयो निगुणाँ हत्थ ।
मोती ही घण मोलनो, मिल्यो गुंजाहल सत्थ ॥२४०॥

(चोपई)

सोवन-नेउर निज पगतणो । देवी दीध तउ माहिं घणो ।
देवहरइ आई तिणवार । दीठो वैठो सुदयकुमार ॥२४१॥

पासि जाई ऊभी खिणभणी । बोलइ नही, थई वेला घणी ।
कुमरी कर लीधो तस हाथि । तो पिण कुंमर न घालइ वाथ ॥२४२।

(दूहा)

नवि बोलइ चालइ नहीं, न धरइ तिलभरि नेह ।
'सुणि साहिब ! [कुमरी कहइ], अजी किसूं अंदेह ? २४३॥

भीम भुयंग भेदीयो, छलीयो किणहि छलाव ।
घम टेरै घूमइ घणूं, ज्यूं तरबर वसि वाव ॥२४४॥

अहि खील्यो गारूड अधिक, नवि वाहइ विस झाट ।
हाथ खांचि रहीयो हिवइ, सूदो केही माट ? ॥ २४६॥

"सूदा ! [सावलिंगा कहइ], हिवइ पूरो हांम ।
हूँ आई हेजा लवी, किसी रीस विण कांम ? ॥२४६॥

"सूदा ! [सावलिंगा कहइ], समरइ केही रीसी ? ।
चूक पड्यो बगसो चतुर, विलसो सुख सुजगीस ॥२४७॥

तजि निज मंदिर नाहलो, सखर तुलाई सेज ।
तुझ कारणि आई त्रया, जोवइ हिवइ सीजे ज ॥२४८॥

तुझ मुझ बेउ मंन तणी, अधिकी हुंती आस ।
अवसर मूंकी आजनो, नाह ! कांइ हुवइ निरास ? ॥२४९॥

आज लगइ तुझ मुझ अछइ; परघल प्रीति अपार ।
एक रूखो आदर भणी, आज जिस्यो अधिकार'' ॥२५०

मेल किस्यो मूक्यो कह्यो, भाँमिणि सेती भाउ ।
बोलायो बोलइ नही, झखि झखि सहु जण जाउ ॥२५१॥

(दूहा)

म जाणसि वीसरीयं, तुह मुह-कमलं विदेस गमणंम्मि ।
सूनो भमइ करंको, जत्थ तुमं जीवियं तत्थ ॥२५२॥

जम्मंतरे न विहडइ, उत्तम महिलाण जं कियं पिम्मं ।
कालंदी कण्ह-विरहे, अज्जवि कालं जलं वहइ ॥२५३॥

(दूहा)

नेह सुकुल नारी तणो, नवि विहडइ प्रिय दिट्ठ ।
ज्यु सूदा-सावलिगा-तणो, जाँणे रंग मजीठ ॥२५४॥

म जाँणे प्रिय मेहगो, दूरि विदेस गयाँह ।
बिमणो वाधइ साजणाँ, ओछो होइ खलांह ॥२५५॥

जोगीसर जोगासणइ, मंत्री जिम आलोच ।
तिण परि सूदा ! ताहरी, आज पडयो सो सोच ॥२५६॥

आज निहोरा अति घणा, नवि लायह सूदो नाम ।
वात न मंडइ कावली, करि लिखीयो चित्रांम ! ॥२५७॥

उंचो लेईनइ जोईयो, सूदा सुदय नरेस ।
जिणि उरि दोइ नारिंग फल, सो तूं कत्थ लहेसि ? ॥२५८॥

"सूदा ! [सावलिगा कहइ], हवइ एवडो स्यो हठ ? ।
मोडी आई मॉनिनी, तिण धरयो मन मठ ! ॥२५९॥

"सूदा ! [सावलिगा कहइ], कुमर न जाँणो कत्थ ।
जिणि कारणि मइं लाईया, छाती चंदन हत्थ ॥२६०॥

नींद्रइ कवण न छेतरया ?, जोवन कुण न विगुत्त ? ।
जो प्रिय भीडूं उरह-स्यूं, तोही सुवइ नचित ! ॥२६१॥

जिम सालूरां सरवरां, जिम धरती अरू मेह ।
चंपावरणा वल्लहां, इम पालीज्जइ नेह" ॥२६२॥

उर भीडइ चुंबन करइ, वलि वलि करइ विषास ।
सूदो अमलि संके लीयों, नारी थई निरास ॥२६३॥

बोलायो बोलइ नहीं, नयणे नींद निपट्ट ।
जाती ए गाहा लिखी, कुमरि मेल्हि कपट्ट ॥२६४॥

"सूदा ! [सावलिंगा कहइ], साची प्रति संसार ।
देखइ देव मिलावडो, पुहपा-नयर-मझारि !" ॥२६५॥

मुख नीसासा मूंकती, नयणे नीर प्रवाह ।
गाहा लिखी पाछी वली, मूंकी मन उच्छाह ॥२६६॥

(चोपई)

आई सावलिंगा आवास । फीकि मनि थई अधिक उदास ।
प्रीय कहइ, "करि आया जात्र ? । बिलखा किम दीसो ?
कहो वात" ॥२६७॥

कुमरि कहइ, "पाली मइं वाच । तोही सगति न मानी साच ,
मूल नगर तुम्ह पुहपावती । देवि कहइ मुझ तिथि तिहाँ हती ॥२६८

देवल नवो करावो तिहां । मूरति करो सरीखी इहाँ ।
तिहाँ मानिसि यात्रा तुम्ह तणी । तब लगि मत भेटे तूं धणी ॥२६९

विलखी हूं तिणि सुणि वालंभ ! । दिन एहवा जायइं किम अंत ? ।
हिवइ हालो नगरी आँपणी । यात्र कराँ जिम देवो तणी" ॥२७०॥

भोजन भाते जीमी जाँन । उपरि दीधां फोफल पान ।
भगति जुगति भल भूषण भेद । ले चाल्यो निज नगर उमेद ॥२७१॥

हिव चाल्यो ते सदयकुमार । अमल ऊनार हूओ तिणवार ।
नींद गई विकसी दुइ नेत । आलस मोडि थयो सावचेत ॥२७२॥

विकस्या कमल सुपरिमल वास । पीली दिसि पूरब सुप्रकास ।
तिणि खिणि मति विकसि पणि तास ।
'हा' मुझ मूक्यो तिणइ निरास ! ॥२७३॥

(दूहा)

पीपल पाँन जु रुगण्या, निसि अांधरी लोई ।
रहि रे हीयडा ! मुद्धि करि, इहां न आवइ कोई ! ॥२७४॥

किहाँ नारी ? तूं किथि गयो ?, रहि हीया, म म भूरि ।
पीड न जाणइ तांहरीं, सहू निज कारिज सूर ॥२७५॥

करियल करियल उर आफरयो, वलि रस्याथनो त्रेह ।
तिसो नेह नारी-तणो, झटकि दिखाडइं छेह ॥२७६॥

निज प्रिय मारइ हत्थसूं, अनाचार आचार ।
नि-सनेही नारी-समो, सुणीयो नहीं संसार ॥२७७॥

नीची गति मति निरति रति, नीचह-सेती नेह ।
ऊंच तणो आदर नहीं, अचरिज त्रियनो एह ! ॥२७८

(यतः)

सीयां तीयाँ पांणीयाँ, इयाँ त्रिहुं एक सभाव ।
ऊंचा ऊंचा परिहरइ, नीचाँ उपरि भाव ॥२७९॥

(दूहा)

रवि-चरीयं गह-चरीयं, तारा-चरीयं च राहु-चरीयं च ।
जाणंति बुद्धिमंता, महिला-चरियं न जाणंति २८०॥

जल-मझे मच्छ पयं, आकासे पंखीयाँ पय-पंती ।
महिलाण पहिथ मग्गं, तिन्नवि लोए न दीसंति ॥२८१॥

(चंद्रायणा)

जाँणकि रंग पतंग, को दिन दुइ च्यार हइ ।
पाबस मास सु पूरन, वलहाँ ठारहइ ।
पूरव प्रेम प्रबाह, कि वहतां ही वहइ ।
परिहाँ, निश्चल नारी नेह, कदेही नाँ रहइ ! ॥२८२॥

मुखि कहइ 'तूं मुझ यार', अरु नहु प्यार हइ ।
जाँणइ मुगधा लोग, किए सहु सार हइ ।
मन तन अवर, अनेरां सूं करइ ? ।
परिहाँ, नारी तणो सनेह, न को जन मन धरइ ॥२८३॥

मांडइ प्रीति अखंड, कि जाँणइ साच हइ ।
आउंगी तुझ पासि विलास, कि मेरी वाच हइ ।
मेल्ही तास निरास, कि और स्यूं भोगवइ ।
परिहाँ, एकणि वार अपार, चरित त्रीय केलवइ ॥२८४॥

एक समि मइं आस, आस की पूरवइ ।
ताकूं दाखि सराप, कि आप सती हुवइ ।
खिणिक दोस, खिणि रोस, खिणिकि इकमाँ वहइ ।
परिहाँ, काती कुत्ती जेम, फिरत्ती तिम रहइ ॥२८५॥

(दूहा)

जीहा मुखि जाती रहइ, नेह न धारइ चित्त ।
तल काठइ गल लेइ नइ, एहवउं नारी-चित्त ॥२८६॥

अणमिलताँ आवी मिलइ, मिलताँ धरइ जु माँन ।
ए गति नारी नी अछइ, सुणिज्यो चतुर सुजांण ॥२८७॥

तिय वेसास मत को करो, तियाँ किसकी-नाँहि ।
मुझ मूक्यो इहाँ विलवतो, रंग रली रस-माँहि ॥२८८॥

ध्रिग तेहनइ धिग मुझनइ, धिग मन जनम धिक्कार ।
वाचा करि आइ नहीं, नीलज नारि निक्कार ॥२८९॥

रोस भरी नइ उठीयो, जंपइ सदयकुमार ।
...................., तिसो त्रियनो पियार ॥२९०॥

आयो तिहाँ ऊठिनइ, सदयकुमर निज गेह ।
पग लडथड भड घूमतो, नारी-स्यूं निस नेह ॥२९१॥

गलइ हार लागी रह्यो, नयरणइ रंग तंबोल ।
कज्जल अहरे देखिनइ, बोलइ निज स्त्रीय बोल ॥२६२॥

"बिरण लग्गइ गलि हार, कि कंत किहाँ पावया ? ।
नयरगे भख्या तंबोल, मुखि नहु भाविया ।
कज्जल कालो रेह, कि दीसइ अहर-तले ॥
परिहां, जइ खाई जइ पर मांस, कि मूंढ म बाँधी गले ! ॥२६३॥

(दूहा)

सुरिग सूदो मनि संकीयो, ईपि सहुव आकार ।
अंत-रंग आलोचिनइ, वाचइ वचन विचारि ॥२६४॥

'रहु रहु' 'मूंच' अयारिग, कि हासा जि न करो ।
आपरग जांघ उघार, लाजां नाँ मरो ।
बालक पट्टा चीर, कि पत्थर किम ताडीयइ ?
परिहां, गायइ गिल्यां रतन्न, उदर क्युं फाडीयइ ? ॥२६५॥

[पुनः स्त्री वाक्यं]

"हमस्यूं छाँडि कि प्रीति, अनेरा-स्यूं करइ ।
हम हइं तुम्हचे दास, और जि न मनि धरइ ।
उहां हइ नेह अछेह, इहां नहु लेखीयइ ।
परिहां, रोटी मोटी कोर, पराई देखियइ" ॥२६६॥

(दूहा)

सुरिग वारगी नारी तरगी, बोल्यो सदयकुमार ।
दुख मन ए भूली गये, ठाँमि ठाँमि करतार ॥२६७॥

(चंद्रायणा)

सारंग नेत सुचंग, काँम नहु भावीया ।
सोवन गयो त्रिगंध, वास नह पावीया ।

नागरवेलि कीय निफल, सफल कीय आंविली।
परिहाँ, राँकाँ दीध रतन्न, विधाता वावली ! ॥२९८॥

(दूहा)

कर भारी पांणी भरी, अम्ह दाँतण नइ सत्थ।
दासी लेइ आंणी दीयइ, कुंअर-ह-केरइ हत्थ ॥२९९॥

कर बे बे भेला कीया, चलू करेवा चाह ।
तेणि समइ नारी तणा, अख्यर दीठ उछाह ॥३००॥

चख लगी तिण चाह-सूं, न लीयइ निमख-मेख ।
"सूरति मूरति आगलि सही, जिम भाविक सुविसेष ॥३०१॥

सावलिंगा आई सही, पाली पूरी प्रीति ।
निरभागी जाग्यो नहीं, तिण ए अख्यर नीति ! ॥३०२॥

फाटि फाटि रे तूं फाँटि तूं, हीया ! हिवइ मर हेसि।
उ देवलउ वा कांमिनी, वलि कत्थ लहेसि ? ॥३०३॥

हीयडा ! फूटि पसाव करि, केता दुख सहेसि ?।
सावलिंगा विरहि सगुण, जीवी काहु करेसि ? ॥३०४॥

(गाहा)

रे हीय वंकि न लज्जसि, नहु जाणी जेण आगया सामा।
अनह किं न कहिज्जइ, सो भूलो चंप लोवि तुम्ह ॥३०५॥

रे हीया ! वज्रह घडीयं, अहवा घड़ीयं खिवज्ज सारित्थं।
वल्लह-वियोग काले, किं न हुयं खंड खंडेण ? ॥३०६॥

रे नयणां ! तुम्ह धिग्ग हूअ, नवि लखी आई नारि ।
पेम उपायो पहिल थी, किण कारण विण कारि ? ३०७॥

(दूहा)

करवतडा करतार, जो सिर दीजइ ताहरइ ।
तो तूं जांणइ सार, वेदन वीछडीयां-तणी ॥३१०॥

हसत वदन हे जालवी, हरखवंत हितकार ।
नवरंगी नारी सुणी, किहाँ पाँमिस करतार ॥३११॥

चंदा-वयणी मृग-नयणि, वे पख-वंस-विशुद्ध ।
हंसि हंसि नेह ज दाखवइ, मेलि विधाता मुद्ध ॥३१२॥

बहु गुणवंती शसि-मुखी, रंगि रमे रस-लुद्ध ।
चंपक-वरणी अति चतुर, मेलि विधाता ! मुद्ध ॥३१३॥

दीन हुवइ कर देखि, वेदन अंगि न खमाइ ।
नीकालइ नीसास-मिसि, पिणि नवि आघी जाइ ॥३१४॥

एक दुखीआं वैरागीयां, जो नीसास न हुंति ।
हीयडो रत्न-तलाब ज्यूं, फुट्ट वि दहदिसि जंति ॥३१५॥

(चौपई)

नारो मालमु लोक परिवार, हय गय रथ पायक विण पार ।
चंदन चीर पटंबर वास, सूंधा वास सुवास विचार ॥३१६॥

माय ताय निज राज भूं काज, बंधव मित्र कुटंबह लाज ।
सहू मूक्या वीर तेवइ वाग, कंचुक जिणि परि मूकइ नाग ॥३१७

नीकलीयो मूंकी नरदेव, सार्वलिगा-री करिवा सेव ।
कर धरि एक करवाल सहाय, प्रिया-नेह बीजो संगि थाइ ॥३१८॥

(गाहा)

किज्जइ अकज्ज करणं, छंडीज्जइ वास सहास.... ।
धरि धरि भीख भमिज्जइ, किं पुण महु चुज्जए नेहो ॥३१९॥

(चौपई)

लंघइ वाट घाट वन वाग, लंघइ विण सायर विण थाग ।
निसि चालइ वाटइ वहइ, पलक एक लगि किहीं नवि रहइ ॥३२०॥

वाट वहत आव्यउ तिणवार, कामावतीपुर सदयकुमार ।
तिहां छइ जोगी-नो विश्राम, कुअर आय पूछइ निज गाम ॥३२१॥

'जोग' 'जोग' करतो जागीयो, आलस मोडि मुखि वोलीयो ।
सुणि बाला बाला विरहाल, गोरख जागइ दोन दयाल ॥३२२॥

(दूहा)

पंथी चालि, न बिलंब करि, रहसि न राति दीहेण ।
सावलिंगा सालइ हीयइ, श्री गोरख जागेण ॥३२३॥

(चौपई)

आयस वचन सुणी हरखीयो, कुमर तणो दुख सवि गयो ।
ठाँमि ठामि गोरख-नो नांम, जंपइ सदयकुमर पणि ताँम ॥३२४॥

मारग श्रम तृस व्यापी घणी, ईंच्छा मनि थई पांणी तणी ।
सर दीठो भरीयो जलसार, नव तरूणी जिहां रहइ पणिहार ।३२५।

जल निरखी हरख्यो निज चित्त, जाँण्यो पाँणी एह प्रवित्त ।
आखर गहलण बीहइ करी, मुख स्यूं नीर पीयइ सुख धरी ॥३२६॥

(दूहा)

गोडा दुइ नीचा करी, धर टेके दुइ हत्थ ।
नीर पीयइ मुख-स्यूं कुमर, जाँणि वयल्लां नत्थ ॥३२७॥

तिणि सरि पाँणी भरण-नूं, वहइ पणिहार अनंत ।
माहो-माँहि निरखी कहइ, ए केहो विरतंत? ॥३२८॥

चंगो माढू हे सखी, पंथी किसी अवत्थ ? ।
पसूआं जिम पाँणी पीयइ, नीर न मेलइ हत्थ ॥३२९॥

रातो थों परनारि-स्यूं, चलण कह्यो थो सत्थ ।
ड वारू नी इण लूहीयो, कज्जल-लग्गो हत्थ ॥३३०॥

चंगो माढू हे सखी, कांइक उलू अंगि ।
कर राखइ कर भींजवइ, पांणी पीयइ कुढंगि ॥३३१॥

पसुआं पांणी नां पीयइ, मृग जिम पीयइ मृगेण ।
कइ कर कुंकुम गह लीया, कइ गाहा लिखी रसेण ॥३३२॥

चंगो माढू हे सखी, सुंदर तन सुकमाल ।
पसुआँ जिम पाँणी पीयइ, पांणी सरवर-पालि ॥३३३॥

रातो थो परनारि-सूं, आवण कह्यो थो रत्त ।
डवा आईउ न जाग्गीयो, तिण अकखर लिखीया हत्थ ॥३३४॥

(चौपई)

शीतल छाया तिह सुरसाल, पणहट विट पण हारी बाल ।
खिण इक लगि तिहाँ, सारी कुमरी व्याकुल थियाँ ॥३३५॥

(दूहा)

"पंथी चालि, नवि लंवि करि, ... ॥३३६॥

(चौपई)

इम कहिनइ आघु संचरइ, पुहपावती चख दीठी नरइ ।
पुर बाहरि सरवरनी पालि, सूतो देवल पडीय वियाल ॥३३७॥
.... , पंथोडा देवल सरण ॥३३८॥

(दूहा)

"कहा मुझ मंदिर मालीया, हय गयह सम हजार ।
ग्रा हुँ ज सूतो एकलो, जोज्यो नेह विचार ॥३३९॥

सूरवीर साहस सकज, जस जस रस जग-मझि ।
नर ते पणि नेहइ निपट, विकल हुवइ विण-वुज्झि ॥३४०॥

गति मति छति सत महत गुण, दीपति सुन्दर देह ।
खिण खिण सगला खूटनइ, नारी—केरो नेह" ॥३४१॥

नीसासा मूकइ सवल, निसा विहावइ निट्ट ।
वर धण देखुं नाह विण, धण विण नाह न दिट्ठ ॥३४२॥

बिरहानल वेध्यो विहल, साल्यो कुंमर साल ।
बिलवइ सूतो मूध बिण, सदय थयो बिहबाल ॥३४३॥

सो कोवि नत्थी सयणो, जस्स कहिज्जंति हियय दुखकांइ ।
ग्रावंति जंति कांठ, पुणो वितथेव तत्थेव ॥३४४॥

(दूहा)

केलि वेलि मिलि करण, सगुणी अति ससनेह ।
रस-लूधी रमती रमणि, देहि विधाता तेह ॥३४५॥

सिरज्या किमि संसार-मइ, विण त्रिय-रसइ छयल्ल ।
रूप कला गुणनइ अनइ, काँ नवि कीया वयल्ल ? ॥३४६॥

केता सुणि विह कूकुआ, सांमी करूं पुकार ।
मेलि केलि करती मुझनइ, नवल सुरंगी नारि ॥३४७॥

(चौपई)

इम अनेक तिहाँ करती विलाप, पुण्यवंत लागा किरि पाप ।
कसमस करि ऊगायो भांण, गई राति फूल्यो सुविहाण ॥३४८॥

ऊठ्यो सदयकुमार दुख घणउ, उमाहो पणि देखण-तणउ ।
करि दाँतण कुरला ससि सार, तिहाँ थी आयो नगर-मझारि ।३४९।

गाँम नाँम सगलो पूछीयो, कुंभकार घरि डेरो लीयो ।
ततखिण गृह सावलिगा तणइ, चुणीयइ अंग रहण आपणइ ।३५०

लागइ तिहां सिलावट घणी, वनि जे अरथी रोजी तणी ।
सावलिगा नइ तस भरतार, चोपड खेलइ मेइलइ मझारि ॥३५१॥

फिरयो पुर-मांहि कुमर प्रभाति, देखण तणी न पूजइ घाति ।
कुमरी देखण अलजोयो घणो, कीध्यो वेस मजूराँ-तणो ॥३५२॥

तेवे जिहां खेलइ नर नारि, लागइ जण जिण महल अपार ।
पूछि मजूरी लागो तेह, खेलत त्रीय दीठी ससनेह ॥३५३॥

(दूहा)

खेलंतां दीठी खरी, सावलिगा ससनेह ।
हरखित बोल्यो हेजस्यूं, जाणा विण निज देह ॥३५४॥

"सावलिगा !" सूदो कहइ, ओ चंपलो चितारि ।
नयणां तणा पसाव करि, भइ वइदानो गारि ॥३५५॥

महल सहल मइं मुकुले, खेलत पासा रारि ।
तुरित त्रीया सुणि वचन, ते संकी चित-मझारि ॥३५६॥

जांण्यो रखे जणावसी, कोइक एहवी किज्ज ।
पासा मिस बोली प्रिया, राखण लज नइ कज्ज ॥३५७॥

"रे रे पासा गमण करि, बांधी जोडी म मारि।
पासो तो परवसि पड्यो, सकइ तो सीस ऊगारि" ॥३५८॥

(चोपई)

इम कहिनइ बोलंइ 'पो-बारि', प्रियनइकहइ, हिवइ सारी मारि ।
सूदो वयण सुणी तेहनइ, मतउ करइ विच त्रिय नेहनइ ॥३५९॥

महल-थकी वेस निवारि, निज डेरे आयो तिण वार ।
आई वेस कीधा अद्भूत, मारि लंगोटो लगाइ भमूति ॥३६०॥

करि कुतका धरि कोतिक काजि, सेख भेख बणीयो महाराज ।
धरि कर-महि खप्पर सुविसेस, घावि तिणइ धरि कहइ 'अलेख' ३६१

कण घातण एक आई दास, धुरि 'माई मूंडी' कहइ तास ।
एक अवरले आई भीख, तिण नूं पणि ते दीधी सीख ॥३६२॥

हाकाँ करि कूदइ हल फलइ, गाल वजावइ नइ ऊछलइ ।
सार्वलिगा-विण धरनउ साथ, कण घइ पणि नवि मंडइ हाथ ।३६३

न ल्यइ दांन किणही हाथ नो, थयो दुमन मन सहु साथनो ।
युंही जांण न द्यॉ तेहनइ, 'जिम ल्यइ तिम आपो एहनइ' ॥३६४॥

यतः

अतिथि यस्य भग्नाशो, गृहात्प्रतिनिवर्तते ।
स तैव पातकं दत्वा, पुण्यमादाय गच्छति ॥३६५॥

(दूहा)

ततखिण सार्वालिगा तुरत, सरस सुरंगी साल ।
लेइ आवी देवा भणी, हाथे थाल विसाल ॥३६६॥

उवां दायक उवो लायक, उपर नीचइ हत्थ ।
कर को नवि पाछो करइ, जाँणकि लोभी सत्थ ॥३६७॥

नारी निरखे ना हले, नारी निरख्यो नाह ।
प्रेमोदधि पेखत तिहाँ, उलट्यो घणूं अथाह ॥३६८॥

ओर ओर निरखइ नहीं, न करइ अवर विचार ।
उ उणमइं डवा तेहमइं, थिगत थया सुबिकार ॥३६९॥

लख देखइ लख जण हसइ, लख बारइ लख हेलि ।
लुब्रध थका नवि क्यु लखइ, मिलिया नयण मेलि ॥३७०॥

नाँ ओ ल्यइ नाँ उवाँ दीयइ, इयुंहि कर जोडि ।
ते भख लेवानइ तुरत, कागा पडइ करोडि ॥३७१॥

तव तिहाँ तिण राजा तणी, कुंअरी उपरि गेह ।
काग पडंता देखिनइ, आपइं वचन सु एह ॥३७२॥

"इण नगरी मुरिख वसइ, पंडित वसइ न कोइ ।
कर उपरि कागा भखइ 'को को' 'करइ न कोई' ॥३७३॥

वाँणी सुणी तिणकुं अवरनी, कुंवरइ धरीयो कोप ।
बीजो को बोल्यो नहीं, इणिनइ केही ओप ॥३७४॥

पुहपावती-थी निज पुरइ, जाउं करूं बल जोर ।
मो रूठइ इण कुंवर नइ, लागाँ पाप अघोर ॥३७५॥

आयो नगरी बहार ।
चोल करी निज चख बिन्हे, आइ मिल्या असवार ॥३७६॥

चीतवतां ई चित्त-मइं, कटक नहीं को ग्यान ।
हीसा नेह हय थट घटे, स आई मिल्यो परधांन ॥३७७॥

सुत वांसइ मूक्यो पिता, हूई तस पूगी हाँम ।
पुन्य प्रकार पोते प्रबल, मनवंछित सहु काँम ॥३७८॥

आइ मिलइ चित चाहतां, लिखिओ कुंवर लेख ।
पूछइ निज परधान तूं, वाँचइ विगति विशेष ॥३७९॥

पुरे भोजराजा दिसे, सो जाँणे सहु वाच ।
दूत जिकूं अम्ह दाखवइ, नगर-मुहे नाराच ॥३८०॥

नही तो ऊडंतो लखे, आयो पुरि अधिकार ।
प्रभु-कागल ले दूत सों, आप तणउ आचार ॥३८१॥

सामि काँमि आखइ करी, इम आखइ अम्ह साथि ।
"मुझ राजा सुणि राजवी!, आपे एणइ साथ ॥३८२॥

कुमरी तुझ वाँधी करो, जो न कीयउ ए काज ।
खुसाँय वे-खुसीये करी, रूठो सही जमराज!" ॥३८३॥

ता तूं जाँणे तो भणी, सहीयो वयण न तास ।
सुणि राजा अति कोपीयो, अनइ पर-आस ॥३८४॥

सीह कदेई नाँ सहइ पाखर

यतः ॥३८५॥

तेजी न खमइ ताजणो,........

जा जा रे चर जाह तूं, तोस्यूं केही रीस ? ।
आयो जाँणइ सदय नं, पूरण भोज जगीस ॥३८६॥

(चोपई)

भोजराज रण-भू भ.ण काज, कीधो सगलो ही तव साज ।
गिर समवडि गड हुंति, मदोन्मत्त बहु मधुप भ्रमंति ॥३८७॥

काठी अति ऊंचा कूदणा, ते तेजो देखीता भला ।
चंचल चपल चलत चतुरंग, चंग तुरंग कि गंग तरंग ॥३८८॥

पयदल सबल विमल चलवंत, चढीयो नृप दल मेलि अनंत ।
सदयकुमार चढियो इणि वार, सिंधूडइ वाजंतइ सार ॥३८९॥

कंचुक कवच कसइ कसमसइ, धरे धीर पणि अंग धसइ ।
साँमल वरण धरण मद धीर, सुभट घटा घन घट गंभीर ॥३९०॥

(दूहा)

अनए रावण सम समुद, मदवारण मातग ।
चढीयो तिण गज सदय नृप, सिर सिंदूर सुरंग ॥३९१॥

बेऊं दल मिलिया बहसि, मिलिया बे रणभूमि ।
परसिरि खुरसांणे चढे, हूअ हथियार सधूम ॥३९२॥

थगति इंद्र सुरगण सकल, सूरिज थयो सकस्स ।
धर कंपइ गिर थरहरह, इसीयाँ सूराँ रस ॥३९३॥

धर धूजइ दल धूंकलइ, कायर चित्त कंपाइ ।
सूर पतंगा रंग-स्यूं, झुकि झुकि मांझि झंपाइ ॥३८३॥

धड कूदइ सिर ऊछलइ, गूथी हर वरमाल ।
सगति रगत पाँमी करी, धाइ तिण धकचाल ॥३९४॥

(चौपई)

असि कृपाँण तोमर अर कूंत, तीर वहइ किरि गगन सकूंत ।
सुभट-सुभट गज-गज अस-आस, वहइ खाल रगता मिष रास ३६५

वहइ वेपू डी दस बार, सदय कटक सकस तिणवार ।
भाजे कटक गयो तब भागि, छूटो भोज सुदय पगि लागि ॥३९६॥

आँण्यो सदय भोजइ निज पुरो, परणाई सा निज कुंअरी ।
कर-मूंकावण करकेकांण, द्यइ पण कुंअर न करइ प्रमांण ।३९७

कुंवर कहइ एहने घरवार, जे छइ नर नारी परिवार ।
पील्हो सहु घाणी मंहि घाति, मत राखो एहनी तिल जाति ॥३९८॥

सदय कहइ द्यो मुझ ससनेह, वांत्री धनदत्त सेव सगेह ।
बात गैर कीधी तब तास," सेठि बांधि आण्यो नृप पासि ॥३९९॥

सेठ कहइ "ल्यो धन भण्डार, खूंन बिना ए वडी मारि ।
भोजराज परधानि फिरइ," इसी बात साहिब किम करइ ॥४००॥

आखइ कुमर सुणो नृप बात, सावलिगा नारी विख्यात ।
जो द्यतेइह तो छूटो एह, आपू धन नइ सूनूं गेह ॥४०१॥

भोजराज धनदत्त-नइं कह्यो, सेठइ पणि ते सहु सर दह्यो ।
समझाया सुत बंधव याति, सगले ही मांनइ ए बात ॥४०२॥

(श्लोक)

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामार्थे च कुलं त्यजेत् ।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे सकलं त्यजेत् ॥४०३॥

(दूहा)

"पायो सुख इणथी नहीं, करे नवि धरीयो तिण नेह।
व्रतग्राही परि बोलव्या, इणि दिन अपणइ गेह" ॥४०४॥

(चौपई)

इम आलोचि दोधी सा बाल, नर नारी मिलिया सु-रसाल।
परहत्थ चढी ए कीधी मोल, जोज्यो इहां विधाता-खेल ॥४०५॥

(दूहा)

किण-रो ही किणनइ दीयइ, आंणइ बलि तसु पासि ।
जन कोई न विलखि सकइ, जे विधि तणउ बिलास ॥४०६॥

(गाहा)

राउ करेई रंको, रंको पुण करइ राउ सारिस्सो ।
जंन धरिज्जइ हीयए, विहिणा तं किज्जए सब्ब ॥४०७॥

कह मंती कह राया, कह उब्भायस्स तहय अभयणं ।
कह पुष्फावई मिलणं, पिच्छिबह विहिए रि सासंती ॥४०८॥

नियडं करेइ दूरे, दूरत्थं चेव आणए नियडं ।
जह सो वाय नरिंदो, मिलीयो विहि विलसीया तत्थ ॥४०९॥

जं चंदणम्मि अहिणो, संभा समयम्मि मायरंवत्था ।
मिलियो बहु दिवसाउ, तहैव कुमरो रमारम्भं ॥४१०॥

(दूहा)

"सूदा ! [सावलिगा कहइ"] धन्न सुवासर आज ।
प्रीतम मिलिय घृति हुई, कज्जाँ सहु सरीयां ज ॥४११॥
पूनिम-चाँद मयंक जिम, दिसि च्यारे फलीयाँह ।

(चोपई)

ले रमणी उच्छक अति घणइ, चाल्यो कुमर नगर आपणइ ।
चढि साथि सेना अति घणा, सुणि लीयइ ततखिण सांवली ॥४१२॥

मादल संख दमामा वीण, मंगल गीत अनइ जुग मीन ।
पुत्र सहित युवती स्त्री गाई, विप्र तिलक मुखि वेद सुहाई ॥४१३॥

हाथी, पूरण घट कन्यका, दधि फल पुष्फ दीप वन्हिका ।
वेस्या सूहव स्त्री सुकमाल, पुलकित नयणी वयण रसाल ॥४१४॥

हरित द्रोव अक्षत ऊजला, सपलाँण तेजी अति भला ।
भद्र पीठ चामर नइ छत्र, गोरोचन घृत मइ सितपत्र ॥४१५॥

इम अनेक तसु नगर मझार. सकुन थया अति घण सुखकार ।
दखिण-थी वामी दिसि जाई, मंगल तो कारिज सिध थाई ॥४१६॥

(दूहा)

अंगत धूणह मंडलह, जउ निग्गमण करंति ।
जे धण नाह विवज्जीया, घरि कदही नावंति ॥४१७॥

जउ मंडल दाहिण सरइ, नयर-प्रवेस धराँह ।
तिहां जयमंगल सिर विजय, रिद्धि वृद्धि नराँह ॥४१८॥

ग्रांम प्रवेसि त्रिया-कजि, भय करइ नीसारि ।
दाहिण सुण होए रसो, लीजइ सार विसार ॥४१६॥

वायस जिमणा ऊतरइ, हुवइ सावड़ू ज स्वांन ।
सावलिगा "[सूदो कहइ], पगि पगि पूरिस प्रधांन ॥४२०॥

एको वेढी लूकडी, अर सावड़ू सियाल ।
सावलिगा [सूदो कहइ], फलइ मनोरथ माल ॥४२१॥

डावो राजा जीमणी जइ भैरख किल लाइ ।
सावलिगा [सूदो कहइ] अफल्या वृक्ष फलांइ ॥४२२॥

वानर नकुल रू चीबरी, वले दाहिणो चास ।
साबलिगा ! [सूदो कहइ], फलइ मनां-री आस ॥४२३॥

सड वह सार सखर तुरी, डावा लाली हुंति ।
सावलिगा [सूदो कहइ], अफल्यां वृक्ष फलंति ॥४२४॥

स्याल सूण काली चडी, वायस राजा तेम ।
ए सुंदरि वामा सदा, दीयइ अचिंत्यउ प्रेम ॥४२५॥

(दूहा)

जंबू हास मयूरे, भैरदा हेत वे हेव नोन लेय ।
दसण मेव पसिद्धं, दाहिणे सब वास वसं नीपती ॥४२६॥

खर खमावि सहर जीमणो, डावा लाली हुंति ।
कंत मलेज्यो संबलो, संवल तेह दीयंति ॥४२७॥

कुंभ बरे वो चीवरी, हणमंत नइ हिरणांह ।
एता लेई जीमणा, बीजा सहु वामाह ॥४२८॥

डावा उपरि जीमणो, जो वहि भैरव हुंति ।
सार्वलिगा ! [सूदो कहइ , कारिज सवे सरंति ॥४२६॥

जो परभाते स्वेत चिट, वामी दाहिण जाइ ।
सार्वलिगा ! [सूदो कहइ], लाभइ राज-पसाइ ॥४३०॥

डावा भला न जीमणा, लाली जरख सोनार ।
फेकारी बोली छुटी, चिहुं दिसि एक विचार ॥४३१॥

भखप भणंती उदो, जोगणि जीमणी जाई ।
सार्वलिगा ! [सूदो कहइ], संपति सुख बहु थाई ॥४३२॥

(गाथा)

वामोय खरो, वामोय वायसो, भहथ चेव भेलंकी ।
वामा थूअड रडियं, पुत्रोहिं विण ना पावंति ॥४३३॥

(श्लोक)

करे दंड धरइ सोम,यं समभाव प्रसन्न-दृक् ।
'धर्म लाभँ' वदम् सम्यक्, श्रेष्ठः श्वेताम्बरः स्भृतः ॥४३४॥

विप्रः सतिलकः श्रेष्टः, सदंडो मुनिपुंगवः ।
नापितो दर्पण-करो, रजको धौतशिकः शुभः ॥४३५॥

(चौपई)

इम अनेक शुम शुकने करी, आयउ सुदयकुमर निज पुरी ।
विलसइ दिन दिन सुख सुविलास,रलियाला निस दिन रंग रास४३६

(गाथा)

जहर मैं न लिणि भमरो, रेवातईय कुंजरो रमए ।
सार्वलिगा मरिंदो, रमइ तह चेव दिण रत्ति ॥४३७॥

माणस-सरे स हंसो, रमति कमलांणि नीर पूरम्मि ।
अहिणोहि चंदण वणे, ए सितह चेव तस ए राया ॥४३८॥

(दूहा)

रति-स्यूं जिम रतिपति रमइ, इंद्राणी जिम इंद ।
महादेव गोरी परइं, विलसइ सुख आणंद ॥४३९॥

संसारी सुख अनुदिनइ, बिलसइ ते वरो याँम ।
लखइ न ऊगों आथम्यो, करइ कतूहल काम ॥४४०॥

(चौपई)

वरस मास सम दिन सम मास, दिवस मास प्रहर परि उलास ।
प्रहर पलक पल खिण सम जांण, बोलावइ सुख मइं गुणजांण ४४१

दिन दिन प्रीति वधइ अति घणी, ओछी नवि हुवइ मन तणी ।
अधिक अधिक वाधइ जंस प्यार, ए सुणिज्यो उत्तम आचार ॥४४२

(श्लोक)

सज्जनानां गुणज्ञानां, महतां मानसोद्भवा ।
सर्व्वदा सुखदा प्रीति, वर्द्धते क्षीयते न च ॥४४३॥

(दूहा)

घण-लच्छी सु-गुणी तरुणि, सयण सरस सुख प्रीति ।
पुन्य बिना नरि पामीयइ, कहइ कवियण ए नीति ॥४४४॥

कबहु रति हासी सुरस, कबहीं करइ गुण ग्यांन ।
कबहू बहु प्रेमि करी, बूझइ मन संधान ॥४४५॥

कबहू बोलइ वक्र विधि, कबहु कोक की बात ।
कबहु पहेली बहु कहइ, विलसइ सुख बहु भांति ॥४४६॥

कवहू हय फेरइ हरखि, कबहूं गज रमणीक ।
सांमी ना वइसी करी, बूझइ प्रेम त्रिभीक ॥४४७॥

(यत:)

पीयरस तीय-रस सप्रसन्न रस, हय-रस हीयइ न जास ।
संकल-बंधा सुणह-ज्यूं, गयो जंमारो तास ॥४४८॥

उवा रजवटि उह रसिकता, दोउं मनज विलास ।
सार्वलिंगा उर थकी भए, पुत्र च्यारि सुप्रकाश ॥४४९॥

रीति नीति राजा रमइ, पासइ च्यारे पुत्र ।
मानूं हेमाचल मिले, दिग्गज च्यारि पउत्त ॥४५०॥

सदयवच्छ राजा सुपरि, भांमणि-स्यूं वहु भाव ।
प्रतप्पइ क्यारि पुत्र-स्यूं, दिन दिन दोढइ दाव ॥४५१॥

(चोपई)

श्रीखरतर गच्छ गगन दिणंद, प्रतपइ श्रीजिनहर्ष सुरिंद ।
शिष्य तास बहु विबुध विचार, दीपक दयारत्न दिनकार ॥४५२॥

मुनि कीरति-वरधन शिष्य तासु, बंधव जे राखण रंग राशि ।
गुरू अनुमति निअ मति उल्हास, एह कीयउ मइं प्रथम अभ्यास ४५३

पामइ नर पदमिणि सुविलास, पदमणि पामइ नर सुख वास ।
भणतां लाभइ बंछित भोग, सुणतां प्रीतम-तणउ संयोग ॥४५४॥

वालम प्रेम तणी विरहणी, जेहना बलि परदेसइ धणी ।
रति-वंच्छक जो निसुणइ सदा, पांमइ पदि पदि सुख संपदा ॥४५५॥

९ ७ ६ १

संवत निधि मुनि रस ससी (१६७९), विजयदसम ससिबार।
चर चाहि चोपई रची, मुनि केसव सुविचार ॥४५६॥
वेधक जो वाचइ सुणइ हुई तस वंछित हांम।
ज्यूं सावलिगा सुख लह्यो, सदय मिल्यो सुभ धांम ॥४५७॥
तब मइ यह रचना रची, कविजन परम कृपाल।
सुणि कि सीखहु रसिक जन, कीज्यो दया दयाल ॥४५८॥

इति श्री सदयवत्ससावलिगा चउपई सम्पूर्णं।



टिप्पणी

मंगलाचरण में क्रमानुसार ओंकार, ब्रह्माणी, सरस्वती, गौरीनंदन गणेश और, 'पूर्व सूरि' कहने योग्य कवियोंको प्रबंधकारने वंदन किया है।

कड़ी १ - **महामाई**-महामातृका।

६ **खित्तीय**-क्षत्रिय। **पहु**-प्रभु।

७ **पत्थतई**-प्रार्थयताम्। प्रार्थना करने वालों का अभिलाष (अर्थं) पूर्ण करता हैं।

८ **चउवेंई**-चतुर्वेदी–चौवे।

९ **निदण**–निर्धन। **कणवितिया जीवो**-कण वृतिआजीवी। देखिये कड़ी २४, कुलवित्ति।

घरणि-गृहिणी। **नराहिव** -नराधिप।

पच्चूसे-प्रत्यूषे। प्रभात में।

१० **पयासियं**-प्रकाशितं।

११ **सुविज्जउ**-सुविद्यः।

१२ **प्रच्छइ**-पृच्छति। **जंपइ**–कथयति। कथ् धातुका प्राकृत आदेश। दिट्ठि-दृष्टि।

१६ **बरलिउ**-उक्तवान्। तुम जो बके हो।

२० **बिह-पाहिइं**-तीन पेर वालेसे (अधिक)।

२२ **सरिस** सदृश। देखिये, 'सुपुरिस-सरिसी' कडी १३।

२३ **भुंहिरइ** (सं.) भूमिगृहम्-भूमिहरं (गु.) भोंयरू।

२४ **अलीअ** (सं. अलीक)-मिथ्या। (गु.) अेले, आले,-आलें। देखिये 'आलि,' कड़ी ९८।

२५ **तिलय नइ ठामि**-तिलकनइ ठामि-ललाटे।

२७ **मुणइ**-संज्ञा धातुका आदेश। **गज-पाखलि**-गजके पक्षमें आसपास

२९ **सलसला सकइ**–हाली चाली सकइ।

लिखिचित्रामि-(सं.) चित्र+कर्म (प्रा.) चित-अम्म, चित्राम ।

३१ **धाइ**—'धाइ' वांचिये । (सं धावति) **किरि**-उत्प्रेक्षाके सूचक पद ।

३२ **संकल**- (सं.) शृङ्खला । **खार**-अणी ।

३३ **पगर**-(सं.) प्रकर—समूह ।

३४ **रेवणी**-(सं.) रेव् धातुसे ।

लाखइ-इनाखइ । 'न' का 'ल' ।

३५ **दोसी**-(प्रा. दोसिसे,सं. दूष्य-वस्त्र,दूष्येन व्यवहारित स. दौष्यिकः) कप्पड के व्यापारी ।

परिखि-परीक्षकः। सुन्ना चाँदी के ।

फडीआ-(फा.) अन्न विक्रेता । **फोफलीआ**—(सं.) पूग फल (प्रा.) पोफल (जू.-गू.) फोफल, उनके व्यापारी । **सार**- (सं.) सहकार, (प्रा.) सहआर, सार, साहाय्य, रक्षा ।

३६ **हालकलोल**-(प्रा. हल्लकल्लोल)

पोतां—(सं. पोतानि) वस्त्र । **किरियाणां**-(सं.क्रयांणकानि)

३७ **पाधरि**-(सं.) प्राध्वरे । सरल मर्गा में । **लूसइ**-लूटे ।

सीकिइं-थ्यां-(सं.) शिक्रदे ।

३८ **गयंद**-(सं.) गजेन्द्र । **सुर-हट**—सुरा के हाट ।

३९ **पंचायण**-(सं.) पंचानन, सिंह । **पाखरिउ**-स्वारी किया हुआ । प्रक्षरितः

४० **सुंडाहल**-(सं.) शुंडाफल, दन्तूशल ।

४२ **पसाउ**-(सं.) प्रसाद, भेट-रूप पदार्थ ।

४४ **नवबारहि**-(सं.) द्वार । देखिये, गीता । 'नवद्वारे पुरे गेहैं' ।

आधरणि—(सं.) अग्रगर्भिणी,पहली बार गर्भ धारण करनेवाली कुलस्त्री ।

धवल-धूणि—धवल, मंगल गीत के ध्वनि (धूणि) ।

वेअ-वेद ।

४६ **सइंहथिइं**-(सं.) सीमन्त केशों का ग्रथन । देखिये कड़ी ८४ ।
स्वयं हस्तेन

पस पूरइ-(सं.) प्रसृति। मंगल श्रीफल और अन्य द्रव्यों से हस्ततल का पूरना।

४७ **घाट**-रेशम का वस्त्र।

४८ **असुण**-(सं.) शकुन, (प्रा. सउण) अपशकुन। देखिये कड़ी ८१।

४० **गजर**-(सं.) गर्जना। **सगूं सणीजूं**-सं. स्वकम्, सगूं। सं. स्नेह जं-सनेह,सणेहजं। देखिये कड़ी ९०।

४१ **राउत**-सं. राजपुत्र, प्रा. रा+उत्त।

वसह विशुद्ध- (सं. वंशस्य) विशुद्ध वंश के।

४३ **आहदि अहंग**-युद्ध अभंग।

५४ **जूवटइ**-(सं. द्यूत+वर्त्म, प्रा. जूयवट्ट) द्यूत मार्ग, द्यूतस्थान।

पहुबच्छ-जाइ-प्रभुवत्स जातः. प्रभुवत्स का जाया, सदयवत्स।

दूहवइ-(सं.) दुःखयति। **डारिउ**-डर बताया।

५५ **बाहर**-साहाय्य।

५७ **जम-मुहि**-यममुखे।

५९ **असिमर**-'असिवर' चाहिये। असिओंमें श्रेष्ठ। देखो कड़ी १४६

६० **करिमालि**-(सं.) कारवालेन।

६२ **मेगल**-(सं.) मदकल, मदसे कल मनोहर हस्ति। और 'मदगल,' जिसके गंडस्थल से मद गलता है।

पवरिस पार-(सं.) प्रवर्षका पार।

६४ **पुहव्व**-(सं.) पृथिवी, प्रा, पुहवी, पृथ्वी।

६५ **समोपी**-(सं. समर्प) सौंप दी। **जुहार**-(सं. जयकार) प्रणाम।

बिमणउ-(सं.) द्विगुणं, (प्रा.) विउणउ, दुपट्ट।

६८ **लज्जरयउ**-पढ़िये। लज्जित हुआ। देखियें कड़ी ६९।

तीसरी पंक्ति-सुधार के पढ़िये। गजगजणं। लज्ज जइ (लज्जि किमइ।'

चतुर्थ पंक्ति-सुधारके पढ़िये। 'किम कि जय-सद्द सुसमर तिमइ

७० **राणिमनइ**-'राणिम नइ' पढ़िये,राजत्व, राणाका पद 'राणिम'।

७१ **पबाडउ**-(सं.) प्रवाद प्रशस्ति ।

७१ **पसाइं**-प्रसादेन । कृपा सें । **पहीस**-(सं.) पृथ्वीश ।

७३ **चाचरि**-(स.) चत्वर, अगन में । लुहुड (लहुड) पणा (सं.) लधुकत्वेन, छोटेपण । **अंगी-करू** अगीकरू । देखिए कड़ी ८७ ।

७९ **गूडीय बन्नर वालि**-(सं. वन्दनमाला) देखिये । नंददासकृत मानमंजरी । "क्षुद्रावलि जनु मदनगृह.बांधा वंदनमाल" । छोटी धजा और तोरण ।

अगालि (स:) अकाले ।

८० **बद्धावी** (सं.)वर्धापन, (प्रा.) वद्धावणी वधावा निमित्त ।

पडसद्दे-(सं) प्रतिशब्द, पडधा ।

८१ **कइबार**-सत्कार ।

८३ **कणय**-(सं.) कनक, सुवर्ण । **कच्छाहि केकाण**-कच्छ देश के प्रसिद्ध अश्व ।

८५ **मुत्ताहल**-(सं) मुक्ताफल, मोती ।

८६ **मुहुत्ता**-(स.) महामात्र, अथवा महत्तर से संवधित मुख्यमंत्रीं । महूंतक, महेत्ता, मुथा आदि अपभ्रंश रूप प्राप्त है।

भूप जमलउ (सं.) यमल; वरावरीके, एक जोड़ीके, ऐक सरीखे ।

९१ **रूसइ**-(सं.) रुष धातु रोष करे ।

९२ **मतिपयइपणूं**-(स.) मंत्री पद । इधर षष्ठीके द्विर्भाव प्रयुक्त हैं । 'ह' (स्य) ओर 'पणू' (सं त्वन, पण) ।

९३ **पाली**-एक नाप जिसमें सात सेर कच्चा रहता है ।

अरक-(स.) अर्क-सूर्य ।

९५ **कालमूहुअ**-(स. कालमुख:)श्याम वर्ण: ।

९६ **ताग**- अंत ।

१०० **अहिठाणि**-'आ' प्रतिका पाठ 'अप्पाणि' विशेष युक्त है । सं. अधिष्ठान । **उलग**-सेवा ।

१०३ **सुरक**-सु रक सु-शत पढ़िये । सुतरां रंक: अत्यंत रंक, ऐसा अर्थ

भी हो सकता है।

चितारयण-चितारत्न, चिंतामणि। जो चिंतवन करे सो प्राप्त कराने वाला अमूल मणि। **कित्तउ**-(स. कियत्), कितना भी। **बीय मयक**(स.) द्वितीया (बीज बीय) का मयंक (सं. मृगांक), चन्द्र। शुक्ल द्वितीया की चंत्रलेखा घड़ी भर के लिए दृश्यमान होती है।

१०६ **धमी धमाविउ**-धमीधमाविउ (एक शब्द), धमधमाया।

सदस्यबत्स-'सदयवत्स' पढ़िये।

१०७ **ऊलग**- सेवा।

जुहार जयकार, जयहार, जउहार, जुहार, प्रणाम।

१०८ **रउद्द**- रौद्र, रुद्र स्वरूप, भयंकर।

हासमिसिइ-(स. हास्यमिषेण) हास्य का निमित्त बताकर।

१०९ **नीच**-नीचु। दृष्टांत अलंकार। **निठाडइ**-निद्धाडइ। तिरस्कार करके निकाल देना।

११० **जीहां**-(सं. जिह्वा) 'जीहा' पढ़िये।

१११ **भमहि**-भ्रू, भृकुटि।

अचरिज-(सं. आश्चर्य, प्रा. अच्छरियं)।

११३ **ऊहटइ**-(सं.) अबघटयति।

११४ **ताजणउ**-(सं. तर्जनकम्) चाबूक।

११७ **राउल**-(सं. राजकुल) राजका निवास-स्थान।

रान-(स.) अरण्य; (प्रा. रण्ण, जू. गू. रान) जंगल।

११८ दूसरी पंक्ति सुभाषित के रूप में प्रसिद्ध है।

संबल-(सं. शम्बल) भाथुं; (सं. भक्तोदेनम्)। भत्था।

११९ **प्रणीमूं**-प्रणामूं पढ़िये।

१२२ **मइमारिउ**- मइं मारिउ। पढ़िये।

छरइ-घरइ पढ़िये। **सयल**-सकल।

१२३ **आयस**-(सं. आदेश) आज्ञा।

१२४ बंधेवा- (सं. बद्धुम् प्राकृतमें तुम्का एवं एव्वा) हवर्थ कृदंत। वन्धन करने के लिये। देखिये कड़ी १३४, 'आपेवा भणी', और कड़ी २६४।

केत्थउ-(सं॰ कुत्र, प्रा. कत्थ) किहां।

१३६ (राज अन्याय) जिसां सहइ-जि, सांसहइ, जे को सहन करे। देखिये कड़ी १३८, 'किम सांसहइ'।

१२८ पयड-(सं॰ प्रकट) स्पष्ट रूप में।

१३० राजा-पाहिइं-(सं॰ पार्श्व; प्रा. पास-पाह-पाहिं, पइं, पें) एवं अनेक रूप में प्रयोग मिलते हैं।

१३६ सहि हत्थिइं-'सहि हत्थिइ' पढ़िये। (सं स्वहस्तेन) अपने हाथमें

१३९ मइलउ-(सं. मलीन) अपवित्र, दोषयुक्त।

१४० सब्ब-'सप्प' पढ़िये (सं. सर्प)।

१४१ पहिली पंक्ति सुधारके पढ़िये। 'नह मास मेय जणणो, दो मुहलो हड्डि खंडण समत्था।'

१४३ मंड-गयेहु की मिष्ट रोटी। गुजराती में मुहवरा है 'मनने गम्या ते मांडा, ने लोक कहे ते गांडा।'

१४३ सउणभणी-(सं. शकुन प्रा. सउण) शुभ शकुन माननेके लिए देखिये कड़ी २४६।

१४४ सद्द-(सं. शब्द) आवाज। धवलहर-धवलगृह।

अंतरि-(सं. अंतःपुर, प्रा. अन्तेउर) अन्तेउरि पढ़िये। स्त्रियों का निवास स्थान।

१४६ असिमर-'असिवर' पढ़िये। श्रेष्ठ तलवार।

१४९ सूर-'सुर' पढ़िये।

१५३ माइ-माई। पीहर-(सं. पितृ गृह, प्रा. पीइहर) पीहर।

१५४ पूठि-'पुट्टि' पढ़िये।

१५९ जंघजूअल-जंघ जुअल (सं. जंघा युगल)।

१६० निलवट-(सं॰ ललाट पट्ट) ललाट में।

ताडोक-'ताडंक' पढ़िये।

१६१ **मयरकेत**-(सं. मकरकेतु) कामदेव ।

१६२ **खड**-'खंड' पढ़िये ।

१६६ **'उदउ' भणइ**- उदय हुआ ऐसी आशीष भणती जोगिणी दाहिनी जाती हैं ।

१६९ **डाउ**-'डावउ' (वाम बाजु) पढ़िये ।

१७५ **देवा**-देवी ।

१७६ **सबिहूंगमइ**-सविहू गमइ ।

१७६ **सुर**-(सं. सूर्य) 'सूर' पढ़िये ।

१८८ **पलीथ**-'पलीय' पढ़िये ।

१८९ **बिलकिलिउ**-व्याकुलीउ व्याकुल हुआ ।

१९१ **नस मास**-'नस माँस' पढ़िये ।

१९४ **अहिठाण**-अधिष्ठान । **पहिठाण**-प्रतिष्ठानपुर ।

१९५ **पबरिस**-पौरुष ।

१९७ **कउडी**-(सं. कपर्दिका प्रा.) कवड्डिया कउडा । कौंडी । द्यूत खेलन में इसका उपयोग होता है ।

१९८ **भव भगति**-सारा आयुष्य भरकी की हुई भक्ति ।

हेलां-रमत मात्र में ।

२०१ **पचार** उपचार अर्थ में समझना चाहिए ।

२०३ **उलगि**-'उलगि सु' पढ़िये । उजगि स्यूं सेवा करूंगी ।

२०५ **ऊखाणउ** (सं. आभाणकम, प्रा. आहाणउ) उपाख्यान, लोकोक्ति । देखिये कड़ी ३४६ ।

२०६ **रण्ण**-(सं. अरण्य) । देखिये 'रान' कड़ी ११७ ।

२०९ **सुरहा**-सुरहि (सं. सुरभि) सुगंधा ।

२१२ **वुलंब**-'फुलंब' पढ़िये । **नायवेलि**-नागवेलि ।

२१४ **वंकडोयाकुलोय पयडोय पलास**-समान भाव के लिये देखो 'बसन्त विलास', लिपिसंवत १५१२ का दूहा ।

'केसू-कली अति वाँकुड़ी, आँकुड़ी मयण ची जाणि।
विरही नां इणि कालि, कालिज काढ़इ ताणि॥'

तिवास निवास पढ़िये।

२१६ **कक्क** 'वक्क' पाठ होना चाहिये।

२१९ **धजवड** (सं. ध्वजपट)। **पढिआर**–(सं. प्रतिहार) मन्दिर के प्रतिहार के रूप में स्थित।

२२३ **सूंदा पाहि**–'सूदा पाहि' पढ़िये।

१३२ **आलवइ**-(सं. आलपति) आलाप करती है।

२३३ **पांगति** (सं. पंक्ति)।

२३९ **सांइ**-(सं. स्वामी) स्वाँमीने सावलिंगीकी सावि लीलावतीको ली

२४२ **जुहार**-(सं. जयकार) जय वोलने के बाद प्रणाम।

२४३ **पुहर पंथ**-एक प्रहरमें पहुंच सके इतना दूर। अति दूर नहि।

२४४ **धूआ**-(सं. दुहिता का ये प्राकृत रूप है) पुत्री।
वछू-'वंछू' पढ़िये।

२४६ **अवद्धडी**- (सं. अवधि)।

२४९ **माउलउ**-(सं. मातृकुल प्रसिद्धः)।

२५४ **परतु**–(सं. प्रतीत) सच्चाई का अनुभव।

२५९ **गुज्झ**-(सं, गुह्य) छुपाने लायक कोई वात।

२६० **सउकि**-(सं. सपत्नी)।

२६६ **लीली-गई**-'लीलागई' पढ़िये।

२७३ **सपराणी**-(सं. सप्राणा) चेतनवती, उत्तम श्रेष्ठ।

२७८ **जमहर**-(सं. यमगृह, प्रा. जमहर) राजपूत इतिहास में शत्रु का विजय देख के राजकुल की महिलायें 'झमोर' करतीं थीं। ये अग्निकुंड में भस्मीभूत होती थीं। यमगृह प्रवेश अथवा आत्मघात का अर्थ में प्रयुक्त है।

२८६ **सीदाता**-(सं, सीद् धातु) दुखित होना, दुख पाते हुए।

२८७ **गांगेय**-भीष्म। **माणि** अभिमान रखने में। कविका महाभारत

के पात्रों का अच्छा परिचय इस प्रशस्ति से प्रतीत होता हैं।

२९१ **वड वाहमि**-बड़े (संदेश) वाहक ने वर्द्धापनिका दी।

बद्धामणी (सं. वर्धापनिका) अभिनन्दन।

२९३ **सींकिइ**-'सीमिइ' (सीमाडें में) पाठ ठीक रहेगा।

२९९ **पाधरउ**-(सं. प्राध्वरक.) रास्ते में पांउं से चलने वाला मामूली आदमी।

३०० **बारहट्ट**-(सं. द्वारभट्ट, प्रा. में बारहट्ट) जो लोकभाषा में 'बारोट' नामसे प्रसिद्ध है।

३०१ **भेलउ**- 'मेलउ' पढ़िये। मिलाप कराया। **हर हेत** हर (ईश) के कारण से।

३०६ **पंगुरण**-(स. प्रावरण) उत्तरीय वस्त्र।

३०८ **मउडद्वय**- (सं. मुकुटबद्धकः, प्रा. मउड गू मांड)। मुकुट को धारण करने वाले। 'मुडधा' शब्द इससे आया हुआ मालूम होता है।

३०९ **सेणाहिव**-(सं. सेनाधिप)।

३१० **वेयभूणि**-(सं. ध्वनि; प्रा. झूणि) वेद का घोष।

३१२ उपान्त्य पंक्ति को सुधार के पढ़िये -'आगइ कामुकीय कामिनी, अनइ वसंतनिसि-ऊजली।'

३१४ **रलीयाइति**-('रली' आनन्द के अर्थ में) आनन्दित।

३१८ **खेवि**-(सं. क्षेप) वेग में जो चडते हैं। **सालिहुंत**-(सं. शालिहोत्र) अश्वशास्त्री। लक्षणा से सर्व शुभ लक्षणोपेत अश्व का बोध होता है।

३१९ **पात्र**-नर्तकी। इस शब्द अपभ्रंश के रूपमें पातर अर्थात् सामान्य गणिका का अर्थ में होजाता है। नृत्य शास्त्र का संपूर्ण अभ्यास के बाद नर्तकी को 'पात्र' पद प्राप्त होता है। देखिये 'समस्ताभ्यास-संयुक्ता, नर्तकी पात्र मुच्यते'। सुधाकलशविरचित 'संगीत सारोद्धार' में।

३२५ **अहिणवउ** (स . अभिनवः) नवीन ।

शेषि भरन्ती-कुमार के दोनों हाथों में सम्बन्धी जन मांगलिक पदार्थ भरते है ।

३३३ **पहु-जाउ-**(प्रभुवत्स–जातः) प्रभुवत्स का पुत्र ।

३३६ **कईबार–** (सं.) कवित्व उच्चार ।

३४० **बोलाविउ बहनेवी-**(सं. भगिनीपति, प्रा. वहिणी+वइ) बहनोई ।

३४० **छःदरशन-**जीव जगत और ईश्वर सम्बन्धी चिंतनका छः प्रमुख मार्ग को 'दर्शन' कहते हैं ।

साँख्य, योग, वैशेषिक, न्याय, पूर्वमीमांसा अथवा धर्ममीमांसा, और उत्तरमीमांसा अथवा ब्रह्ममीमांसा याने वेदान्त । दूसरी-गिनती में बौद्ध दर्शन और जैन दर्शन को भी शामिल किया है और लोग चार्वाकमत को भी शामिल करते हैं ।

३५४ **देसाउर-**(सं. अपर देशः) परदेश ।

३५९ **सुपुरुष और नृसिह**·(नरसिंह) नामसे सयर (स्वेरे) स्वतंत्र है ।

३६३ **धसाद्दस-**धसाधस पढ़िये ।

३६५ **साविज-**(सं. श्वापद, हिंसक पशुः पक्षी के अर्थ में) । इसका प्रयोग देशी भाषाओं में उपलब्ध होता है । सं. स+वाज (पांख ?) से व्युत्पन्न होना सम्भव है । देखिये, भालणकृत 'कादम्बरी', पूर्व भाग 'शुक सारिका साविज मांहि, वोलि पटु प्रकाश ।'

३७३ **पडमाँहि-**(सं. द्यूतपट) चौपट की वाजी ।

३८७ **धावलहर-**'धवलहर' पढ़िये । (सं: धवलगृह; प्रा. धवल हर) सुधाधवलित गृह ।

३९१ **लच्छि-**(सं. लक्ष्मी); देखिये गुजराती गौरीगत में लक्ष्मीवंत के पुत्र का उल्लेख 'ओ लाछाकुंवर' । देखिये कड़ी ४०२ ।

३९७ **आवर्जन-**अनुकूल करने के लिए उपचार ।

४०२ **दोसी**-(सं. दौश्यिकः) कापड के व्यापारी।

४०३ **माम**-ममत्व (प्रतिष्ठा) का अभिमान।

४०४ **नातरू**-(सं. नात्रकम् ? ज्ञांनेयं ?) स्नेह-सम्बन्ध ।

४१२ **दव**-'दे व' पढ़िये ।

४१३ **कलास**-'कैलास' पढ़िये ।

४१८ **ढोणां ढोईइ**-(सं. ढौकनानि) 'भेटणाँ'-उपहार अर्पण कीजिये

४२० **मुडधा**-(सं, मुकुटधारी; प्रा. मउडधा मुडुधा) देखिये 'कान्हडदे प्रबंध' में खंड २ कड़ी ६९ ।

४२६ **मुन पकखेसि**-'मु न पकखेसि' पढ़िये । मुझे नहि देखेगा।

४३२ **सपराणी**-(सं. प्राण) प्राणवान अत्यंतका अर्थ में 'सविहु सपराणी' वाक्य खंड में 'श्रेष्ठ' ऐसा अर्थ व्यंजित होता है।

४३६ **पढम**-(सं. प्रथमम्; अपभ्रंश, पढम) पहिला।

सरडु-(सं. सरटः) काकीडा।

४३७ **असुउणि**-(सं .अशकुन,अपशकुन) अपशकुनकी वेला में।

४३३ **ऊहडोनइ**-(सं. उद्धृत्य)।

४४६ **रढिल**-अति आग्रही। **डोह**-दोहन।

४४७-४८ **छोह**-क्षोभ। **वाउ**-वात।

४५२ **आरीसउ**-(सं. आदर्श; प्रा. आयरिसउ) दर्पण।

एकदन्ती-एक दन्त अवशिष्ट रहा है ऐसी परमबृद्धा गणिकाकी माता।

४६० **संपरदाउ**-संप्रदाय।

मत्तवारणउ-झरूखा में। **मूंधा**-मुग्धा। **दीति**-देदिप्यमान ।

४६१ **सधुडिउगीत**-ध्रुवा सहित गीतम्।

४६५ **पात्र**-देखिये कड़ी ३१९।

४६६ गुर्जर वैद्य का उल्लेख कवि-परिचयका सूचक हो सकता है।

४७४ **हलूई**-(सं. लघुक; प्रा. लहुआ) हलकी, मानभंग।

देखिये 'सुदामासार' काव्य में। "याचंता जे निर्मुख जाइ,

तृण-पइं ते हलूउ थाइ ।'

४७९ समान विचार का अनुसंधान के लिए देखिये 'माधवानल कामकंदला प्रबंध ।' अंग ६, दूहा ५४-१०४।

४८१ **सुरहां**-(सं. सुरभिकानि; प्रा. सुरहिआ) सुगंधी सुवांसयुक्त ।

४८६ **अनोथ**-(सं. अन्यत्र, प्रा. अन्नत्थ) ।

४९१ वेश्या-निंदा के लिए देखिए 'माधवानल कामकन्दला प्रबंध' अङ्ग ७, दूहा २४३-२४६ ।

४९५ **लांच**-(सं. लचा) अनधिकृत द्रव्य की लालच ।

५०० **आपणपूं**-(सं. आत्मीय, आत्मानं अपना ।

५०१ **आवरजइ** देखिए–कड़ी ३९७ । अनुकूल बनाती है ।
जूजई-(प्रा. जुंयं जुय) भिन्न, पृथक ।

५०२ **आयस**-(सं. आदेश) आज्ञा ।

५०३ **असूर**-(सं. उत्सूर्यम्) सूर्य को अस्तमान होने के वाद । विलंब न करो ।

५०७ **सपराणा**-देखिए कड़ी ४३२ ।

५१४ **आथि**–(सं अर्थ) अर्थ से, द्रव्य से हार कर ऊठ गया ।

५१९ **आफणी**–(प्रा. अप्पणीयम्) स्वयं,खुद ही ।

५२४ **अलविइ**-(सं अल्पेन आयासेन) सहज ।

५२९ **अहिनाण**-(सं. अभिज्ञान, प्रा, अहिनाण) निशानी, एंधाणी परिचय ।
खात्र-(सं. खन् धातुसे शब्द बनता है) ।
दिवार में खुदने से प्रवेश होकर चौर्य कार्य होता हैं ।

५३५ **संहेरइ**–(सं. संहरण) माल का संकलन करता है ।

५३६ **हडताल**-(सं. हट्ट+ताल) हाट पर ताला लगाकर बन्द कर देना ।

५४० **नन्दलोकनइ**-वणिकों को 'नंद' शर्म दिया जाता हैं । इससे नंद शब्द से वैश्य का बोध होता हैं । गुजराती में मुहावरा है

"नन्दना फंद गोविंद जाण ।"

५४३ **लांभा**-कनिष्ठ ।

५४७ **पूछम**– ? । **विनडी**-विडम्नित की । **सात**-सुख ।

५५० **कमिणी**· 'कामिणी' पढ़िये । अर्थ स्पष्ट नहीं है ।

५५४ **सातो**-साचो । सच्चा, पक्का, चोर ।

५५६ **केत**-(सं. केतु) केतु प्रतिकूल ग्रहका नाम प्रसिद्ध है ।

५६३ **तलार** (सं. तलारक्ष) नगर·तलकी रक्षा करने वाला । भाषा में 'तलाटी' शब्द से बोला जाता है ।

ओलगु-सेवक

५६८ **मोकलि जे**-'मोकलिजे' पढ़िये ।

५६९ **फेडेसिइ**-त्याग करायेगा ।

५७९ अर्थांतर न्यास । सुभाषित रूप में ।

५८१–५८३–वणिक-श्लाघा ।

ऊडइ–(सं. उद्वहति) ।

५८५ **कंदल**-कलह ।

५८७ **परीछयउ**·(सं. पृष्ठम्) पूछताछ की ।

५९४-९५ **परतनउ**-परकीय परका । पीहर का वास पर घर का वास कैसे कहा जा सकता है ?।

५९९ **तरणि**-सूर्य । **त्रिकम**–(सं. त्रिक्रम) तीन डग मे स्वर्ग मृत्यु पाताल में व्याप्त होनेवाला विष्णु ।

६०१ **वाहण**-वहाण यान-पात्र । **नीजामा**-(सं. निर्यामक,प्रा. निज्ज़ामय) कर्णधार, केवटिया ।

६०६ **उपांपला**-व्याकुलता ।

६०७ **अणोसरा**-(सं. अनाश्रया) आश्रय रहित की ।

६१० **थापणि**-न्यास । **मोस**-मृषा, मिथ्या ।

६१३ **मांटी**-पुरुष, शूर पराक्रमशील मनुष्य ।

उसरावण कीधउ·(सं. उत्सर्जन) मुक्त किया ।

६१४ **पण-महत्त**-पण, प्रतिज्ञा का महत्त्व ।

६१६ **कसो**–(सं. कष् धातु) कस, कसौटी करके ।

६१८ तलवार की उपर नाम-मुद्रा अंकित करने की रूढ़ि प्रतीत होती है ।

६१९–**आपोपइं**-स्वयमेव ।

६२१ अर्थांतर न्यास । सुभाषित ।

६२३ **सुंडाहलि**-(सं. शुंडाफलक) ।

६२६ **सइंहथि**-(स्वयं हस्तेन) खुद अपने हाथ से ।

६२८ सौजन्य–सूचक सुभाषित ।

६३२ **भडिवाउ**–(सं. भटवाद) अपने को शूर मानने का अभिमान ।

६३४ **सेलहत**-(सं. शेल्ल हस्ते यस्य,प्रा. सलहत्थ) गुजरातके खेडावाल ब्राह्मणों मे 'शेलत' कीं अवटंक प्रसिद्ध हैं।

६३५ **कीधारेवणी**-(सं. रेव् धातु) पलायन क़र दिया ।

६४० **सांध**-'संधि' पढ़िये ।

६५४ **उलवण**-(सं. उल्लपन) आलाप संलाप ।

६५७ **आणू**-(सं. आनयनम्) ।

परिथह-(सं. परिग्रह, प्रा. परिग्गह) परिवार ।

६८३ **उदाहरण**-दृष्टांत । पुरावा । गवाहि ।

६८५ **सोधइ**-'सोचइ' पढ़िये ।

आदीसर-(आदीश्वर) जैनों के प्रथम तीर्थङ्कर, आदिनाथ ऋषभदेव ।

७०४ **पुरिसत्तण**-(सं. पुरुषत्व) पौरुष, पराक्रम ।

७०६ **ग्रास**-भूमि का जो खंड दान में दिया जाता है । 'ग्रास' पाने वाला 'ग्रासिया' कहलाता हैं ।

७१० **साथ समाहरण**-साधन सामग्री ।

७११ **वन्न अठार**-चार प्रमुख वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य, और शूद्र 'नव नारु', और 'पंच क़ारु' क़ारीगर वर्ग, समेत अठ्ठारह वर्ण कहलाती है ।

७२० **बजा वार तउ भोजन करु**–इस प्रकार का प्रतिज्ञा ग्रहण 'कान्हडदे प्रबन्ध' में पाया जाता है। देखिये खड १, कड़ी १८०

७२३ **पीयाणे**-(सं. प्रयाण)।
७२६ **करह**–(सं. करभ) ऊंट।

पृष्ठ १०४ पंक्ति ४। **'प्रमेमोऽय'**-'प्रमोदाय' पढ़िये।
१०५ कडी ७। **चग**-'चंग' पढ़िये।
१०६ कडी १३। **मयाल**-(सं. मृदु, प्रा. मउ) मायालु।
कडी १६। **पुष्पदंस**.'पुष्पदंत' पढ़िये।
११० कडी ४७। **शत्रुकार**-(सं. सत्रागार) सत्रकार पढ़िये।
१११ कडी ५६। **घाडा**-'घोड़ा' पढ़िये।
११८ कडी ७२। **तेणि अवस**-'तेणि अवसरि' पढ़िये।
खेडी देवति-'क्षेत्र देवता।'
१३५ कडी ६। **धार**.'धरि' पढ़िये।
१३७ कडी २३। **सुना**-'सुता' पढ़िये।
१८५ कड़ी संख्या ४५५, ४५८, ४५९, को अंक सुधार के पढ़िये।

पूर्ति—प्रस्तावना पृष्ठ 'औ'

'पदूमावत' में सदयवत्स कथा का उल्लेख

अब जी सूर गगन चढ़ि धावहु ।
राहु होहु तो ससि कहं पावहु ॥
विक्रम धँसा पेम के बारा ।
सपनावती कहं गएउ पतारा ॥
सदैवच्छ मुगुधावति लागी ।
कंचनपुर होइगा वैरागी ॥
राजकुंवर कंचनपुर गएऊ ।
मिरगावति कहं जोगी भएऊ
साधाकुंवर मनोहर जोगू ।
मधुमालति कहं कीन्ह वियोगू ॥
प्रभावति कहं सरसुर साधा ।
उखा आगि अनिरुधवा बांधा ॥
ही रानी पदुमावति, सात सरग पर वास ।
हाथ चढ़ी सो तेहिके, प्रथम जो आपुहिं आस ॥

—पदमावती, दो० २३३-१७

समाप्त